आर.एन.आई. नं. 3653/57
मुद्रण तिथि 5 से 8 जनवरी, 2020
डाक प्रेषण तिथि 10 जनवरी, 2020

वर्ष : 78 अंक : 01
पौष, 2076 मूल्य : ₹ 10
पृष्ठ संख्या 104

डाक पंजीयन संख्या JaipurCity/413/2018-20
WPP Licence No. Jaipur City/WPP-04/2018-20
Posted at Jaipur RMS (PSO)

ISSN 2249-2011

हिन्दी मासिक

जिनवाणी

जनवरी, 2020

णमो अरिहंताणं
णमो सिद्धाणं
णमो आयरियाणं
णमो उवज्झायाणं
णमो लोए सव्वसाहूणं

एसो पंच णमोक्कारो, सव्व-पावप्पणासणो
मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं हवइ मंगलं ।।

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल जयपुर

Website : www.jinwani.in

भोग-उपभोग से कभी मन तृप्त नहीं होता,
मन को तृप्त करने का साधन है तप-त्याग।

– आचार्य हस्ती

संसार की समस्त सम्पदा और भोग
के साधन भी मनुष्य की इच्छा
पूरी नहीं कर सकते हैं।

- आचार्य हस्ती

आवश्यकता जीवन को चलाने
के लिए जरूरी है, पर इच्छा जीवन
को बिगाड़ने वाली है,
इच्छाओं पर नियंत्रण आवश्यक है।

- आचार्य हीरा

जिनका जीवन बोलता है,
उनको बोलने की उतनी जरूरत भी नहीं है।

- उपाध्याय मान

With Best Compliments :
Rajeev Nita Daga Foundation Houston

ISSN 2249 - 2011 हिन्दी-मासिक

जिनवाणी

मंगल-मूल, धर्म की जननी, शाश्वत सुखदा कल्याणी।
द्रोह-मोह-छल-मान-मर्दिनी, फिर प्रगटी यह 'जिनवाणी'।।

卐 संरक्षक
अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ
प्लॉट नं. 2, नेहरुपार्क, जोधपुर (राज.), फोन-0291-2636763
E-mail : absjrhssangh@gmail.com

卐 संस्थापक
श्री जैन रत्न विद्यालय, भोपालगढ़

卐 प्रकाशक
अशोककुमार सेठ, मन्त्री-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल
दुकान नं. 182, के ऊपर, बापू बाजार, जयपुर-302003(राज.)
फोन-0141-2575997
जिनवाणी वेबसाइट- www.jinwani.in

卐 प्रधान सम्पादक
प्रो. (डॉ.) धर्मचन्द जैन

卐 सह-सम्पादक
नौरतनमल मेहता, जोधपुर
मनोज कुमार जैन, जयपुर

ACHARYA SHRI KAILASSAGARSURI GYANMANDIR
SHRI MAHAVIR JAIN ARADHANA KENDRA
Koba, Gandhinagar-382007.
Phone : (079) 23276252, 23276204-05

卐 सम्पादकीय कार्यालय
ए-9, महावीर उद्यान पथ, बजाजनगर, जयपुर-302015 (राज.)
फोन : 0141-2705088
E-mail : editorjinvani@gmail.com

卐 भारत सरकार द्वारा प्रदत्त
रजिस्ट्रेशन नं. 3653/57
डाक पंजीयन सं.-JaipurCity/413/2018-20
WPP Licence No. JaipurCity-WPP-04/2018-20
Posted at Jaipur RMS (PSO)

परस्परोपग्रहो जीवानाम्

चउरिंदियकायमइगओ,
उक्कोसं जीवो उ संवसे।
कालं संखिज्ज सन्नियं,
समयं गोयम! मा पमायए।।

-उत्तराध्ययन सूत्र, 10.12

चतुरिन्द्रिय योनि में जा प्राणी,
उत्कृष्ट काल जीवन धर कर।
रहता संख्यामित काल वहाँ,
गौतम! प्रमाद क्षण का मत कर।।

जनवरी, 2020
वीर निर्वाण सम्वत्, 2546
पौष, 2076

वर्ष 78 अंक 1

सदस्यता शुल्क

त्रिवार्षिक : 250 रु.
20 वर्षीय, देश में : 1000 रु.
20 वर्षीय, विदेश में : 12500 रु.
स्तम्भ सदस्यता : 21000/-
संरक्षक सदस्यता : 11000/-
साहित्य आजीवन सदस्यता- 4000/-

एक प्रति का मूल्य : 10 रु.

शुल्क/साभार नकद राशि "JINWANI" बैंक खाता संख्या SBI 51026632986 IFSC No. SBIN 0031843 में जमा कराकर जमापर्ची (काउन्टर-प्रति) अथवा ड्राफ्ट भेजने का पता 'जिनवाणी', दुकान नं. 182 के ऊपर, बापू बाजार, जयपुर-302003 (राज.)
फोन नं.0141-2575997, E-mail : sgpmandal@yahoo.in

मुद्रक : डायमण्ड प्रिंटिंग प्रेस, मोतीसिंह भोमियों का रास्ता, जयपुर, फोन- 0141-4043938

नोट- यह आवश्यक नहीं कि लेखकों के विचारों से सम्पादक या मण्डल की सहमति हो।

विषयानुक्रम

वन्दन-अभिनन्दन-	आचार्य श्री हस्ती दीक्षा-शताब्दी का शुभारम्भ	-डॉ. धर्मचन्द जैन	5
सम्पादकीय-	क्या आत्मा अकर्ता है?	-डॉ. धर्मचन्द जैन	8
अमृत-चिन्तन-	आगम-वाणी	-डॉ. धर्मचन्द जैन	11
विचार-वारिधि-	अज्ञान और ज्ञान का भेद	-आचार्यप्रवर श्री हस्तीमलजी म.सा.	13
प्रवचन-	जोड़ने के लिए जगाना आवश्यक है	-आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा.	14
	सहज है ऊनोदरी तप	-श्रद्धेय श्री महेन्द्रमुनिजी म.सा.	16
	संवेग की जागृति : दुःखों से मुक्ति	-श्रद्धेय श्री योगेशमुनिजी म.सा.	23
प्रश्न-समाधान-	ध्यान का महत्त्व एवं भ्रान्तियों का निवारण	-तत्त्वचिन्तक श्री प्रमोदमुनिजी म.सा.	18
संगोष्ठी आलेख-	आचार्य हेमचन्द्रसूरि विरचित योगशास्त्र में ध्यान	-डॉ. जितेन्द्र बी. शाह	26
शोधालेख-	व्यवहारभाष्य में वर्णित चिकित्सा-विधान	-डॉ. योगेश कुमार जैन	32
दीक्षा-शताब्दी-	एकता और समता के प्रोत्साहक आचार्य श्री हस्ती	-डॉ. दिलीप धींग	38
	शब्दातीत युगपुरुष पूज्य आचार्य श्री हस्ती	-श्रीमती अंशु संजय सुराणा	44
तत्त्व चर्चा-	जिज्ञासा-समाधान	-संकलित	47
	आओ मिलकर कर्मों को समझे (2)	-श्री धर्मचन्द जैन	68
युवा-स्तम्भ-	शीत लहर... या... कृपा लहर?	-श्री तरुण बोहरा 'तीर्थ'	49
English-Section-	**Woman in Jainism**	*-Dr. Priyadarshana Jain*	55
तत्त्व-बोध-	कैसे बनें श्रुत-पारगामी?	-श्री पारसमल चण्डालिया	65
स्वास्थ्य-विज्ञान-	श्वसन क्रिया हो सम्यक्	-डॉ. चंचलमल चोरड़िया	71
प्रेरक-कथा-	पतन की सीमा नहीं	-श्री अशोक कुमार बोहरा	73
गीत/कविता-	अब बचपन से बेरूखी क्यों?	-श्री राकेश मेहता (सी.ए.)	22
	नारी का सम्मान	-खुशबू जैन	31
	अन्यत्व भावना	-श्रीमती अभिलाषा हीरावत	37
	चिन्तन में सहायक	-डॉ. रमेश 'मयंक'	43
	प्रभु धर्म करूँ मन से	-श्री मोहन कोठारी 'विनर'	48
	जीवन-बोध क्षणिकाएँ	-श्रद्धेय श्री यशवन्तमुनिजी म.सा.	50
	ऐसे जीएँ	-श्री निर्मल जामड़	70
	नववर्ष संकल्प	-श्री त्रिलोकचन्द जैन	85
विचार/चिन्तन-	कम बोलने के नौ लाभ	-श्री पीरचन्द चोरड़िया	15
	सत्संग का प्रभाव	-सौ. कमला सिंघवी	17
	लॉ आफ अट्रैक्शन	-महासती श्री भाग्यप्रभाजी म.सा.	25
	Some Pearls	*-Mrs. Minakshi D. Jain*	64
	सोचें जरा	-सुश्री लक्ष्मी जैन	95
साहित्य-समीक्षा-	नूतन साहित्य	-श्री गौतमचन्द जैन	74
समाचार विविधा-	समाचार-संकलन	-संकलित	76
	साभार-प्राप्ति-स्वीकार	-संकलित	86
बाल-जिनवाणी -	विभिन्न आलेख/रचनाएँ	-विभिन्न लेखक	87

10 जनवरी 2020
जिनवाणी 5
ISSN 2249-2011

वन्दन-अभिनन्दन

आचार्य श्री हस्ती दीक्षा-शताब्दी का शुभारम्भ

अप्रमत्तता, नि:स्पृहता, निरभिमानता, निर्भयता, मितभाषिता, गुणियों के प्रति प्रमोदभाव, प्राणिमात्र के प्रति करुणाभाव आदि अनेक गुणों से दीप्तिमान साधना के धनी, 'पूज्यश्री' के अभिधान से विश्रुत, विद्वत्ता, प्रज्ञा और साधना की त्रिपुटी से सम्पृक्त अध्यात्मयोगी, युगमनीषी, प्रात:स्मरणीय श्रद्धेय आचार्यप्रवर श्री हस्तीमलजी म.सा. ने मात्र 10 वर्ष 18 दिन की वय में अजमेर में माघशुक्ला द्वितीय द्वितीया गुरुवार विक्रम सम्वत् 1977 (ईस्वी सन् 1921) को स्थानकवासी जैन परम्परा में रत्नसंघ के षष्ठ पट्टधर आचार्य श्री शोभाचन्द्रजी म.सा. के मुखारविन्द से मुमुक्षु माता रूपकँवरजी, श्री चौथमलजी एवं विरक्ता बहन अमृतकँवर के साथ पावन प्रव्रज्या अंगीकार की थी।

इस वर्ष माघ शुक्ला द्वितीया विक्रम संवत् 2076 दिनांक 26 जनवरी 2020 के पावन दिवस से आपकी प्रव्रज्या का 100वाँ वर्ष प्रारम्भ हो रहा है जो माघ शुक्ला द्वितीया विक्रम सम्वत् 2077 दिनांक 13 फरवरी 2020 तक प्रवर्तित रहेगा। यह वर्ष हम सबके लिए अपने आध्यात्मिक, चारित्रिक एवं साधनापरक जीवन के उत्थान हेतु पावन सन्देश लेकर उपस्थित हो रहा है। पौष शुक्ला चतुर्दशी विक्रम सम्वत् 1967 को जन्मे इस महापुरुष ने आदर्श साधु जीवन जीने के साथ कुशल संघनायकत्व का स्वरूप प्रस्तुत किया। योग्यता के आधार पर मात्र साढ़े पन्द्रह वर्ष की वय में गुरुदेव के द्वारा आचार्य रूप में उनका चयन किया गया तथा 19 वर्ष 3 माह 19 दिन की वय में वैशाख शुक्ला तृतीया, गुरुवार को जोधपुर के सिंहपोल में उनका आचार्यपद पर आरोहण हुआ।

सामायिक एवं स्वाध्याय के माध्यम से उन्होंने स्थानकवासी समाज में क्रान्ति की। अन्धी मान्यताओं में जकड़े मानव-समाज में आपने ज्ञान की ज्योति प्रज्वलित करने का अभियान छेड़ा तथा अपरिमित इच्छाओं, वासनाओं, राग-द्वेष, अहंकार, माया, लोभ आदि विकारों के कारण तनावग्रस्त मानव के लिए शान्ति के मन्त्र के रूप में सामायिक की साधना को अपनाने पर बल दिया। उन्होंने समाज को व्यसन-मुक्त बनाने में भी जीवन भर योगदान दिया तथा नैतिकबल से युक्त प्रामाणिक समाज बनाने हेतु प्रयत्नशील रहे।

नारी-शिक्षा एवं नारी-उत्थान के प्रति आचार्यप्रवर के प्रेरक उद्बोधन हुए जिनका सुपरिणाम समाज में आज भी दृग्गोचर होता है। युवकों को आपने धर्म से जोड़ा तथा समाज-निर्माण में उनकी भूमिका को प्रोत्साहित किया। बालकों में संस्कारों की महती प्रेरणा की। समाज में फैली विभिन्न कुरीतियों यथा-आडम्बर, वैभव-प्रदर्शन, दहेज-माँग आदि पर करारी चोट की तथा विभिन्न ग्राम-नगरों में व्याप्त कलह एवं मन-मुटाव के कलुष का प्रक्षालन किया। समाज के कमज़ोर तबके एवं असहाय परिवारों को साधर्मि-वात्सल्य पूर्वक-सहयोग की प्रेरणा कर आपने करुणाशीलता का परिचय दिया। मारे जाते हुए सर्प को निर्भयतापूर्वक अपने रजोहरण पर एवं झोली में लेकर दूर छोड़ने के उदाहरण आपकी प्राणिमात्र के प्रति आत्मवद्भाव एवं करुणाभाव की पुष्टि करते हैं।

प्रात: जागरण से लेकर रात्रि-विश्राम तक प्रत्येक क्षण का सदुपयोग आपकी अप्रमत्त जीवनचर्या का अंग रहा। स्वाध्याय, ध्यान, मौन, प्रतिक्रमण, प्रतिलेखन, शास्त्र-वाचना आदि सभी क्रियाएँ आप यथा समय एवं सजगतापूर्वक करते थे। आपकी अप्रमत्तता बाह्य क्रियाओं में ही नहीं आत्मस्वरूप की रमणमता में भी

प्रतिबिम्बित होती थी। आप मौनसाधना में विराजे हुए भी श्रद्धालुओं के अन्तर्हृदय में प्रेरक बनकर बोलते थे।

आगम महोदधि श्रद्धेय श्री आत्मारामजी म.सा. ने अपने पत्रों में आपको 'पुरसवरगंधहत्थी' विशेषण से सम्बोधित किया था तथा पूज्य श्री घासीलालजी म.सा. ने आप पर अष्टक की रचना की थी। तत्कालीन सभी सम्प्रदायों के आचार्यों एवं सन्तों से आपके मधुर सम्बन्ध रहे।

साधारण-सी देह में आप एक असाधारण अध्यात्मयोगी एवं उच्चकोटि के साधक सन्त थे। युग को सही दिशा प्रदान करने के कारण वे युगमनीषी रहे। निमाज में आपका तेरह दिवसीय तप-संथारा जिन उच्च आध्यात्मिक भावों के साथ सम्पन्न हुआ वह एक आचार्य के लिए शताब्दियों में भी विरला एवं अप्रतिम उदाहरण है, जिसकी महक युगों-युगों तक जैन-जगत् एवं विश्व-भूमि को सुवासित करती रहेगी।

-डॉ. धर्मचन्द जैन

आचार्य श्री हस्ती दीक्षा शताब्दी वर्ष (2020-21)

(माघ शुक्ला 2, 26 जनवरी 2020 से माघ शुक्ला 2, 13 फरवरी 2021 तक)

सामायिक-स्वाध्याय के प्रबल प्रेरक, अध्यात्म योगी, इतिहास मार्तण्ड, परमश्रद्धेय आचार्य भगवन्त 1008 श्री हस्तीमल जी म.सा. के दीक्षा शताब्दी वर्ष को पूरे भारत वर्ष में अटूट श्रद्धा, भक्ति, सेवा व उत्साह के साथ मनाये जाने हेतु संघ द्वारा निर्णय लिया गया है। अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ एवं समस्त सहयोगी संस्थायें मिलकर संयुक्त रूप से दीक्षा शताब्दी वर्ष में आचार्य श्री हस्तीमल जी म.सा. से सम्बन्धित पावन दिवसों को एवं संघ के कुछ महत्वपूर्ण दिवसों को भी उत्साह के साथ विशेष रूप से मनायेंगी। ये दिवस इस प्रकार हैं-

आचार्य भगवन्त आचार्य श्री हस्तीमल जी म.सा. के मुख्य पावन दिवस

1. माघ शुक्ला 2, रविवार, 26 जनवरी 2020 -दीक्षा दिवस शताब्दी वर्ष प्रारम्भ-**सामायिक दिवस**
2. वैशाख शुक्ला 3, रविवार, 26 अप्रेल 2020 -आचार्य पदारोहण दिवस-**स्वाध्याय दिवस**
3. वैशाख शुक्ला 8, शुक्रवार, 01 मई 2020 -29वाँ स्मृति दिवस-**सामूहिक प्रार्थना दिवस**
4. पौष शुक्ला 14, बुधवार, 27 जनवरी 2021 -जन्म दिवस-**प्रतिक्रमण दिवस** (आवश्यकसूत्र पर परीक्षा आयोजन)
5. माघ शुक्ला 2, शनिवार, 13 फरवरी 2021 -दीक्षा दिवस शताब्दी वर्ष समापन-**सामायिक दिवस**

संघ एवं संघीय संस्थाओं के मुख्य दिवस

1. 24 सितम्बर 2020, गुरुवार - श्राविका गौरव दिवस-**संस्कार-बोध दिवस**
2. 17 नवम्बर 2020, मंगलवार - संघ समर्पण दिवस-**संकल्प दिवस**
3. 21 नवम्बर 2020, शनिवार - युवा शक्ति दिवस-**व्यसन-मुक्ति दिवस**

● **सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के विशेष कार्यक्रम**

- आचार्य श्री हस्ती स्मृति व्याख्यान माला का देश के विभिन्न शहरों में आयोजन।
- जिनवाणी में प्रतिमाह आचार्य श्री हस्ती के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर लेख।
- 'जैन जीवन शैली' विषय पर जिनवाणी विशेषांक।

● **स्वाध्याय संघ के विशेष कार्यक्रम**

स्वाध्याय प्रवृत्ति का 75वाँ वर्ष भी हर्ष एवं उल्लास के साथ इसी वर्ष मनाया जायेगा।

- 75 नये स्वाध्यायी तैयार करना।
- 175 क्षेत्रों में पर्युषण पर्वाराधन।
- बृहद् स्वाध्यायी सम्मेलन का आयोजन।
- आचार्य श्री हस्ती द्वारा रचित पुस्तकों पर प्रत्येक माह स्वाध्यायियों के बीच परीक्षा का आयोजन।
- 'स्वाध्यायी-मञ्जूषा' पुस्तक का पुनः प्रकाशन।

● **शिक्षण बोर्ड के विशेष कार्यक्रम**

- आचार्य श्री हस्ती पर प्रश्नोत्तरी पुस्तक का प्रकाशन।
- आचार्य श्री हस्ती के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर जुलाई 2020 एवं जनवरी 2021 में आयोजित परीक्षाओं में कम से कम 10 अंकों का प्रश्न पत्र रखा जायेगा।
- प्रतिमाह आचार्य श्री हस्ती के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर रत्न संघ ऐप के माध्यम से ऑनलाइन परीक्षाओं का आयोजन।

● **संस्कार केन्द्र के विशेष कार्यक्रम**

- अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, श्राविका मण्डल और युवक परिषद् की सभी शाखाओं तथा सम्पर्क सूत्रों वाले स्थानों पर संस्कार केन्द्र खोलने का लक्ष्य।

सभी कार्यक्रमों की सफलता के लिए निम्नलिखित प्रयास सभी द्वारा करना-

- रत्न संघ के समस्त परिवारों की जानकारी लेकर रत्न संघ ऐप से जोड़ना।
- आचार्य श्री हस्ती के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर आधारित संगोष्ठी, भाषण प्रतियोगिता, निबन्ध, नाटक, भजन आदि कार्यक्रमों का आयोजन करना।
- अधिकतम प्रचार-प्रसार एवं व्यक्तिगत सम्पर्क करना।
- प्रशंसा प्रमाण पत्र, अधिक से अधिक प्रतियोगियों, आयोजकों तथा कार्यकर्ताओं आदि को प्रदान करना।
- यथोचित पुरस्कार प्रदान करना।

-धनपत सेठिया, महामन्त्री-अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ

उपाध्याय प्रवर पं. रत्न श्री मानचन्द्र जी म.सा. का देवलोकगमन

अध्यात्मयोगी, युगमनीषी, प्रातः स्मरणीय, आचार्य प्रवर 1008 श्री हस्तीमल जी म.सा. के मुखारविन्द से दीक्षित, आचार्य प्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा. के शासन सहयोगी, शान्त-दान्त-गम्भीर पं. रत्न उपाध्याय प्रवर श्रद्धेय श्री मानचन्द्र जी म.सा. का लगभग 85 वर्ष की वय में पौष शुक्ला सप्तमी गुरुवार दिनांक 02 जनवरी, 2020 को सायं लगभग 5.55 बजे चौविहार सम्पूर्ण प्रत्याख्यान के साथ समाधिमरण हो गया। आपने लगभग 56 वर्ष संयम पर्याय का निरतिचार पालन किया तथा ज्ञान, दर्शन एवं चारित्र की आराधना करते हुए हजारों लोगों को सन्मार्ग में प्रवृत्त किया। **-धनपत सेठिया, महामंत्री**

10 जनवरी 2020
जिनवाणी 8
ISSN 2249-2011

सम्पादकीय

क्या आत्मा अकर्ता है?

❖ डॉ. धर्मचन्द जैन

तीर्थङ्कर महावीर ने जो उपदेश दिया वह जितना सुरक्षित है उसके अनुसार आत्मा को अपने सुख-दुःख का कर्ता प्रतिपादित किया गया है-

अप्पा कत्ता विकत्ता य, दुहाण य सुहाण य।
अप्पा मित्तमित्तं च, दुप्पट्ठिओ सुप्पट्ठिओ।।

-उत्तराध्ययन सूत्र 20.37

आत्मा अपने सुख एवं दुःख का कर्ता है। उसे सुख-दुःख देने वाला दूसरा नहीं है। न ईश्वर सुख-दुःख प्रदान करता है और न ही कोई अन्य मनुष्य। हाँ मनुष्य या अन्य प्राणी उसमें निमित्त बन सकते हैं। बृहद् द्रव्य संग्रह में भी कहा गया है-

जीवो उवओगमओ अमुत्ति कत्ता सदेहपरिमाणो।
भोत्ता संसारत्थो सिद्धो सो विसस्सोड्ढगई।।

जीव या आत्मा उपयोगमय एवं अमूर्तिक होने के साथ कर्ता भी है। वह भोक्ता भी है। जो कर्ता होता है वही भोक्ता होता है। यदि आत्मा कर्ता न हो तो वह भोक्ता भी नहीं हो सकता। सांख्यदर्शन में आत्मा या पुरुष को भोक्ता तो स्वीकार किया गया है, किन्तु उसे अकर्ता एवं प्रकृति को कर्त्री माना गया है। प्रतीत होता है कि सांख्यदर्शन का प्रभाव जैनदर्शन के कतिपय चिन्तकों पर भी आ गया है एवं वे आत्मा को अकर्ता मानने लगे हैं। यदि आत्मा अकर्ता है तो वह भोक्ता भी नहीं हो सकता तथा उसमें मन, वचन एवं काया की प्रवृत्ति भी नहीं हो सकती।

जैनदर्शन के मूल मन्तव्य को भूलकर यह कहा जाने लगा है कि धर्मास्तिकाय आदि षड्द्रव्यों के बीच वज्र की दीवार है। इनमें कोई एक द्रव्य दूसरे द्रव्य को प्रभावित नहीं करता। किन्तु यह कथन अनेकान्तवादी जैनदर्शन के अनुकूल नहीं है। जैनदर्शन के प्रमुख ग्रन्थ तत्त्वार्थसूत्र में स्पष्ट प्रतिपादित किया गया है कि षड्द्रव्य एक-दूसरे का उपकार करते हैं। वहाँ पर निरूपित है-

गतिस्थित्युपग्रहो धर्माऽधर्मयोरुपकारः।
आकाशस्याऽवगाहः।
शरीरवाङ्मनःप्राणापानाः पुद्गलानाम्।
सुखदुःखजीवितमरणोपग्रहाश्च।
परस्परोपग्रहो जीवानाम्।
वर्तना परिणामः क्रिया परत्वापरत्वे च कालस्य।

-तत्त्वार्थ सूत्र 5.17-22

धर्मास्तिकाय जीव एवं पुद्गल की गति में तथा अधर्मास्तिकाय इनकी स्थिति में निमित्त रूप से उपकारक होते हैं। आकाश सभी द्रव्यों को स्थान देने के कारण उपकारी निमित्त है तो काल सभी द्रव्यों के वर्तन, परिणमन एवं उनकी क्रियाओं में निमित्त बनता है। जीव को शरीर, वचन, मन, प्राणापान पुद्गल से प्राप्त होते हैं। पुद्गल पर जीव का यह महान् उपकार है। पुद्गल से ही जीव का शरीर बना है, भाषावर्गणा के पुद्गलों को आधार बना कर ही वह वचनों का प्रयोग करता है, मन भी पुद्गलों का पिण्ड है जो संकल्प-विकल्प एवं मनन में प्रयुक्त होता है। जीवन के आधार श्वास का आना-जाना भी श्वासोच्छ्वास पुद्गल वर्गणा के उपकार का परिणाम है। इस प्रकार संसारस्थ जीव का जीवन पुद्गलों पर आश्रित है। यही नहीं सुख-दुःख, जीवन-मरण की घटनाएँ भी पुद्गल के संयोग एवं वियोग से अनुभूत होती हैं। अतः यह कैसे कहा जा सकता है कि षड्द्रव्यों में वज्र की दीवार है तथा वे एक-दूसरे को प्रभावित नहीं करते हैं?

जीव भी एक-दूसरे के उपकारी होते हैं। माता अपने पुत्र का लालन-पालन करती है। पिता उसकी योग्यता का विकास करता है। गुरुजन उसे शिक्षा प्रदान करते हैं। पुत्र भी बड़ा होकर किस-न-किसी का उपकारक होता है। एक-दूसरे का उपकार करने से ही समाज का स्वरूप बनता है एवं समाज चलता है। जीव

जीव के लिए तो उपकारक होता ही है, किन्तु वह पुद्गल द्रव्य के कार्यों में भी निमित्त बनकर उपकारी होता है।

पुद्गल में तीन प्रकार के परिणमन होते हैं-(1) विस्रसा परिणमन (2) प्रयोग परिणमन (3) मिश्र परिणमन। विस्रसा परिणमन सभी द्रव्यों में होता है। यह स्वभावत: प्रति समय होने वाला परिणमन है। जिसमें एकमात्र काल निमित्त बनता है। अर्थ पर्याय के रूप में यह परिणमन प्रतिक्षण चलता रहता है। व्यञ्जन पर्याय का हमें बोध होता है तथा यह पर्याय कुछ काल तक एक-जैसी अनुभूत होती है। यह व्यञ्जन पर्याय पुद्गल में प्रगट होती है। कभी यह स्वाभाविक होने से विस्रसा परिणमन कही जाती है तो कभी जीव के द्वारा कृत प्रयत्न से होने के कारण प्रयोग परिणमन कहलाती है। पुद्गल में जीव के प्रयत्न से होने वाले परिणमन को प्रयोग परिणमन कहा गया है।

प्रयोग परिणमन के अनेक उदाहरण हमारे समक्ष हैं, जो जीव के प्रयत्न से सम्भव हुए हैं या होते हैं। ईंट और सीमेण्ट अपने आप मकान या भवन का स्वरूप ग्रहण नहीं कर सकते। मनुष्य रूपी जीव के प्रयत्न से ही भवन का निर्माण सम्भव है। इसी प्रकार पुद्गल से कम्प्यूटर, फ्रिज, कूलर, ए.सी., कार, ट्रेन, वायुयान आदि अपने आप नहीं बने हैं इनमें जीव का प्रयत्न अपेक्षित रहा है। यद्यपि पुद्गल में यह सामर्थ्य है कि वह उपर्युक्त स्वरूप में परिणत हो सकता है, किन्तु वह अपने आप कम्प्यूटर, फ्रिज आदि आकार को धारण नहीं कर सकता। इसे हम जीव का पुद्गल की पर्याय में क्या निमित्त होना नहीं कहेंगे? क्या पुद्गल इन सब पर्यायों को स्वत: ग्रहण कर सकता है? हाँ यह अवश्य है कि स्वरूप से सभी द्रव्य अपने स्वरूप में ही रहते हैं धर्मास्तिकाय कभी अधर्मास्तिकाय नहीं बन सकता। अधर्मास्तिकाय कभी धर्मास्तिकाय नहीं बन सकता। आकाश कभी जीव नहीं बन सकता। जीव कभी पुद्गल नहीं बन सकता। किन्तु इनमें परस्पर एक-दूसरे का उपकारक होने का स्वभाव है।

जीव और पुद्गल में घनिष्ठ सम्बन्ध है। मुक्त जीव और संसारी जीव में यही भेद है कि मुक्त जीव का पुद्गल से सम्बन्ध विच्छेद हो जाता है तथा संसारी जीव का पुद्गल से सम्बन्ध बना रहता है। जीव या आत्मा का इतना प्रभाव है कि उसके कारण पौद्गलिक शरीर में चेतना का अनुभव होता है। यद्यपि शरीर जीव नहीं है, किन्तु व्यवहार में चेतना युक्त शरीर को हम जीव समझते हैं। आगमों में भी उसकी जीव संज्ञा है। इसलिये शरीरस्थ जीव में ही इन्द्रिय, जाति, शरीर, अंगोपांग, अवगाहना, दण्डक, योग, प्राण आदि का विचार किया जाता है, मुक्त आत्मा तो इनसे रहित होती है।

आत्मा का शुद्ध स्वरूप शरीर एवं रागादि विकारों से रहित होता है। आचारांग सूत्र में उसे शब्द, रूप, गन्ध, रस एवं स्पर्श से रहित निरूपित किया गया है। आत्मा न दीर्घ है न ह्रस्व, न गोल है, न त्रिकोण, न चतुष्कोण। वह पुद्गल की सभी विशेषताओं से रहित है। सिद्धों की आत्मा शुद्ध है। वह राग-द्वेष आदि विकारों से भी रहित है। आचार्य कुन्दकुन्द शुद्ध आत्मा का स्वरूप इसी प्रकार प्रतिपादित करते हैं-

अहमिक्को खलु सुद्धो, दंसणणाणमइओ सदारूवी।
णवि अत्थि मज्झ किंचि वि अण्णं परमाणुमित्तंपि।।

-समयसार 1.38

शुद्ध आत्मा दर्शन एवं ज्ञानमय है तथा सदा अरूपी है। परमाणु मात्र भी अन्य कुछ आत्मा का नहीं है। यह शुद्ध एवं मुक्त आत्मा का स्वरूप है, जिसे निश्चय नय से मान्य किया गया है तथा शरीर से युक्त जीव को व्यवहार नय से मान्य किया गया है।

हम संसारी जीव हैं, अत: शुद्ध नहीं है। शुद्धता-प्राप्ति हमारा लक्ष्य है। यानी सिद्धों की आत्मा की जैसी शुद्धता प्राप्त करना साधक का लक्ष्य होता है, किन्तु इससे वर्तमान के सत्य को झुठलाया नहीं जा सकता है कि मैं अष्टकर्मों से युक्त हूँ, रागादि से ग्रस्त हूँ, कषायों से आविष्ट हूँ। यह अशुद्धता आत्मा का स्वरूप नहीं है, किन्तु इन सबके कारण मैं अशुद्धता का अनुभव करता हूँ, यह अनुभूत सत्य है। इस अशुद्धि को दूर करना ही साधना है। यह साधना ज्ञान, दर्शन एवं चारित्र स्वरूप है। इस साधना का कर्त्ता अजीव या पुद्गल नहीं हो सकता। चेतन

आत्मा ही साधक हो सकती है। इस साधना का कर्त्ता जीव या आत्मा ही हो सकता है और साधना करने वाला शरीरस्थ जीव ही होता है। साधना करने का तात्पर्य है संवर एवं निर्जरा की साधना। इस साधना को करने वाला जो जीव है वह शुद्धता की ओर आगे बढ़ता है तथा जो जीव अशुद्धता में लिप्त रहता है तथा उसी में जीवन समझता है वह आस्रव एवं बन्ध में लगा रहता है। इस प्रकार आस्रव एवं बन्ध का कर्त्ता भी जीव है जिसे आचार्य कुन्दकुन्द ने व्यवहारनय से कर्त्ता स्वीकार किया है। यह व्यवहारनय भी निश्चनय की भाँति सत्य है। इसे यदि सत्य स्वीकार नहीं किया जाएगा तो बन्ध-मोक्ष की व्यवस्था नहीं बन सकती। जीव ज्ञाता-द्रष्टाभाव में रहकर अथवा समता में रहकर साधना करता है तथा क्रोधादि कषायों से आविष्ट होकर आस्रव एवं बन्ध करता है। तत्त्वार्थसूत्र में मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय एवं योग को आस्रव एवं बन्ध का हेतु कहा गया है- मिथ्यात्वाविरतिप्रमादकषाययोगा: बन्धहेतव:। आचार्य कुन्दकुन्द ने मिथ्यात्व, अज्ञान एवं अविरति को मोहयुक्त जीव के उपयोग का अनादि परिणाम स्वीकार किया है-

उपओगस्स अणाई परिणामा तिण्ण मोहजुत्तस्स।
मिच्छत्तं अण्णाणं अविरदि भावो य णायव्वो।।

-समयसार, 2.89

जिस भाव का आत्मा कर्त्ता है वह उस भाव का कर्त्ता कहलाता है तथा कर्मवर्गणा का पुद्गल स्वयं कर्मरूप में परिणत हो जाता है। (समयसार 2.91) इसका तात्पर्य है कि आत्मा के जो अशुद्ध भाव हैं- मिथ्यात्व, अज्ञान एवं अविरति-उनका भी कर्त्ता आत्मा है। इसी प्रकार राग-द्वेष, क्रोध, मान, माया, लोभ जो आत्मा के स्वरूप नहीं हैं, इन भावों का भी कर्त्ता आत्मा ही है। अजीव पुद्गल इनका कर्त्ता नहीं हो सकता। शरीर एवं इन्द्रियाँ भी रागादि के कर्त्ता नहीं हो सकते हैं। जीव ही राग या द्वेष करता है। उत्तराध्ययन सूत्र में स्पष्ट कहा है-शब्द, रूप, गन्ध, रस एवं स्पर्श में जो तीव्र राग करता है वह अकाल में विनाश को प्राप्त होता है। (उत्तराध्ययन सूत्र अध्ययन 32) इसी प्रकार जो द्वेष करता है वही उसी क्षण दु:ख को प्राप्त करता है। इससे विदित होता है कि राग या आसक्ति करने वाला जीव ही है तथा वही उसके परिणाम को प्राप्त करता है। सिद्धों का जीव पूर्णत: शुद्ध है, अत: वह रागादि नहीं करता है। जो मिथ्यात्वादि से युक्त शरीरस्थ संसारी जीव है वह ही इनका कर्त्ता सिद्ध होता है।

दूसरे शब्दों में कहें तो जीव ही अपने भाग्य का निर्माता होता है वह ही बन्धे हुए कर्मों की प्रकृति में उद्वर्तन (स्थिति एवं रस में वृद्धि), अपवर्तन (स्थिति एवं रस में कमी), संक्रमण (एक उत्तर प्रकृति का अन्य सम उत्तर प्रकृति में परिवर्तन) करता है।

संसारी जीव को अकर्त्ता कहने का क्या परिणाम हो सकता है, इस पर विचार करें तो ज्ञात होता है कि (1) तब जीव अपने कृत कर्मों के फल भोग के प्रति उत्तरदायी नहीं रहता, क्योंकि जब उसने कर्म बन्धन किया ही नहीं तो उसका फल भी वह क्यों भोगे? (2) वह फिर किसी प्रकार की तप-संयम रूप साधना भी कैसे कर सकता है, क्योंकि वह अकर्त्ता है। (3) संसारी जीव मन, वचन एवं काया से प्रवृत्ति करता रहता है। फिर उसे उन प्रवृत्तियों का भी कर्त्ता नहीं कहा जा सकेगा।

अष्टविध कर्मों से रहित होने पर ही जीव को ज्ञाता-द्रष्टा होने के अतिरिक्त सब कार्यों का अकर्त्ता कहा जा सकता है, किन्तु उससे पूर्व जीव को अकर्त्ता कहना उचित नहीं। संसारी जीव अपने शुभ-अशुभ भावों का तो कर्त्ता है ही, किन्तु वह 'परस्परोग्रहो जीवानाम्' सूत्र के अनुसार अन्य जीवों के लिए भी अनेकविध कार्यों में निमित्त बनता है। यही नहीं वह पुद्गल द्रव्य के प्रयोग परिणमन का भी कर्त्ता होता है। अत: जीव के अकर्तृत्व को संसारी जीव पर लागू नहीं किया जा सकता।

आत्मा को कर्त्ता मानने में 'अभिमान' की आशंका उत्पन्न होती है, किन्तु इस सम्बन्ध में यह ध्यातव्य है कि कर्तृत्व न मानना सत्य का प्रतिषेध है। कर्ता होते हुए भी उसका अभिमान न करना साधना है। यदि कर्तृत्व नहीं मानेंगे तो तीर्थङ्कर को भी चतुर्विध संघ रूपी तीर्थ का संस्थापक नहीं कहा जा सकेगा। ■

अमृत-चिन्तन

आगम-वाणी

डॉ. धर्मचन्द जैन

मुणिणा हु एयं पवेइयं, उब्बाहिज्जमाणे गामधम्मेहिं अवि निब्बलासए अवि ओमोयरियं कुज्जा अवि उड्ढं ठाणं ठाएज्जा अवि गामाणुगामं दुइज्जेज्जा अवि आहारं वोच्छिंदेज्जा अवि चए इत्थीसु मणं।

-आचारांगसूत्र (सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल), प्रथम श्रुतस्कन्ध, पञ्चम अध्ययन, चतुर्थ उद्देशक, सूत्र 43

अर्थ-वासना से पीड़ित मुनि के लिए भगवान ने यह उपदेश दिया है कि वह मुनि कभी निर्बल आहार करे, कभी अल्पाहार करे, ऊर्ध्व स्थान पर कायोत्सर्ग द्वारा आतापनादि ले, ग्रामानुग्राम विहार करे, कभी आहार का सर्वथा विच्छेद कर दे तथा स्त्रियों में मन-प्रवृत्त करना छोड़ दे।

विवेचन-आचारांग का यह सूत्र मुनि के ब्रह्मचर्य महाव्रत की पालना को पुष्ट करता है। मुनि विचरण करते हुए जब किसी ग्राम-नगर में अधिक दिन निवास करते हैं तो वहाँ पर उनका किसी स्त्री विशेष के प्रति आकर्षण हो सकता है एवं उसमें सुख अनुभव हो सकता है। अत: आचारांग सूत्र इस प्रकार की वासना आदि के ग्राम धर्मों से पीड़ित होने वाले मुनि के लिए सन्देश देता है कि जब कभी इस प्रकार की वासनाएँ मन को सताने लगें तो इन्हें जीतने के लिए साधक छह प्रकार के उपाय करे-(1) वह निर्बल अर्थात् सार रहित सात्त्विक आहार करे। गरिष्ठ आहार से इन्द्रियाँ पुष्ट होती हैं, शुक्र में वृद्धि होती है, मांस एवं शोणित बढ़ते हैं। अत: साधु को तब नीरस आहार करना ही उचित है। (2) जहाँ तक सम्भव हो मुनि ऊनोदरी तप करे अर्थात् भूख से भी आहार को न्यून मात्रा में ग्रहण करे। ऊनोदरी तप से इन्द्रियाँ अपेक्षाकृत शान्त रहती हैं तथा साधना में मन लगता है। आयम्बिल, नीवी आदि तप भी इसके अंग हैं। इनसे काम-वासना को जीतने में सहयोग मिलता है। (3) ऊर्ध्व स्थान में स्थित हो अर्थात् कायोत्सर्ग करे। घुटनों को ऊँचा एवं सिर को नीचा करने पर जो आसन होता है उसे यहाँ ऊर्ध्व स्थान कहा गया है। इनमें दोनों नयनों को नासाग्र या भ्रकुटि पर स्थिर किया जाता है। मूलबन्ध आदि आसन भी इसमें उपयोगी होते हैं। इस प्रकार के आसन के साथ कायोत्सर्ग करने से वासना शान्त होती है। अपान वायु का निष्कासन होता है। इसका संग्रह विकार का जनक होता है। अपान वायु के दुर्बल होने से प्राण वायु प्रबल होती है। कायोत्सर्ग तप में शरीर के प्रति ममता को अर्थात् देहाभिमान को भी जीता जाता है। देहाभिमान जीतने से देह सम्बन्धी विकार शान्त होते हैं। (4) ब्रह्मचर्य की रक्षा के लिए एवं धर्म साधना के प्रचार हेतु साधु के लिए यह विधान है कि वह ग्रामानुग्राम विचरण करे। अत: इस नियम का पालन करने से वह एक स्थान पर रहकर स्त्री-विशेष के प्रति आसक्त नहीं होगा तथा तत्सम्बन्धी वासना क्षीण हो जाएगी। (5) वासना को जीतने का अन्य उपाय है-अनशन अर्थात् उपवास। उपवास करने से आत्म-रमण का अवसर प्राप्त होता है तथा इन्द्रियाँ भी उस ओर से प्रतिसंहृत होती हैं। आहार करने से वीर्य का उपचय होता है तथा वीर्य के उपचय से वासना या कामेच्छा को बल मिलता है। आहार में अधिक रुचि रखने वाला एवं रसनेन्द्रिय का दास व्यक्ति काम को नहीं जीत पाता है। इसलिए ब्रह्मचर्य पालन हेतु आहार-परिमाण एवं अनशन को एक उपाय बताया गया है। (6) एक अन्य प्रबल एवं महत्त्वपूर्ण उपाय बताया गया है कि स्त्रियों के प्रति जो मन जाता है उसका त्याग करे। यह त्याग अपने को समझाते हुए ज्ञानपूर्वक किया जाए। दशवैकालिक सूत्र में ऐसा उपाय बताते हुए कहा गया है कि-**न सा महं नोवि अहं पि तीसे, इच्चेव ताओ विणएज्ज रागं।** अर्थात् वह न मेरी है, न मैं उसका हूँ, ऐसा विचार कर स्त्री के प्रति राग को दूर करे। कामेच्छा या स्त्री-राग को दूर

करने का महत्त्वपूर्ण उपाय ज्ञान ही है जो अनित्य, अशरण, अशुचि आदि भावनाओं से पुष्ट होता है।

जैनागमों में स्त्री से विरक्त करने के लिए स्त्री के बहुत से दोषों का कथन किया गया है तथा उसके प्रति वैराग्य उत्पन्न करने का प्रयत्न किया गया है। उसे अशुचि का भण्डार कहा गया है। इससे यह नहीं समझना चाहिए कि जैनागमों में स्त्री का महत्त्व नहीं है वहाँ पर जो निन्दा या घृणापरक वर्णन प्राप्त होता है, वह स्त्री से विरक्त होने के लिए है।

तप में ब्रह्मचर्य व्रत को श्रेष्ठ बताया गया है- **तवेसु वा उत्तमं बंभचेरं।** अनेक ऋषि-मुनि अपनी साधना में नारी के कारण विचलित हुए हैं। इसलिए प्रभु महावीर ने ब्रह्मचर्य की पालना हेतु कठोर नियम प्रतिपादित किये हैं। ब्रह्मचर्य की नववाड़ बतायी गयी है जिनका पालन करने पर ब्रह्मचर्य सुरक्षित रहता है।

काम-वासना का उदय नारी के निमित्त से हो सकता है और कभी वह आन्तरिक कारणों से भी उत्पन्न होता है। नारी के शब्दों को सुनकर, रूप को देखकर या पूर्व भोगों की स्मृति से उदित होने वाली काम-वासना सनिमित्तक कही गयी है। काम-वासना बिना बाहरी निमित्त के भी उत्पन्न होती है। कभी वह कर्मों के उदय के कारण, कभी आहार विशेष के कारण तो कभी शरीर में वीर्य के उपचय होने आदि के कारण प्रगट होती है, इसे अनिमित्तक काम-वासना कहा गया है। काम-वासना पर विजय दोनों स्तर पर आवश्यक है। शरीर पर नियन्त्रण साधक के हाथ में है तथा बाहरी निमित्तों से यथा सम्भव दूर रहना भी साधक के हाथ में है। अत: वह जितना नियन्त्रण कर सकता है करे। ब्रह्मचर्य की पालना के लिए आचारांग के ही एक अन्य सूत्र में कहा गया है- **से नो काहिए नो पासणिए नो संपसारए नो मामए णो कय-किरिए वइगुत्ते अज्झप्पसंवुडे परिवज्जए सया पावं एयं मोणं समणुवासेज्जासि, त्ति बेमि।** इसका तात्पर्य है कि ब्रह्मचर्य का पालन करने वाला मुनि कामकथा न करे, क्योंकि इससे भी मन में वासना उत्पन्न होती है। वह वासना उदित करने वाले पदार्थों को न देखे, परस्पर कामुक भावों का प्रसारण न करे, किसी नारी के प्रति ममत्व न करे, शरीर की साज-सज्जा से बचे। वचनगुप्ति का ठीक से पालन करे और अपनी इन्द्रिय एवं मन का संवरण करे तथा सदा पाप प्रवृत्तियों का वर्जन करे। मुनि का यह कर्त्तव्य है।

मनोवैज्ञानिक दृष्टि से चिन्तन करें तो मनुष्य की ऊर्जा ही कामवासना का रूप धारण करती है। उसे यदि अन्य रचनात्मक कार्यों में लगा दिया जाए तो वह ऊर्जा सत्कार्यों में रूपान्तिरत हो जाती है। स्वाध्याय में, सेवा में, लेखन में, प्रवचन में अपने दोषों को दूर करने में यदि साधक आनन्द का अनुभव करता है तो उसकी काम-शक्ति कार्य शक्ति बन जाती है। वासना की पूर्ति होने के अन्त में नीरसता ही अनुभव में आती है। जबकि साधना के क्षेत्र में अपनी शक्ति को लगाने पर सरसता का अनुभव होता है।

जिस प्रकार मुनि का आकर्षण नारी के प्रति सम्भव है उसी प्रकार साध्वी का आकर्षण पुरुष के प्रति सम्भव है। इसलिये उसे पुरुष के प्रति काम दृष्टि को दूर रखकर साधना में रत रहने की आवश्यकता होती है।

गृहस्थ को भी कामवासना सताए तो वह भी अपने आहार पर नियन्त्रण करे, उपवास करे, स्वाध्याय करे एवं कामकथा आदि का वर्जन करे। काम की उत्पत्ति मन में होती है, इसलिए उसे मनसिज कहा जाता है। मन में काम-वासना उत्पन्न न हो, इसमें स्वाध्याय, सच्चिन्तन, ध्यान, सेवा, सभी स्त्रियों के प्रति माता एवं बहिन का भाव लाना आदि सहायक हैं।

अध्यात्मयोगी, युगमनीषी आचार्य श्री हस्तीमलजी म.सा. के जीवन की प्रेरक घटनाओं, उपदेशों एवं कार्यों से सम्बन्धित आलेख आमन्त्रित हैं। -सम्पादक

10 जनवरी 2020
जिनवाणी 13
ISSN 2249-2011

विचार-वारिधि

अज्ञान और ज्ञान का भेद

आचार्यप्रवर श्री हस्तीमलजी म.सा.

- अज्ञान दशा में सुमार्ग या सन्मार्ग की ओर रुचि नहीं होती। तब आरम्भ, परिग्रह, विषय, कषाय आदि की ओर मन, वाणी एवं काया की जो प्रवृत्ति होती है अथवा जो पुरुषार्थ होता है, सारा का सारा कर्मबन्ध का कारण होता है।
- ये जो भौतिक पदार्थ धन, धान्य इत्यादि हैं, इनके कितने ही स्वामी बदल गये। फिर आप कैसे कहते हैं कि ये मेरे हैं। यह नगीना मेरा है, यह हवेली मेरी है, यह बंगला मेरा है इत्यादि। यह जो मेरेपन की बात है या जो बोध है, उसके बारे में शास्त्रों में कहा गया है कि अज्ञान के कारण प्राणी ऐसा समझ रहा है।
- अज्ञानी और ज्ञानी के जीवन में बड़ा अन्तर होता है। बहुत बार दोनों की बाह्य क्रिया एक-सी दिखाई देती है, फिर भी उसके परिणाम में बहुत अधिक भिन्नता होती है। ज्ञानी का जीवन प्रकाश लेकर चलता है जबकि अज्ञानी अन्धकार में ही भटकता है। ज्ञानी का लक्ष्य स्थिर होता है, अज्ञानी के जीवन में कोई लक्ष्य प्रथम तो होता ही नहीं, अगर हुआ भी तो विचारपूर्ण नहीं होता। उसका ध्येय ऐहिक सुख प्राप्त करने तक ही सीमित होता है। फल यह होता है कि अज्ञानी जीव जो भी साधना करता है वह ऊपरी होती है, अन्तरंग को स्पर्श नहीं करती। उससे भवभ्रमण और बन्धन की वृद्धि होती है, आत्मा के बन्धन नहीं कटते।
- 'ज्ञा' धातु से जानने अर्थ में 'ज्ञान' शब्द की सिद्धि होती है। उसका अर्थ होता है-'ज्ञायते हिताहितं धर्माधर्मः येन तद् ज्ञानं' अर्थात् जिसके द्वारा हिताहित या धर्माधर्म का बोध होता है, जो कर्त्तव्य-अकर्त्तव्य का और सत्य-असत्य का बोध कराता है, मोक्षमार्ग का बोध कराता है, उसको ज्ञान कहते हैं। इसका मतलब यह हुआ कि ज्ञान एक वह साधन है, जिसके द्वारा आत्मा अपनी शक्ति का, सत्यासत्य के बोध में उपयोग कर सके। सत्यासत्य का बोध करने वाले गुण का नाम ज्ञान है। ज्ञान सम्यक् भी होता है और मिथ्या भी होता है। संक्षेप में कहा जाये तो पदार्थों के स्वरूप की यथार्थ अभिव्यक्ति का नाम सम्यग्ज्ञान है।
- मोक्षमार्ग में जिस प्राणी को लगना है, उसके लिए सम्यग्ज्ञान का होना परमावश्यक है। अज्ञान और कुज्ञान से हटकर सम्यग्ज्ञान में जब प्राणी का प्रवेश होगा, तब समझना चाहिए कि वह मोक्षमार्ग का पहला पाया या पहला चरण प्राप्त कर सका है।
- वर्ण-ज्ञान, भाषा-ज्ञान, कला-ज्ञान, लेखन-ज्ञान, पदार्थ-ज्ञान, रसायन-ज्ञान इत्यादि भिन्न-भिन्न ज्ञान हैं। ये मानव को पदार्थ का बोध कराने में सहायक सिद्ध होते हैं, लेकिन जब तक सम्यग्ज्ञान नहीं हो जाता, तब तक ये सभी लौकिक ज्ञान भव-बन्धन को काटने में सहायक नहीं होते।
- ऐसा ज्ञान जिससे भव-बन्धन की बेड़ी काटना सम्भव हो, किसी पुस्तक से, किसी कॉलेज से, किसी विश्वविद्यालय से प्राप्त होने वाला नहीं है।
- ज्ञान कैसे प्राप्त होता है? मिथ्यात्व और अज्ञान के हटने से। मिथ्यात्व और अज्ञान की गाँठ कैसे कटेगी? ज्ञान होगा तब।

-'नमो पुरसवरगंधहत्थीणं' ग्रन्थ से साभार

10 जनवरी 2020
जिनवाणी 14
ISSN 2249-2011

प्रवचन

जोड़ने के लिए जगाना आवश्यक है

परमश्रद्धेय आचार्यप्रवर श्री हीरचन्द्रजी म.सा.

पूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा. द्वारा पाली चातुर्मास में 28 सितम्बर, 2019 को सामायिक-स्वाध्याय भवन में श्री जैन रत्न युवक परिषद् के राष्ट्रीय अधिवेशन के प्रसंग पर पावन मुखारविन्द से फरमाये गये प्रवचन का लेखन श्री जगदीशजी जैन द्वारा किया गया है। -सम्पादक

जीवन के उत्थान की भावना से अनेक बातों में से स्मृति पटल पर उभर रहा एक प्रसंग आप सभी के समक्ष रख रहा हूँ। विक्रम सम्वत् 2034 (ईस्वी सन् 1977) का चातुर्मास पूज्य गुरुदेव (पूज्य आचार्य श्री हस्तीमलजी म.सा.) के साथ अजमेर में था। दरगाह समीप ही थी। इस्लाम के दो भाई मदीना से आये। वे इस्लामी धर्म के प्रचार-प्रसार-प्रगति के भाव लिये हुए थे। अत: हम यों समझे कि वे सन्त श्रेणी में थे। सन्त अन्य सन्तों के यहाँ जाने में संकोच नहीं करते। वे भी लाखन कोटड़ी स्थित धर्मस्थल पर पूज्यश्री की सेवा में आ पहुँचे। उनसे पूछा गया-इतनी दूर से यहाँ क्यों आये? प्रत्युत्तर मिला-इबादत करने आये हैं। हम कुल मिलाकर बारह फकीर हैं। हमारी छह टोलियाँ हैं। हर टोली का पृथक्-पृथक् कार्य बँटा हुआ है।

हम पहली टोली के सदस्य हैं। हम यह गणना करने आये हैं कि मुसलमानों के कितने घर हैं? घर-घर जाकर इबादत करने योग्य भाइयों की सर्वे कर सूची तैयार करेंगे। हमारे इस कार्य का क्रम बराबर चलता रहेगा। एक स्थान की गणना का कार्य सम्पूर्ण होते ही दूसरे स्थान के सर्वे के लिए प्रस्थान कर जायेंगे। पहली टोली का कार्य पूर्ण होते ही दूसरी टोली के सदस्य आ जायेंगे। दूसरी टोली घर-घर जाकर यह जानकारी लेगी कि इनमें से इबादत करने कौन-कौन आ रहे हैं तथा कौन-कौन नहीं आ रहे। इसके बाद तीसरी टोली आकर अपना कार्य सम्भाल लेगी। यह टोली इबादत करने नहीं जाने वालों से सम्पर्क करती है और उन्हें इबादत के लिए तैयार करती है। फिर चौथी टोली का दायित्व है कि जिसे इबादत के लिए जाने की प्रेरणा की गई थी उनमें से कितने जाने लग गये हैं, इसकी जानकारी लेती है। पाँचवी टोली आकर फिर घर-घर जाकर सम्पर्क कर यह सूचना एकत्रित करती है कि गणना के अनुसार बनायी सूची में इबादत करने रोज कितने जा रहे हैं, कौन-कौन अब भी नहीं जा रहे हैं। नहीं जाने वालों की क्या समस्या है? अन्त में छठी टोली के सदस्य अपने दायित्व के अनुसार जो नहीं जाने लगे हैं उनसे व्यक्तिश: मिलकर जगाने की प्रेरणा करते हैं, भक्ति मार्ग पर अग्रसर करते हैं।

इस्लामी धर्म से सम्बन्धित चरण बद्ध विधि वाली योजना आपके समक्ष रखी गई। उनकी कार्यपद्धति कार्यक्रम एवं क्रियान्विति से बुद्धि जीवियों के संघ का तुलनात्मक विश्लेषण करें; हमारी स्थिति क्या है? संघ-संगठन की बात कर रहा हूँ। रत्नसंघ के कितने परिवार हैं, सदस्यों की संख्या कितनी है, हमें यह भी मालूम नहीं है कि कौन-कौन आते हैं, कौन-कौन नहीं आते और क्यों नहीं आते? क्या जवाब है आपके पास? कुछ नहीं, क्योंकि विधिवत् जानकारी का अभाव जो है।

जोड़ने के लिए सम्पर्क की आवश्यकता है। डोर-टू-डोर जाकर जगाने की जरूरत है। पर जगाने वाला कौन? घर-घर जाने का काम कौन करे? बूढ़ों को कहूँ, बच्चों को कहूँ या जवानों को कहूँ। रोज आने वाले कितने हैं? अधिकतर संवत्सरिया हैं, जो लाइसेन्स रिन्यू करवाने आते हैं। नहीं आने वालों को भगवन्त, धर्म गुरु के प्रति भक्ति वाली भावना कैसे जगायी जाए? कभी आपने इसके लिये किञ्चित् भी सोचकर प्रयास किया?

शादी का प्रसंग घर में उपस्थित हुआ। कार्ड देने परिवार का कोई सदस्य हर घर जाता है। ऊपर से अन्य माध्यम से सूचना देते हैं। ऐसी अभिरुचि संघ के लिए भी हो। सही मायने में ऐसा ही प्रयास भगवान के प्रति भक्ति जगाने के लिए किया जाए।

हर स्थान विशेष की अपनी-अपनी टीम हो। युवारत्न अपनी जानकारी का संकलन करे। घर-घर जाकर नहीं आने वालों को जोड़ने का प्रयास करे। उनकी समस्याएँ सुनकर हर सम्भव समाधान करने का प्रयास करे।

आज श्रावक-श्राविका अपनी जिम्मेदारी नहीं निभा रहे। वे अपने बच्चों को धर्मस्थान में लाने के लिए समय नहीं दे रहे। अहमदाबाद चातुर्मास में देखा-मन्दिर पास ही था, एक पिता अपने तीन साल के बच्चे को रोजना अंगुली पकड़े ले जा रहा है। बच्चा वहाँ जाकर पूजा पाठ की विधि देखेगा, कुछ नहीं करेगा तो पिता के द्वारा ऊँचा करने पर घण्टा तो बजाना सीख जायेगा। धीरे-धीरे ऐसे ही संस्कारों की नींव खड़ी हो जाती है।

आपकी क्या भूमिका है? नहीं आने वालों को धर्मस्थान में कैसे लाया जा सकता है? प्रभावना के लिए कह रहा हूँ कि अधर्मी को धर्मी कैसे बना सकते हैं? इसके लिये परिवार के सदस्यों को, पड़ौसी बन्धु को बराबर सम्भालने का दायित्व निभायें। संघ के प्रति आस्था हो, अनुराग हो, समर्पण हो, तब ही धर्म की प्रभावना वाले ये कार्य सफल हो सकते हैं। राष्ट्रपति, प्रधानमन्त्री जैसे पद पर आसीन होते हुए भी नवरात्रि के दिनों में साधना कर भक्ति का आदर्श प्रस्तुत कर रहे हैं। आप उनके समक्ष क्या हैं? आपकी एवं आपकी पीढ़ी में भी भक्ति का ऐसा रूप उपस्थित हो। युवा पीढ़ी जागृत हो, इस भावना से आपकी चिन्तन धारा में परिवर्तन लाने के लिए कुछ बातें रखी गई। आप मनन कर जोड़ने और जगाने की भूमिका निर्वहन करेंगे।

धर्मकरणी के लिए जोड़ने के अन्तर्गत यदि कठोर कदम उठाना पड़े तो मुसलमान इसमें संकोच नहीं करते। विक्रम सम्वत् 2038 (ईस्वी सन् 1981) में पूज्य आचार्यश्री के साथ रायचूर चातुर्मास के बाद विहार कर हम हैदराबाद गये। वहाँ रास्ते में सड़क के किनारे एक शव पड़ा हुआ था। उसे लोग उठा नहीं रहे थे। कारण पूछा तो बताया कि यह नमाज नहीं पढ़ता था। आखिर उसके परिवार वालों ने नमाज में शरीक होने की स्वीकृति समाज वालों को दी, उसके बाद ही शव यात्रा में समाज वाले सम्मिलित हुए। समाज वालों ने यह निर्णय दुःख देने की भावना से नहीं, अपितु इबादत के लिए परिवार में भक्ति जगाने की भावना से लिया। मेरा भी यही हेतु है। पालक पिता एवं संस्कारी माता से अपेक्षा है कि वे अपनी सन्तान को संस्कारवान बनाने के लिए समय दान देने का हर सम्भव प्रयास करे। प्रेरणा की भावना से जो बात कही है आशा है उससे उत्साह, लगन का संचार होगा। अगले वर्ष संघ की सदस्य संख्या आप सभी की सक्रियता से वर्धापित होगी। युवा पीढ़ी राष्ट्रीय संघ की धरोहर है। होश के साथ पुरज़ोर जोश से संघ की समस्त गतिविधियों को नई ऊर्जा प्रदान करेंगे। ऐसी मंगल भावना है.....!

कम बोलने के नौ लाभ

श्री पीरचन्द चोरड़िया

क्रोध नहीं आयेगा।
लड़ाई नहीं होगी।
झूठ नहीं बोलना पड़ेगा।
घमण्ड नहीं आयेगा।
समय खराब नहीं होगा।
बुद्धि नहीं घटेगी।
शक्ति नहीं घटेगी।
कर्म नहीं बँधेंगे।
नीच गति में नहीं जाओगे।

-माणक चौक, नयाबास, सुतर खाना की गली, जोधपुर (राज.)

10 जनवरी 2020
जिनवाणी 16
ISSN 2249-2011

प्रवचन

सहज है ऊनोदरी तप

महान् अध्यवसायी श्री महेन्द्रमुनिजी म.सा.

आचार्यप्रवर पूज्य श्री हीराचन्द्रजी म.सा. के आज्ञानुवर्ती महान् अध्यवसायी श्रद्धेय श्री महेन्द्रमुनिजी म.सा. ने 10 मई, 2019 को धनश्री साधना भवन; तिलकनगर, पाली में प्रवचन फरमाया जिसका संकलन-आशुलेखन श्री नौरतनमलजी मेहता, जोधपुर ने किया है।
-सम्पादक

धर्मानुरागी बन्धुओं!

विभाव से हटकर स्वभाव में संस्थापित करने वाली आगम-वाणी में उत्तराध्ययन सूत्र का स्वाध्याय चल रहा है। तप का विवेचन किया जा रहा है। तपों में वह तप बताया जा रहा है जिसमें न असणं का त्याग है, न पाणं का और खाइमं-साइमं का त्याग है, खाते-पीते तप हो रहा है वह तप है-ऊनोदरी तप।

तप के बारह भेद हैं। छह बाह्य तप हैं तो छह आभ्यन्तर तप। बाह्य तप में पहला तप है-अनशन। अनशन में आहार-त्याग होता है। दूसरा तप है-ऊनोदरी। आहार करते हुए भी भूख से कम खाना ऊनोदरी तप है। भूख से कम खाना ऊनोदरी तप है। साथ ही ऊनोदरी में इच्छाओं का निरोध किया जाता है।

कम खाना हितकर होता है। भूख से ज़्यादा खाने से फायदा नहीं, नुकसान होता है। कोई यह न समझे कि ज़्यादा खाने से ज़्यादा ताकत आ जायेगी। ऐसा सोचना गलत है। ज़्यादा खाने से ज़्यादा ताकत नहीं आती, ताकत पचाने से आती है। ज़्यादा खाओगे तो शरीर रोगी हो जाएगा। सीमा में भोजन किया जायेगा तो वह लाभ करेगा। अनुभवियों ने ठीक ही कहा है-ज़्यादा खाने से तीन नुकसान होते हैं-शरीर रोगी होता है, आहार बर्बाद होता है तथा साधना में विघ्न उत्पन्न होता है।

अति भोजन नुकसानदायक है। कभी कोई पौष्टिक पदार्थ ज़्यादा खा लेता है तो वह ज़हर का काम कर सकता है। ज़्यादा खाने से अजीर्ण होगा और अजीर्ण रोगों का घर है। पौष्टिक पदार्थ पच जाए तो अमृत का काम करता है और अधिक मात्रा में सेवन कर लिया जाए तो वह अमृत के बजाय ज़हर का काम करेगा। ज़्यादा खाना मारेगा। वैसे जो जन्मा है वह एक-न-एक दिन मरेगा। क्यों? तो अमृत पी लेने से कोई अमर नहीं हो जाता। अमृत भी थोड़ी मात्रा में फ़ायदा करेगा, ज़्यादा तो नुकसानदायक होता है। मतलब साफ़ है-ज़्यादा खाने से शरीर स्वस्थ रहने वाला नहीं है।

आज रोग बढ़ रहे हैं, बीमारियाँ बढ़ रही हैं, इसका यदि कारण देखा जाए तो यह जिह्वा लालीबाई नियन्त्रण में नहीं। यह जिह्वा जो है वह दोनों तरफ से नुकसान करती है। जिह्वा खाकर बिगाड़ती है तो बोलकर भी बिगाड़ती है।

रोगोत्पत्ति के नौ कारण बताए गए हैं। भूख से ज़्यादा खाया जाएगा तो वह रोग बढ़ाएगा। आवश्यकता है उतना खाने पर लाभ होगा, ज़्यादा खाने वाले का आयुष्य कम होता है। मारवाड़ी में एक कहावत आपने सुनी होगी-या तो खायने मरी या ऊँचायने मरी।

आहार की इच्छा ज़्यादा-कम हो सकती है। तिर्यञ्च गति से आने वाले को भूख ज़्यादा लगती है। ज्ञानीजन तो कहते हैं-किसी को भूख ज़्यादा लगती है तो समझना चाहिए कि वह जीव तिर्यञ्च गति से आया है। जो देवगति से आया है, उसकी आहार संज्ञा कम होगी। जो प्रकृति से सरल है, मद-मस्त भाव से दूर है वह मनुष्य बनता है। मनुष्य बनने वाले की प्रकृति सरल होगी। उसमें ईर्ष्या का भाव नहीं होना चाहिए। ईर्ष्या छोड़ना सरल नहीं, मुश्किल है।

कंचन तज़बो सहज है, सहज त्रिया नो नेह
मान, बढ़ाई, ईर्ष्या, तुलसी दुर्लभ एह।।

आप मुफ्त का माल चाहते हैं, पर ध्यान रखना- मुफ्त का माल पचने वाला नहीं है। अधिक खाने से शरीर रोगी, आयुष्य कम होगा और स्वर्ग का राज मिलने वाला नहीं है। आज मरने का सबको डर है। यहाँ से काल करके यह जीव कहाँ जाएगा? आप चाहे श्रावक हैं, हम साधु, आपकी-हमारी एक ही गति है। हम-सब मोक्ष चाहते हैं। आज भले ही मोक्ष नहीं मिले तो भी साधना करने वाला इस पंचम आरे में एकभवतारी बन सकता है। साधना की हुई कभी निष्फल नहीं जाती, पर आज अधिकांश लोग आदत से लाचार हैं। वे चट मंगनी पट विवाह चाहते हैं। आप स्वस्थ रहना चाहो, सुख पूर्वक जीना चाहो तो ऊनोदरी तप करो। ऊनोदरी के पाँच भेद हैं-

दव्वओ खेत्त-कालेणं, भावेणं पज्जवेहिं य।

-उत्तराध्ययनसूत्र, अध्ययन 30, गाथा 14

पाँच भेद कौन से? तो कहा-द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव और पर्याय। पाँच भेदों की चर्चा समय के साथ करने के भाव हैं, पर आज आपको ऊनोदरी तप के माध्यम से कहना है कि आप खाते-पीते भी कर सकते हैं। तप करते रहने से वह चाहे अनशन तप हो या ऊनोदरी, आप हम सबको अनाहारक बनना है। जो भी तप करेगा, वह मुक्ति-मार्ग की ओर गति कर सकेगा।

अनुमोदनीय अनुकरणीय

गुरु भगवन्तों की असीम कृपा से श्री अजयजी हीरावत (उपाध्यक्ष-श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, मुम्बई) के सुपुत्र चि. अमन का शुभविवाह श्री शान्तिलालजी नाहर पाली की सुपुत्री सौ. सुरभि के साथ सूरत में धर्म की शरण पूर्वक सम्पन्न हुआ।

वैवाहिक कार्यक्रमों की शुरुआत से पूर्व जयपुर में सामूहिक जाप रखा गया। सूरत में शादी वाले दिन सुबह वर सहित बारातियों ने सामूहिक सामायिक का आदर्श प्रस्तुत किया।

मुम्बई में शादी का आशीर्वाद समारोह दिन में रखा गया एवं सम्पूर्ण भोजन बिना जमींकन्द का रखा गया। शादी के पश्चात् नवविवाहित जोड़े ने जरूरतमन्द परिवारों के घर-घर जाकर, अपने हाथों से आटा, दाल, चावल आदि का दान किया और अपने वैवाहिक जीवन का शुभारम्भ किया।

बारात यात्रा की भोजन व्यवस्था भी पूर्णतया जमींकन्द रहित ही रखी गई। हीरावत परिवार का यह प्रयास अनुमोदनीय एवं अनुकरणीय है, बहुत-बहुत साधुवाद।

- श्री प्रेमचन्द जैन (चपलोत), 22, गीजगढ़ विहार, हवा सड़क, जयपुर (राजस्थान)

सत्संग का प्रभाव

सौ. कमला सिंघवी

सत्संग का प्रभाव अचिन्त्य है। ज्ञानी, ध्यानी, त्यागी ऐसे गुणी सद्गुरुदेव का समागम महान पुण्य के प्रबल वेग से होता है। एक क्षण का सत्संग भी पापी से पापी का भी उद्धार कर देता है। एक बार की क्षणमात्र की सज्जन की संगति संसार-सागर को पार करने की नाव बन जाती है।

सद्गुरु को किया हुआ वन्दन, उनकी सेवा और उपदेश श्रवण द्वारा सकषायी मानव भी शीघ्र शान्त बन जाते हैं। शान्ति प्राप्ति का उच्च स्थान है सत्संगति।

शास्त्रों का वाचन, मनन, चिन्तन आदि भी सत्संग ही है। भवचक्र में भ्रमण करते जीव रूपी मुसाफ़िर को यह सत्समागम अति दुर्लभ है। अतः जिसको ये संयोग मिलते हैं। उनको इनका लाभ अवश्य उठाना चाहिये। सत्संग एक चिन्तामणि रत्न के समान है। सत्संग से ही सद्गुणों का खज़ाना मिलता है।

-जैन अध्यापिका, दत्तमंदुरी गल्ली, भडगाँव (महाराष्ट्र)

10 जनवरी 2020
जिनवाणी 18
ISSN 2249-2011

प्रश्न-समाधान

ध्यान का महत्त्व एवं भ्रान्तियों का निवारण

तत्त्वचिन्तक श्रद्धेय श्री प्रमोदमुनिजी म.सा.

सुराणा कटला, महामन्दिर में उपाध्यायप्रवर पूज्य श्री मानचन्द्रजी म.सा. के वर्षावास में पूछे गए ध्यान सम्बन्धी प्रश्नों के समाधान तत्त्वचिन्तक श्रद्धेय श्री प्रमोदमुनिजी म.सा. ने फरमाए, जिनका लेखन सुश्री मीनाजी बोहरा ने किया है। इनमें 'वीतराग ध्यान' को लेकर जिज्ञासाओं का समाधान है एवं कतिपय भ्रान्तियों का निवारण किया गया है।

-सम्पादक

प्रश्नः- ध्यान का क्या महत्त्व है?

उत्तरः- अध्यात्म जगत् में ध्यान शब्द अपना विशिष्ट महत्त्व रखता है, पर सामान्यजन की भाषा में भी ध्यान का महत्त्व कम नहीं है। ''बहूजी ध्यान रखना, दूध उफण न जाय'', ''देखो ध्यान रखना आज खाने में नमक नहीं डालना है'', ''ध्यान से गाड़ी चलाओ'', ''देखो उत्तर लिखने से पूर्व प्रश्न-पत्र ध्यान से पढ़ लेना'' आदि अनेकविध प्रवृत्तियों में ध्यान रखने का प्रयोग सावधानी, यतना, विवेक के रूप में हुआ है। यह 'ध्यान रखना' पारिवारिक-सामाजिक-राष्ट्रीय जीवन में उपयोगी है। इससे आगे बढ़कर 'ध्यान रखना' धर्म का प्रवेश द्वार कहला सकता है। पाप नहीं करने का दृढ़ निश्चय ध्यान के आधार पर ही फलीभूत हो सकता है। ''जयं चरे जयं चिट्ठे'' (दशवैकालिक, 4.8) यतना के रूप में ध्यान की बात कह रहा है, जिसे संवर के बीस भेदों में भण्डोपकरण यतना से लेवे और रखे तो संवर। सुई, कुशाग्र मात्र यतना से लेवे और रखे तो संवर। आवश्यक सूत्र की टीका में आया-'स्मृतिमूलं नियमानुष्ठानम्' अर्थात् व्रत-नियम स्मृति-पूर्वक ही हो सकते हैं। स्मृति नहीं रहने से, ध्यान नहीं रहने से व्रत भंग हो जाता है, ऐसी जागृति रहना ही ध्यान है।

लोक व्यवहार में ध्यान विशेष महत्त्वशाली हुआ। नवीन कर्म-बन्ध से बचाने वाला बना, सञ्चित कर्म को उखाड़ने में प्रशस्त ध्यान सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। ध्यान के बिना केवलज्ञान और मोक्षगमन नहीं हो सकता। 8वें से 14वें गुणस्थान तक शुक्लध्यान का एकाधिकार है। भगवती सूत्र (1.1) 'डज्झमाणे-दड्ढे', वीर-स्तुति की गाथा-'अणुत्तरं झाणवरं झियाइ', उत्तराध्ययन सूत्र (35.19) 'सुक्कझाणं झियाइज्जा' आदि से इसकी महिमा गाई जा रही है। प्रशमरतिप्रकरण में शुक्ल-ध्यान का सामर्थ्य बताते हुए उमास्वाति ने फरमाया-''एक व्यक्ति का शुक्लध्यान तीन लोक के सारे जीवों के समस्त कर्मों को नष्ट करने में समर्थ है। जैसे देवाधिदेव अनन्त रूप (वैक्रिय) बनाने में समर्थ है, पर बनाते एक भी नहीं हैं, यह उनकी शक्ति है, सामर्थ्य है, वैसे ही यह शुक्ल ध्यान की शक्ति-सामर्थ्य है और शुक्ल ध्यान के पायों पर चढ़ाने के लिए उपयोगी है धर्म-ध्यान। अस्तु आचार्य विद्यासागर के पद्यानुवाद में-

वर्षों पड़ा बहुत सा तृण ढेर सारा,
ज्यों अग्नि से झट जले बिन देर सारा।
त्यों शीघ्र ही भव भवार्जित कर्म कूड़ा,
ध्यानाग्नि से जल मिटे सुन भव्य मूढा।।

प्रश्नः- ध्यान से अनेक लोगों की असाध्य बीमारियाँ भी दूर हो जाती हैं। रोग मिटाने की कामना आर्त्त-ध्यान है, इसलिए क्या इस ध्यान को आर्त्तध्यान कहा जा सकता है?

उत्तरः- सामायिक सूत्र में कायोत्सर्ग पालने के पश्चात् हिन्दी का पाठ बोला जाता है-''आर्त्त-ध्यान, रौद्र-ध्यान ध्याया हो, धर्म-ध्यान, शुक्ल-ध्यान, नहीं ध्याया हो....'' इससे यह स्पष्ट है कि कायोत्सर्ग में प्रशस्त एवं अप्रशस्त दोनों ध्यान हो सकते हैं। तब कैसे पहचानें कि

इस ध्यान-साधना में प्रशस्तता रही या अप्रशस्तता? स्थानांग सूत्र के चौथे स्थान में, भगवती सूत्र शतक 25, उद्देशक 7, औपपातिक सूत्र आदि में ध्यान के भेद-प्रभेदों का विवेचन देखने को मिलता है। असामान्य गुण को लक्षण कहते हैं। किसी भी द्रव्य, वस्तु, तत्त्व आदि की पहचान उसके विशेष गुण से ही होती है। आर्त्तध्यान का लक्षण है- आक्रन्दन करे, शोक करे, आँसू ढलकावे एवं विलाप करे। जहाँ ये लक्षण प्रकट हों, वहाँ आर्त्त-ध्यान की सम्भावना है। वीतराग-ध्यान को करने वाले साधकों में उत्साह-उमंग-स्फूर्ति बढ़ती जाती है, वहाँ आर्त्तध्यान के प्रायः कोई भी चिह्न नज़र नहीं आते।

आर्त्त-ध्यान से कर्म-बन्ध होता है, कर्म-बन्ध बढ़ने पर रोग मिटता नहीं, बढ़ता है। अगर आर्त्तध्यान करने से रोग मिटता होता तो सारे अस्पताल सूने हो जाते। दुःख विपाक सूत्र में आर्त्त-ध्यान से रोग बढ़ने के उल्लेख स्पष्ट ही इस तथ्य की पुष्टि कर रहे हैं। श्रीपाल राजा का भयंकर कुष्ठ रोग, आयम्बिल आराधना और नवपद के जाप से मिट गया था- ऐसा धर्मकथानकों, श्रीपाल चरित्र एवं भजनों में गाया जाता है- तब क्या आयंबिल और नवकार-जाप को आर्त्तध्यान कह दिया जायेगा? उत्तराध्ययन सूत्र के 19 वें अध्ययन में मृगचर्या के उल्लेख से साधक को रोग के क्षणों में समता के साथ धैर्यपूर्वक विश्राम का संकेत किया गया। अनुभवी प्राकृतिक स्वास्थ्य वेत्ताओं का कथन है कि विश्राम चार प्रकार का है-

1. आहार-त्याग से पेट का विश्राम- जिससे बुखार कब्ज आदि अनेक रोग मिट जाते हैं।
2. शवासन-शिथिलीकरण आदि से शरीर का विश्राम- थकावट, दुर्बलता आदि अनेक रोग मिट जाते हैं।
3. व्यर्थ-चिन्तन-त्याग से मस्तिष्क का विश्राम- अनेक रोगों से छुटकारा मिलता है।
4. आत्मा का विश्राम-अठारह पाप-त्याग कर संवर की साधना से रोग-शोक सभी से छुटकारा मिलता है।

भाव स्पष्ट है-रोग मिटाने के लिए आकुल-व्याकुल होना, हाय-तोबा करना, खेद-खिन्न होना, शरीर की चिन्ता करना, राग-द्वेष बढ़ाना, मोह में आबद्ध होना- आर्त्तध्यान है। ऊपर कहे चारों विश्राम, अनशन-ऊनोदरी आदि तप, नवकार, लोगस्स आदि का जप और वीतराग-ध्यान सरीखे ध्यान आर्त्तध्यान नहीं हो सकते। उत्तराध्ययन सूत्र के 20वें अध्ययन की 18 से 30 तक की गाथाओं में रोग-मिटाने के उपाय आदि होने पर भी आर्त्तध्यान के प्रसंग से रोग न मिटने का स्पष्ट उल्लेख है। 31वीं-32वीं गाथाओं में उन्हीं विचारों का संक्रमण हो गया। दुःख की अनादिकालीन परम्परा को मिटाकर शान्त-दान्त-निरारम्भी बनने की भावना जगी और 35 वीं गाथा में रोग काफूर हो गया। उत्तराध्ययन सूत्र के 9 वें अध्ययन में कथित नमिराजा भी तो दाह-ज्वर की वेदना से संत्रस्त व आकुल-व्याकुल थे। आर्त्तध्यान ग्रस्त राजा का रोग मिटा नहीं, चूड़ियों की खनखनाहट से भयंकर बेचैनी पैदा हुई, बेचैनी मिटाने के लिए सौभाग्य सूचक एक-एक चूड़ी को छोड़कर शेष चूड़ियों को खोल देने से चिन्तन की धारा बदल गई, एकत्वानुप्रेक्षा और धर्म-ध्यान ने सारे रोग को ही दूर कर दिया, अस्तु स्पष्ट हुआ कि रोग मिटाने में आर्त्तध्यान नहीं, अप्रशस्त ध्यान नहीं, अपितु धर्म-ध्यान-प्रशस्त-ध्यान सहकारी बना। आर्त्तध्यान या रौद्रध्यान से किसी का भी रोग शान्त नहीं होता।

प्रश्नः- तो क्या रोग मिटाने की भावना से ध्यान करना आर्त्तध्यान नहीं?

उत्तरः- नहीं, रोग मिटाने मात्र की भावना आर्त्तध्यान नहीं है, रोग मिटाने की कामना सहित शोक-विलाप आदि लक्षण प्रकट हो तो आर्त्तध्यान है, जैसे डॉक्टर के न आने पर खेद-खिन्न होना, सेवाभावियों को उपालम्भ देना आदि। रोग मिटाने के लिए प्राकृतिक, आयुर्वेदिक, होम्योपेथिक, एलोपेथिक आदि उपचार, योग-प्राणायाम आदि आर्त्तध्यान नहीं कहला सकते। श्रावक के अतिथि-संविभाग-व्रत में चौदह प्रकार की वस्तु

(दान) देने का विधान है, उसमें औषध व भैषज भी है, जो रोग के समय में ही ली जाती है और रोग-निवारण के लिए ही उन्हें लिया जाता है। व्रत-नियम में चट्टान के समान अडिग रहने वाले साधक आजीवन औषध का त्याग भी करते हैं, पर सामान्य साधक, रोग के क्षणों में आर्त्तध्यान के वश में न रहे एवं उससे बच सके, इसके लिए औषध-भैषज का विधान है। निर्दोष चिकित्सा करने-करवाने वालों को वैयावृत्त्य का लाभ भी मिलता है।

ऋषभदेव भगवान के जीव ने समकित प्राप्त करने के पश्चात् जीवानन्द वैद्य के 9वें भव में कोढ़ के रोग से त्रस्त साधु की वैयावृत्त्य करके उन्हें नीरोग बनाने का सौभाग्य अर्जित किया। औषध और भैषज, साधु, रोग मिटाने की भावना से, आर्त्तध्यान से बचकर धर्मध्यान में लीनता बनाए रखने के लिए, समाधि-भंग न हो इसके लिए ही लेते हैं। अतः रोग मिटाने की भावना मात्र को आर्त्तध्यान नहीं कहा जा सकता। रोग आने पर बेचैनी होना, खेद-खिन्न होना, बाहरी निमित्तों को दोषी ठहराना, रोग-मुक्ति के लिए छटपटाना, रुदन एवं क्रन्दन करना इसे शास्त्रकारों ने आर्त्तध्यान कहा है। रोग-निवारण मात्र की भावना आर्त्तध्यान नहीं है।

प्रश्नः- सुना है ध्यान-शिविर में भाग लेने वाले अनेक लोगों का रोग-निवारण हो गया तो क्या रोग-निवारण की भावना से ध्यान करने वालों के ध्यान को धर्म-ध्यान कह सकते हैं?

उत्तरः- जी नहीं, कर्म-निवारण की भावना से किया गया ध्यान ही धर्म-ध्यान है, जो अपाय-विचय और विपाक-विचय नामक धर्म-ध्यान के भेदों से पूर्ण रूप से स्पष्ट है। वीतराग-ध्यान में प्रवेश करने से पूर्व ही साधक को इन तथ्यों से अवगत कराया जाता है। शिविर में बार-बार दोहराया जाता है कि लक्ष्य बिलकुल स्पष्ट रहे- यहाँ की साधना किसी भी भय या प्रलोभन से नहीं करनी है। संसार के संसरण और सावद्य क्रिया अर्थात् पापकारी प्रवृत्ति का भय, भय-मोहनीय कर्म नहीं है, अपितु संवेग अर्थात् पराधीनता की असह्य वेदना और स्वाधीनता की उत्कट लालसा जगाने में सहकारी है। ध्यान-शिविर में आगम की अनेक गाथाओं के सहकार से साधक के मनोमस्तिष्क में अच्छी तरह स्थापित कर दिया जाता है कि उत्तराध्ययन सूत्र के 32 वें अध्ययन की प्रथम गाथा के अनुरूप यह ध्यान अनादिकालीन दुःख की परम्परा को नष्ट करने के लिए है। दशवैकालिक (2.5) की गाथा का प्रयोग (Practical) इस ध्यान-शिविर में होता है-आतापना लो, सुकुमारता छोड़ो, आसन-आहार एवं बोलने का नियन्त्रण आदि यतना के विविध सोपान, इन ध्यान शिविरों में साधकों द्वारा आरोहित होते हैं। इसके पश्चात् बार-बार चेताया जाता है कि किसी भी प्रकार की कामना न लगे और स्थूल रूप से कामना मिट जाने से मोटे-मोटे दुःखों का निवारण हो जाता है, जैसे कहा है- **"कामे कमाहि कमियं खु दुक्खं"** इसके बाद शिविर में शब्द गूञ्जते हैं-इसमें क्या राग करना, इसमें क्या द्वेष करना, सब अनित्य है, सम्पूर्ण शरीर अनित्य है, शरीर के स्तर पर होने वाली सारी वेदना, संवेदना अनित्य है अर्थात् **"छिंदाहि दोसं विणएज्ज रागं एवं सुही होहिसि संपराए"**-राग-द्वेष के वशीभूत होने वाला ध्यान, अप्रशस्त ध्यान है और राग-द्वेष को वश में करने से प्रशस्त ध्यान होता है। राग-द्वेष से मुक्त होने के लिए ही ध्यान-शिविर में प्रयास किया जाता है, प्रयोग किया जाता है।

प्रश्नः- पूरा ध्यान शिविर, शरीर के रोग-निवारण के लिए नहीं, अपितु शरीर रूपी रोग अर्थात् भव रोग के निराकरण के लिए होता है तो इस ध्यान से शरीर के रोग कैसे मिट जाते हैं?

उत्तरः- रोग मिटते हैं, अवश्य मिटते हैं, प्रतिदिन 4-4 इंसुलिन लगाने पर भी जिसकी शुगर 400 से नीचे नहीं हो रही थी, एक ध्यान-शिविर में शुगर सामान्य हो गई और रोज मिठाई खानी पड़ गई।

डिप्रेशन के रोग से त्रस्त 16-16 गोलियाँ खाकर भी कई बार रात को नींद नहीं आने वाले के सारी

गोलियाँ बन्द हो गई और नींद आराम से आने लगी। जटिल कमर दर्द से छुटकारा हुआ, घुटने के दर्द से निजात मिली, चश्मे के नम्बर का निस्तारा हुआ, किन्तु आर्त्तध्यान से नहीं, अपितु कायोत्सर्ग तप से होने वाले प्रशस्त ध्यान से निवारण हुआ, जैसा कि उत्तराध्ययन सूत्र के 29वें अध्ययन की 12वीं पृच्छा में स्पष्ट है और इसी कायोत्सर्ग के लिए निर्युक्ति (आवश्यक सूत्र) की 1462वीं गाथा में कहा है-

देहमइजड्डसुद्धी, सुहदुक्खतितिक्खया अणुप्पेहा।
झायइ य सुहं झाणं सयग्गो काउसग्गंमि।।

इसको पद्यानुवाद में ढालते हुए आचार्य विद्या सागरजी ने कहा-

कायोत्सर्ग तप से मिटती व्यथाएँ,
हो ध्यान चित्त स्थिर द्वादश भावनाएँ।
काया नीरोगी बनती मति जाड्य जाती
सन्त्रास सौख्य सहने उर शक्ति आती।

पहला लाभ यह है कि देह की जड़ता मिटती है, दूसरा लाभ है कि मति की जड़ता मिटती है, तीसरा लाभ है-सुख-दुःख में समता रखने की क्षमता बढ़ती है, अनुप्रेक्षा चौथा लाभ है तथा धर्मध्यान रूप प्रशस्त ध्यान पाँचवा लाभ है। अस्तु इस ध्यान का आनुषंगिक फल भले ही रोग नष्ट होना हो, परन्तु मुख्य फल तो समता की पुष्टि, आत्म-संतुष्टि एवं दोषों से कुट्टि है।

प्रश्नः- आर्त्तध्यान और धर्मध्यान में अन्तर क्या है?

उत्तरः- परिस्थिति में जीवन बुद्धि रखने से आर्त्तध्यान उत्पन्न होता है। प्रत्येक परिस्थिति अभावयुक्त होती है, कोई भी व्यक्ति परिस्थिति में जीवन बुद्धि रखने पर पराधीनता, जड़ता और अभाव के दुःख से छुटकारा नहीं पा सकता, परिस्थिति परिवर्तनशील होती है। कोई उसे बनाए रख नहीं सकता, कोई भी परिस्थिति सुख या दुःख रूप में नहीं होती, वह पूर्व के क्षण की परिस्थिति पर ही सुखद या दुःखद लगती है।

जैसे 'अ' एवं 'ब' नामक दो व्यक्ति एक करोड़ रुपए पर पहुँचे हैं। 'अ' के पास पहले 75 लाख रुपये थे वह एक करोड़ पर पहुँचा है और 'ब' के पास पहले सवा करोड़ रुपये थे, अब वह एक करोड़ पर पहुँचा है। तो एक करोड़ रुपए का होना सुख है या दुःख है? एक को सुखद लग रहा है और एक को दुःखद। कुछ दिन या महीने तक दोनों एक करोड़ पर अटके रहे, अब 'अ' को लग रहा है कि उसकी प्रगति रुक गई और 'ब' को लग रहा है कि उसका और घाटा टल गया, नुकसान टल गया।

अर्त्ति से आर्त्त बनता है, अर्त्ति दुःख को कहते हैं। व्यक्तिगत दुःख से भयभीत प्राणी सुख (साता) की दासता में आबद्ध होकर चित्त को अशुद्ध कर लेता है, उस अशुद्ध चित्त में परिस्थिति की कामना के निमित्त होने वाली एकाग्रता को आर्त्तध्यान कहते हैं। जबकि प्रत्येक परिस्थिति अनित्य है, किसी भी परिस्थिति में त्राण एवं रक्षण मिलने वाला नहीं। परिस्थिति से जुड़ना ही संसरण एवं दुःख का कारण बनता है। अतः परिस्थिति की अनित्यता को हृदयंगम कर परिस्थिति से अतीत के जीवन में एकाग्र होना धर्म-ध्यान कहलाता है, प्रशस्त ध्यान कहलाता है। उत्तराध्ययन सूत्र के 29वें अध्ययन की 12वीं गाथा में कहा गया है-**'पसत्थज्झाणोवगए सुहं सुहेणं विहरइ।'**

परिस्थिति पुद्गल की परिणति मात्र है, दशवैकालिक 8.59 **'अणिच्चं तेसिं विण्णाय, परिणामं पुग्गलाण य'** पुद्गल की परिणति को अनित्य जानकर एवं 8.60 में कहा गया-

पोग्गलाणं परिणामं, तेसिं णच्चा जहा तहा।
विणीयतण्हो विहरे, सीईभूएण अप्पणा।।

पुद्गल की परिणति जैसी है उसे वैसा जानकर उससे असंग हो जाए। उत्तराध्ययन सूत्र के 19वें अध्ययन की गाथा 90-91 में भी कहा गया है-

णिम्ममो णिरहंकारो, णिस्संगो चत्तगारवो।
समो य सव्वभूएसु, तसेसु थावरेसु य।।
लाभालाभे सुहे दुक्खे, जीविए मरणे तहा।
समो णिंदापसंसासु, तहा माणा वमाणओ।।

निर्मम, निरहंकार एवं निसंगता का कथन आया है, जिससे सब जीवों में समता रहती है, जिससे लाभ-अलाभ, सुख-दुःख आदि हर परिस्थिति में समता रहती है। **'समयाए आरिएहि धम्मे पवेइयं'** समता में ही आर्य पुरुषों ने धर्म कहा है। भगवती सूत्र (1.9) में 'आया सामाइए आया सामाइयस्स अट्ठे।' आत्मा ही समता है और समता ही आत्मा का अर्थ और प्रयोजन है।

जैसे मस्तिष्क हमारे शरीर का श्रेष्ठ अंग है वैसे ही ध्यान मुनि के सकल आचरणों में श्रेष्ठ है।

पूरे ध्यान शिविर में परिस्थितियों की असंगता और समता ही पुष्ट होती है, अतः ध्यान शिविर आर्त्तध्यान का नहीं, धर्म-ध्यान का रूप है, अंश है। समता से समाधि बढ़ती है। समाधि बढ़ने से मानस के विकारों का अपहरण हो जाता है। आसन, आहार की दृढ़ता और स्वस्थ मनोवृति से रोगों का शमन हो जाता है। अतः ध्यान शिविर से अनेक साधकों ने जो रोगों से छुटकारा पाया, यह आर्त्तध्यान का नहीं प्रशस्त ध्यान का परिणाम है, धर्म ध्यान का परिणाम है।

अब बचपन से बेरूखी क्यों

श्री राकेश मेहता (सी.ए.)

हम बचपन में आसमान के नीचे
खुली छत पर पूरे ददिहाल के साथ सोते थे
पर फोटो लेना कभी याद नहीं रहा।
दादी से मिले आगोश की तो
नानी के साथ 'पानी पूड़ी' खाने की
पापा के साथ बर्फ का गोला खाने
और आम चूसने की मम्मी के साथ
बिना एसी की ट्रेन में 'बेसन पूड़ी' के जायके की
दोस्तों के साथ फूलमण्डी सजाने व उनके साथ
क्रिकेट खेलने एवं पहाड़ों
पर नंगे पैर दौड़ने-भागने की
परिजनों के साथ शादी में
हाथ-ठेला चलाने की
तो रिश्तेदारों को भोजन परोसने की
दुकान के लिए साइकिल पर
ढ़ेर सारा सामान लाने की
इन सबकी भी कहाँ ली तस्वीरें हमने
पर हाँ, एक-एक पल का पूरा दृष्टान्त याद है
शायद, उस समय तस्वीरें हृदय में छपती थी,
कैमरे-मोबाइल में नहीं।

इसलिए कहना चाहूँगा

तलाश न करें ज़मीन आसमां की,
सब कुछ यहीं हैं, क्यूँ कहीं और तलाश करें
हमारी हर आरजू पूरी हो,
तो ऐसी ज़िंदगी का क्या मज़ा
जीने के लिए बस
हम एक खूबसूरत वजह की तलाश करें

अब शपथ लें

दिल से तुम दूर न जाना, हम भी दूर ना जायेंगे
अपने-अपने हिस्से की यारी-रिश्तेदारी
करुणा से निभाएँगे
ज़िन्दगी का ये सुहाना सफ़र यूँ ही चलता रहे
तुम जहाँ से याद करोगे, वहीं से हम मुस्कुरा देंगे
दिलों के तारों से जुड़कर
रिश्तों में विद्युत प्रवाहित करते रहेंगे
जीवन के यथार्थ को समझने की
हम हरदम कोशिश करते रहेंगे

आखिरकार जीवन का सार यहीं है

क्या भरोसा है ज़िंदगी का,
इंसान बुलबुला है पानी का
यही फ़लसफा है ज़िंदगी का
फिर भी रिवाज़ चल पड़ा है
कपड़े बदल-बदल कर जीने का
मत जियो ऐसी ज़िंदगी दोस्त
क्योंकि रिवाज़ यह भी तो है
कन्धे बदल-बदल कर हमें
एक ही कपड़े में ले जाने का

-प्लॉट नं.-8, शिप हाऊस रोड़, कायमखानी हॉस्टल के सामने, धर्मनारायणजी का हत्था पावटा, जोधपुर 98290-48909

10 जनवरी 2020
जिनवाणी 23
ISSN 2249-2011

प्रवचन

संवेग की जागृति : दुःखों से मुक्ति

श्रद्धेय श्री योगेशमुनिजी म.सा.

आचार्यप्रवर पूज्य श्री हीराचन्द्रजी म.सा. के शिष्य श्रद्धेय श्री योगेशमुनिजी म.सा. ने 22 अक्टूबर, 2019 को सामायिक-स्वाध्याय भवन, पाली चातुर्मास में प्रवचन फरमाया, जिसका संकलन-आशुलेखन सह सम्पादक श्री नौरतनमलजी मेहता, जोधपुर ने किया। -सम्पादक

धर्मानुरागी बन्धुओं!

अज्ञानता और आसक्ति संसार में भटकने का मूल कारण हैं। जीव जितना-जितना अज्ञान और आसक्ति में रचता-पचता है, उतना-उतना संसार में परिभ्रमण करता है। ऐसा जीव नित्य-नए दुःखों को झेलता है। ज्ञानी कह रहे हैं-अज्ञान और आसक्ति की मुक्ति के लिए तेरे भीतर संवेग जागृत रहना चाहिए। जब संवेग जगता है तो व्यक्ति दुःख मिटाने का काम करता है।

दुःख का मूल कारण है-अज्ञानता और आसक्ति। जिसके भीतर में संवेग जागृत होता है उसे संसार से विरक्ति का भाव आता है। आप जानते हैं- राग-द्वेष है तो भय है। भगवान अभय हैं। मेरे शरीर को कोई काटेगा तो मुझे भय लगेगा और यदि शरीर मेरा नहीं तो फिर भय कैसा?

एक सेठ के घर किसी मेहमान का आगमन हुआ। सेठ ने उसकी आवभगत की, उसे ठहराया, खाना खिलाया। सेठ ने आगत मेहमान को सभी सुख-सुविधा प्रदान की। सेठ ने जिस कमरे में मेहमान को ठहराया, बाहर निकलते-निकलते सेठ मेहमान से बोला-"सब अच्छा है न! कमरे में टी.वी. है, ए.सी. है, टेबल-कुर्सी है, पलंग है, सब कुछ सुविधा के साधन सुलभ हैं, पर उस कमरे में सवेरे-सवेरे एक साँप आ गया जो अभी तक निकला नहीं है।" क्या कमरे में मेहमान को रात में नींद आएगी? मेहमान को साँप का भय है। साधन-सुविधाओं पर राग है या द्वेष, जहाँ भी राग-द्वेष है वहाँ भय है। जहाँ भय है वहाँ सुखपूर्वक नींद नहीं आ सकती।

भगवान ने इसे ही मोह-नींद कहा है। अगर संवेग है तो मोह की नींद टूट सकती है। संवेग है तो राग-द्वेष छूट सकता है। संवेग है तो संसार समाप्त हो सकता है। कल चर्चा में कहा गया कि भगवान बनना है। बीस बोल की चर्चा में तेरहवाँ बोल है-संवेग। जो संसार के दुःखों से विरक्त है, तो वह बिना पानी जैसे मछली तड़फती है वैसे ही व्यक्ति संसार में तड़फता है। उसे स्थायी सुख मोक्ष प्राप्त करना है। संवेग का प्रथम अर्थ है-व्यक्ति संसार के दुःखों से विरक्त होता है। आपको किसी स्थान पर दुःख का भय लगे तो आप वहाँ खड़े रहते हैं या वहाँ से भागते हैं? व्यक्ति जहाँ भी भय देखता है तो वह ठहरता नहीं, वहाँ से भागने का प्रयास करता है।

संसार में चारों तरफ भय है। व्यक्ति को संसार से भागना नहीं, जागना है। संसार में रहते जो जगा रहता है तो वह सुखी रह सकता है। एक सेठ से किसी ने पूछा- "सेठ साहब! आपके पास सब कुछ है, आपको कष्ट-तकलीफ नहीं है तो क्या आप सुखी हैं?"

सेठ ने कहा-"भाई! बाहर में दीवाली है, भीतर में होली। संसार में कोई सुखी नहीं है। संसार में सब जगह अमावस्या है। हाँ, जो दुःख में सुख खोज लेता है वह अमावस्या को पूर्णिमा कर सकता है।" भगवान महावीर ने अज्ञान और अन्धकार का नाश कर ज्ञान रूप प्रकाश कर दिया है, आप-हम-सब चाहें तो अज्ञान-अन्धकार दूर कर सकते हैं, अन्यथा संसार का नाम है-फूलों से ढकी लाश। ज्ञानीजन कह रहे हैं-संसार में चारों तरफ दुःख रहा हुआ है, फिर भी संसार बाहर में सुहावना लगता है, पर भीतर में संसार डरावना है जैसे लाश पर

फूल। जीव को संसार के दु:खों से तड़फन लगे तो संवेग का भाव होता है। संवेग की तीव्रता जगने पर व्यक्ति को संसार के दु:खों से भय नहीं लग सकता।

दूसरा-धर्म करने में उत्साह हो। जो रुचिपूर्वक धर्म करता है, उत्साह से धर्म-क्रिया करता है तो उसका धर्माचरण-धर्मक्रिया श्रेष्ठ बन जाती है। किसी क्रिया को करने में तीन बातें अनिवार्य हैं। धर्मक्रिया विधिपूर्वक हो और पूरे उपयोग के साथ हो, बहुमान भी रहना चाहिए।

आप धर्मक्रिया करते हैं, करनी चाहिए, पर धर्म करते उत्साह निरन्तर अभिवर्द्धित होना चाहिए। संवेग प्राप्त होने पर व्यक्ति कुछ-न-कुछ तो प्राप्त करता ही है। मन में प्रण है तो निर्णय निर्वाण तक जाता है और यदि संसार की अभिलाषा मन में है तो न वैराग्य आ सकता है, न संयम।

मानकर चलिये आदमी को चैन नहीं तो वह बेचैन है। चैन चाहिए तो ज्ञानी कह रहे हैं-संवेग प्राप्त कर। संवेग है तो चाहे जो क्रिया क्यों न हो, साधक भीतर में सजग रहता है, जागृत रहता है।

एक व्यक्ति को बात-बात में आवेश आता है। आवेश यानी क्रोध। संवेग जगता है तो आवेश नहीं आता। संवेग क्या? सम्यक् वेग संवेग है। संवेग आ जाय तो जीव उत्कृष्ट रसायन से तीर्थङ्कर गोत्र का बन्ध कर सकता है। ज्ञानियों ने संवेग जागृति के लिए तत्त्व की रुचि और स्वाध्याय को आवश्यक बताया है। जानने में कोई चीज आ जाय तो व्यक्ति पाप से दूर रह सकता है। बाहर में युद्ध को जीतना है तो सत्त्व चाहिए और भीतर के युद्ध को जीतने के लिए तत्त्व चाहिए। तत्त्व रुचि से कर्म क्षय होते हैं। कर्म काटने के लिए तत्त्व में अवगाहन करने का उत्साह चाहिए।

आपकी किसमें रुचि है? आपको यदि संसार समाप्त करना है तो संवेग जगाइए, मोक्ष पाइए। संवेग का भाव जगने पर उसके मुँह से निकलेगा-

अहो समदृष्टि जीवड़ा, करे कुटुम्ब प्रतिपाल।
अन्तरगत न्यारो रहे, ज्यूँ धाय खिलावे बाल।।

यह दोहा आपने कई बार सुना है, कुछ ने बोला भी होगा। आप जानते हैं, कहते हैं-'ज्ञानक्रियाभ्याम् मोक्ष:।' ज्ञानपूर्वक क्रिया से मोक्ष होता है। ज्ञान समझ में आ रहा है या नहीं, पर वीतराग वाणी कानों में जाती है तो वह वाणी भी पुण्यवर्धन में सहायक है। बिना पुण्य के वीतराग वाणी श्रवण भी सम्भव नहीं होता।

आज व्यक्ति-व्यक्ति के जीवन में उलझनें ही उलझनें हैं। उलझनों को समाप्त करने के लिए ही तो तत्त्व का सहारा लिया जाता है। संवेग जागृति के लिए पहली आवश्यकता है-तत्त्वज्ञान में रुचि हो । दूसरी ज़रूरत है-कष्ट सहने की क्षमता हो। तीसरी-भोगों के प्रति उदासीनता हो। संवेग जगता है तो व्यक्ति के जीवन से भोग दूर भागते हैं। भोगों के प्रति उदासीनता का मतलब है-भोगों से अरुचि।

आपको कभी घर में किसी बात पर या व्यक्ति पर अथवा वस्तु पर अरुचि आ जाती है तो उदासीनता आए बिना नहीं रहती। उस व्यक्ति या वस्तु पर न लगाव रहता है और न ही जुड़ाव। वैसे ही संसार में रहते हुए संसार से उदासीनता का भाव आ जाए तो फिर उसका किसी के साथ जुड़ाव नहीं रह सकता।

एक बच्चा जो आपके पीछे-पीछे चल रहा था, चलते-चलते वह बच्चा गिर गया। आपने बच्चे को नहीं देखा तो वह बच्चा उठेगा और दौड़कर आप तक पहुँच जाएगा। आपने यदि बच्चे को देख लिया तो वह रोने लगेगा। बच्चे को देखने पर रोना आता है, जब कि नहीं देखो तो वह स्वत: चलने को तत्पर हो जाता है। बस, इसे उदासीनता के अर्थ में समझें तो आप इसी उदासीनता से भोगों से दूर रह सकते हैं।

मोक्ष की तीव्र अभिलाषा संवेग है और संसार-भ्रमण का कारण आवेग है। संवेग पूर्वक व्रत की आराधना हमें मुक्ति महल तक पहुँचा सकती है।

एक राजा के पास दीवान साहब थे। दीवान साहब का नियम था कि रात्रि में भोजन नहीं करना। एक बार

राजा साहब और दीवान साहब दोनों भ्रमण को निकले। जंगल में भ्रमण करते-करते सायंकाल हो गई। दीवान साहब का नौकर भोजन ले आया तो राजा साहब ने पूछा-''मैं बड़ा या आप?''

दीवान साहब ने प्रत्युत्तर में कहा-''आप राजा हैं, आप ही बड़े हैं।''

राजा ने कहा-''दीवानजी! आपके घर से तो भोजन आपके पीछे-पीछे आ रहा है, एक मैं हूँ जो महल से भोजन तो दूर, कोई पूछने तक नहीं आता।''

दीवान साहब ने कहा-''राजन्! यह तो व्रत-पालन का परिणाम है। जो त्यागता है, उसके पीछे भोग भागते हैं।'' व्रत हमें कष्ट-सहिष्णु बनाते हैं, उससे संवेग जागृत होता है। दु:खों से मुक्त होने के लिए तत्त्व में रुचि, भोग में अरुचि होती है तो कष्ट सहिष्णुता आती है। योगी संसार में रमण करता है और त्यागी शाश्वत सुख में रहता है। हम संवेग भावों को जागृत कर भगवान बनने की राह पर आगे बढ़े, इन्हीं शुभभावों के साथ.....।

लॉ आफ अट्रैक्शन

महासती श्री भाग्यप्रभाजी म.सा.

ब्रह्माण्ड का सबसे बड़ा लॉ अक्ट्रेक्शन है। जो चीज़ जैसी होती है वैसी ही चीज़ों को अट्रैक्ट करती है। जैसे ताश खेलने वाले को ताश का ग्रुप मिल जाता है, धर्म करने वालों को धार्मिक ग्रुप मिल जाता है उसी प्रकार हमें जैसे ग्रुप में रहना है वैसी ही चीज़ अपने अन्दर में रखनी चाहिए। जब कोई अपनी नेगेटिविटी (नकारात्मकता) के बारे में बात कर रहा हो तो हमें ज़्यादा गौर से नहीं सुनना चाहिए। सद्भावना देकर वहाँ से चले जाना चाहिए। 'मुझे यह नहीं चाहिए' इसमें से 'नहीं' तो यहीं पर रह जाता है और 'मुझे यह चाहिए' यह वाक्य ब्रह्माण्ड में चला जाता है और वहाँ से 27 गुना होकर वापस आता है और हमें मिल जाता है।

हम सोचते ही छोटा हैं तो मिलता भी छोटा है। बड़ा सोचोगे तो बड़ा बनोगे। छोटी-छोटी बातों से परेशान होना बन्द करें, इससे तो सारी तकलीफ को इनवाइट करते हैं। हम जैसा सोचते हैं वैसे ही हमारे विचार हो जाते हैं। जिस गलती को हमने देखा, गौर किया वह गलती हमने बार-बार टोकी, तो वही गलती हमारे में भी आ जाती है। जो कोई अच्छा काम कर रहा है उसे मोटिवेट करो और कोई बुरा काम कर रहा है उसे मैत्री भाव देकर वहाँ से चले जाएँ। जिससे छूटना है वैसी आदत वाले लोगों से मिलना बन्द कर दें। दूसरों को अपना बनाने के लिए मुस्करा देते हैं, परन्तु अपने लिए हम कब मुस्करायेंगे?

हैप्पीनेस कितनी देर के लिए कर पाते हैं? पैसा नहीं, रोटी-कपड़ा और मकान नहीं, फिर भी हमारे सन्त-सती हमेशा प्रसन्न रहते हैं। हमारे पास तो सब कुछ है फिर भी हम दु:खी हैं। कोई एक बीमारी हो तो भी सभी लोगों को बोलेंगे और वह बीमारी और बढ़ जाएगी। जीवन में दिमाग में जो बात जमा ली वह भव-भव तक साथ जाएगी। जितनी-जितनी कमियों और शिकायतों के भाव रहेंगे वही कमियाँ और शिकायतें हमारे में आ जाएँगी। किसी दूसरे को दु:खी करना सबसे बड़ा पाप है और उससे बड़ा पाप है अपने आपको दु:खी करना। कोई इन्जीनियर, डॉक्टर बनना चाहते हैं, कोई सी.ए. बनना चाहता है, कोई लेक्चरर बनना चाहता है, कोई भी यह नहीं सोचता कि भगवान बनना है, भगवान बनने के बाद इन भौतिक चीज़ों की तो ज़रूरत ही नहीं रहेगी।

किसी भी Problem को Solution की तरह देखें।

-जवाहर नगर, जयपुर में 'कदम धर्म की ओर' कक्षा से संकलित,
संकलनकर्त्ता, नितिन दुग्गड़

10 जनवरी 2020
जिनवाणी 26
ISSN 2249-2011

संगोष्ठी-आलेख

आचार्य हेमचन्द्रसूरि विरचित योगशास्त्र में ध्यान*

डॉ. जितेन्द्र बी. शाह

ग्रन्थ रचना प्रयोजन

गुर्जरेश्वर महाराज कुमारपाल (विक्रम सम्वत् 1199 से 1230) अपूर्व पराक्रम, सुदृढ़ शासनव्यवस्था, उत्कृष्ट प्रभुभक्ति एवं गुरुभक्ति के कारण राजर्षि, धर्मात्मा एवं परमार्हत के नाम से सुप्रसिद्ध हुए थे। उन्होंने 'मारि' अर्थात् हिंसा का निषेध करवाया था। राज्य में सर्वत्र अहिंसा एवं अमारि-प्रवर्तक के रूप में सुप्रसिद्ध थे। उन्होंने अपने राज्य में अभयदान अर्थात् सभी जीवों की सुरक्षा की उद्घोषणा की थी। साथ ही हिंसा करने/करवाने वाले को कड़ी सजा का भी विधान किया था। अत: सर्वत्र मैत्री एवं प्रेम का वातावरण बना था। इतना ही नहीं उन्होंने अपने राज्य से शिकार, जुआ, मद्यपान आदि व्यसनों का सम्पूर्ण निषेध करवाया था। इसी कारण राजा कुमारपाल परमार्हत के रूप में सुप्रसिद्ध थे। यह सब उनके गुरु कलिकाल सर्वज्ञ आचार्य हेमचन्द्र की कृपा एवं धर्मोपदेश से सम्भव हुआ।

राजा कुमारपाल मूलत: क्षत्रिय थे और जैनधर्म अंगीकार करने से पूर्व मांसाहार-अभक्ष्य भक्षण भी किया करते थे। इसके प्रायश्चित्त हेतु गुरुदेव हेमचन्द्राचार्य ने स्वविरचित वीतरागस्तोत्र के 20 प्रकाश एवं योगशास्त्र के 12 प्रकाश कुल 32 प्रकाशों का प्रतिदिन स्वाध्याय करने का सूचन किया था। जिससे 32 दाँतों की शुद्धि हो एवं उसके साथ ही उसका जीवन भी विशुद्ध बने यही इसका उद्देश्य था। इसी कारण महाराजा कुमारपाल हर रोज इन दोनों ग्रन्थों का स्वाध्याय करते थे।

आचार्य हेमचन्द्र स्वयं योगशास्त्र के अन्त में लिखते हैं कि राजा कुमारपाल को योग की उपासना अत्यन्त प्रिय थी। इतना ही नहीं उन्होंने अन्य योगशास्त्रों का श्रवण भी किया था और उनको एक विलक्षण योगशास्त्र के श्रवण की तीव्र इच्छा थी। अत: योग-ध्यान तो अनुभूति का विषय है, साधना का विषय है, किन्तु चर्चा का विषय तो कतई नहीं है। श्रवण का विषय नहीं होने पर भी उन्होंने योग के सारभूत प्रस्तुत ग्रन्थ की रचना की।[1] यह ग्रन्थ योग के अन्य ग्रन्थों से भिन्न प्रकार का योग ग्रन्थ है एवं यह भी सत्य है कि योग मार्ग के जिज्ञासु के लिए प्रस्तुत ग्रन्थ मार्गदर्शक सिद्ध हो सकता है।

ग्रन्थकार

'योगशास्त्र' ग्रन्थ की रचना सुप्रसिद्ध जैनाचार्य हेमचन्द्र ने की है।[2] अप्रतिम ज्ञानशक्ति, स्मरणशक्ति एवं प्रतिभा सम्पन्न आचार्य ने अपने जीवनकाल में इतने ग्रन्थों का निर्माण किया है कि जिसके कारण उनको कलिकाल सर्वज्ञ की उपाधि दी गई थी। एक जनश्रुति के अनुसार उन्होंने साढ़े तीन करोड़ श्लोक रचना करके अद्भुत विश्वविक्रम स्थापित किया था। उन्होंने नूतन व्याकरण की रचना की, कोशों की रचना की, योगशास्त्र ग्रन्थ की रचना की, काव्यशास्त्र की रचना की। अत: विद्वानों के अनुसार वे पाणिनि थे, पतञ्जलि थे एवं गौतम भी थे। यही उनकी विशेषता थी।

प्रस्तुत योगशास्त्र की रचना संस्कृत भाषा में 1200 श्लोक में की गई है एवं उस पर उन्होंने 1200 श्लोक प्रमाण स्वोपज्ञ टीका की रचना भी की है। यह ग्रन्थ 12 प्रकरणों में विभक्त है, जिनको 'प्रकाश' नाम दिया गया है। इन बारह प्रकाशों में आचार्यश्री ने क्रमश: प्रथम प्रकाश में भगवान महावीर की समभावयुक्त करुणा को सदृष्टान्त समझाया है। साथ ही साथ

* आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा. के भोपालगढ़ चातुर्मास में आयोजित विद्वत्संगोष्ठी में प्रस्तुत आलेख।

सम्यग्ज्ञान, दर्शन एवं सम्यक् चारित्र स्वरूप रत्नत्रयी योग को मोक्ष के कारण के रूप में बताया है।

द्वितीय एवं तृतीय प्रकाश में सम्यक्त्व एवं मिथ्यात्व का स्वरूप दर्शाकर श्रावकों के बारह व्रतों का सविस्तार वर्णन किया है। चतुर्थ प्रकाश में क्रोध, मान, माया एवं लोभादि कषायों एवं इन्द्रियों पर विजय, मनशुद्धि, समभाव, ध्यान, मैत्री आदि चार भावना एवं अनित्यादि बारह भावनाओं का वर्णन किया है तथा ध्यान के लिए स्थल एवं आसनों का भी वर्णन किया है।

पाँचवें एवं छट्ठे प्रकाश में प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा का वर्णन हुआ है। सात से ग्यारह प्रकाश में पिण्डस्थ, पदस्थ, रूपस्थ एवं रूपातीत स्वरूप चार ध्यान एवं धर्मध्यान तथा शुक्लध्यान का भेद-प्रभेद सहित सविस्तार वर्णन उपलब्ध है। बारहवें प्रकाश में आचार्यश्री ने स्वयं के योगानुभव, मन की जय, परमानन्द योग, अभ्यासक्रम, तत्त्वज्ञान, उन्मनीभाव आदि का वर्णन करके आत्मोपदेश किया है।

इस प्रकार प्रस्तुत योगशास्त्र ग्रन्थ में जैनदृष्टि से मोक्ष-प्राप्ति का मार्ग प्रस्तुत किया गया है एवं पातञ्जल योगदर्शन में निर्दिष्ट यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान एवं समाधि स्वरूप अष्टांग योग का जैनधर्मानुसार साधु एवं गृहस्थ जीवन में उपयोगी योगसाधना का वर्णन है। पातञ्जल योगसूत्र के साथ तुलनात्मक अध्ययन करने हेतु यह उत्तम ग्रन्थ है। इसी प्रकार आचार्य शुभचन्द्र के ज्ञानार्णव एवं कार्तिकेय की अनुप्रेक्षा के साथ भी इस ग्रन्थ का तुलनात्मक अध्ययन हो सकता है।

योगशास्त्र ग्रन्थ की रचना का आधार

आचार्य हेमचन्द्र ने स्वयं कहा है कि इस ग्रन्थ की रचना का आधार प्राचीन शास्त्र, गुरुपरम्परा एवं स्वानुभव है। यथा-

श्रुताम्बोधेरधिगम्य, सम्प्रदायाच्च सद्गुरोः।
स्वसंवेदनतश्चापि, योगशास्त्रं विरच्यते।।[3]

अर्थात् श्रुतरूप समुद्र से, सद्गुरु की परम्परा से (प्राप्त ज्ञान से) एवं स्वानुभव के आधार पर प्रस्तुत योगशास्त्र की रचना कर रहा हूँ। यह बात ग्रन्थ के अन्त में भी कही है। अर्थात् आचार्य हेमचन्द्र ने इस ग्रन्थ की रचना श्रुतग्रन्थों के आधार पर एवं कुछ बातें जो अन्य ग्रन्थों में प्राप्त नहीं होती हैं, किन्तु गुरुपरम्परा से प्राप्त हुई हैं वैसी तथा स्वयं के अनुभवों के आधार पर जो नवनीत प्राप्त हुआ है वही यह योगशास्त्र का ग्रन्थ है।

योग महिमा

इस ग्रन्थ के प्रारम्भ में उन्होंने योग की महिमा वर्णित करते हुए कहा है कि योग सर्व आपत्ति स्वरूप वेलडी को नष्ट करने के लिए तीक्ष्ण कुठार स्वरूप, मोक्ष लक्ष्मी प्राप्त करने का अमूल्य मन्त्र है।[4] योग से सभी प्रकार के पापों का नाश हो जाता है। योग का प्रभाव अवर्णनीय है। योग से कफ, श्लेष्म, विष्ठा, कान, दाँत, नासिका, आँख, जिह्वा आदि शारीरिक मैल, हस्तस्पर्श, मूत्र, केश, नख आदि औषध स्वरूप बन जाते हैं तथा अणिमादि लब्धियों की प्राप्ति होती है।[5]

योग से विद्याचारण, जंघाचारण आदि लब्धि, आशीविष लब्धि, अवधिज्ञान, मनःपर्यवज्ञान आदि की प्राप्ति होती है। योग से केवलज्ञान भी प्राप्त होता है।[6]

योग का स्वरूप

आचार्य हरिभद्रसूरि ने योग की व्याख्या करते हुए कहा है कि मोक्षेण योजनात् योगः।[7] मोक्ष के साथ जोड़ने वाला ही योग कहलाता है। यहाँ योग शब्द का संयोग के रूप में अर्थ करते हुए योग शब्द की व्याख्या की गई है। इसी परम्परा का अनुसरण करते हुए आचार्य हेमचन्द्र ने भी योग की व्याख्या की है-

चतुर्वर्गेऽग्रणीर्मोक्षो योगस्तस्य च कारणम्।
ज्ञान-श्रद्धान-चारित्ररूपं रत्नत्रयं च सः।।[8]

धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष स्वरूप चार वर्गों में मोक्ष अग्रणी है अर्थात् सर्वोपरि है। उस मोक्ष का कारण योग है और वह ज्ञान, श्रद्धा एवं चारित्ररूप है। यथावस्थित तत्त्वबोध ज्ञान है। जिनेश्वर प्रणीत तत्त्वों में

रुचि स्वरूप श्रद्धा एवं सर्व पापों के त्याग स्वरूप चारित्र है। इन्हीं को रत्नत्रयी कहा गया है और इसके आचरण से मोक्ष प्राप्त होता है। जो योग का साध्य है। इन सभी तत्त्वों का सविस्तार वर्णन योगशास्त्र में हुआ है।

योगशास्त्र में ध्यान

जैनधर्म में नव तत्त्वों-जीव, अजीव, पुण्य, पाप, आस्रव, संवर, निर्जरा, बन्ध एवं मोक्ष का वर्णन पाया जाता है। इनमें संवर एवं निर्जरा ये दो तत्त्व मोक्ष प्राप्ति के लिए प्रमुख माने गए हैं। इन्हीं से पूर्वकृत कर्मों का क्षय एवं नए कर्मों का संवरण होता है, जिसके कारण आत्मा विशुद्ध बनती है और अन्त में सम्पूर्ण विशुद्ध होने पर अपने अनन्त चतुष्टय का अनुभव होता है। इन दो तत्त्वों में भी तप विशेष महत्त्वपूर्ण है। तप से कर्मक्षय होता है। तप के बारह भेद दर्शाए गए हैं। उनमें अन्तिम भेद ध्यान है और ध्यान ही मोक्ष का प्रधान अंग है। अतः ध्यान को अन्त में बताया गया है।

आचार्य हेमचन्द्र ने योगशास्त्र की स्वोपज्ञ टीका में कहा है कि जिस तरह से सरोवर के द्वारों को चारों तरफ से उपायपूर्वक बन्द कर दिया जाए तो नये जल से सरोवर नहीं भरेगा इसी प्रकार आस्रव निरोध करने से संवर से समावृत्त आत्मा नए-नए कर्मद्रव्यों से पूर्ण नहीं होता है तथा पहले से ही एकत्र जल सूर्य के प्रचण्ड ताप से संतप्त हो करके सूखता जाता है उसी प्रकार जीव के द्वारा पूर्वबद्ध कर्म तप के द्वारा जलकर नष्ट हो जाता है। बाह्य तप की अपेक्षा आभ्यन्तर तप निर्जरा का श्रेष्ठ कारण माना गया है। उसमें भी ध्यान रूपी अग्नि से पूर्वबद्ध कर्मों का तत्काल क्षय हो जाता है।[9] अतः ध्यान अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है।

ध्यान के लिए समता की आवश्यकता

आचार्य हेमचन्द्र के अनुसार मन को विचारों से मुक्त करने के पश्चात् ही ध्यान सम्भावित है अन्यथा ध्यान से लाभ होने की बजाय हानि होने की सम्भावना बन जाती है। निरन्तर भावनाओं से भावित मन वाला सर्व विषयों के प्रति ममत्व रहित बनकर समत्व का अवलम्बन करे।[10] क्योंकि विषयों से विरक्त समतायुक्त चित्त वाले योगी का कषायाग्नि शान्त हो जाता है और सम्यक्त्व दीप प्रगट होता है।[11] अनुप्रेक्षा आदि बल से प्राप्त समता रहित होकर ध्यान करने पर आत्मा विडम्बना प्राप्त करता है।[12] जिन्होंने इन्द्रिय जय नहीं किया है और मनोजय-मनः शुद्धि नहीं की है, राग-द्वेष को नहीं जीता है, निर्ममत्व भाव प्रकट नहीं किया है और जिन्होंने समता का अभ्यास नहीं किया है वैसे गतानुगतिक भाव से जो मूढ़ पुरुष योगसाधना करता है वह उभयगति से भ्रष्ट होता है। अतः यथाविधि ध्यान करना चाहिए। यथा-

न साम्येन विना ध्यानं, न ध्यानेन विना च तत्।
निष्कम्पं जायते तस्माद्, द्वयमन्योन्यकारणम्।।[13]

साम्य के बिना ध्यान नहीं और ध्यान के बिना साम्य नहीं, अतः ध्यान एवं साम्यभाव एक-दूसरे के कारण हैं।

ध्यान की व्याख्या एवं प्रकार

छद्मस्थ योगी का अन्तर्मुहूर्त्त काल तक मन की स्थिरता को ध्यान कहा गया है।[14] ध्यान के दो प्रकार हैं- 1. धर्मध्यान, 2. शुक्लध्यान।

अयोगियों को योग निरोध होने के कारण ध्यान की आवश्यकता नहीं रहती है।

कालमर्यादा

एक पदार्थ में मुहूर्त्तकाल पर्यन्त ध्यान स्थिर होने के पश्चात् चिन्ता होने के कारण अथवा दूसरे पदार्थ का चिन्तन करने के कारण एक ही पदार्थ में एक अन्तर्मुहूर्त काल से अधिक काल तक ध्यान स्थिर नहीं होता है। इस कारण चित्त का यही स्वभाव माना गया है। चित्त एक अर्थ का आलम्बन करता है तत्पश्चात् दूसरे अर्थ का आलम्बन करता है, इस प्रकार लम्बे काल तक ध्यान-श्रेणी चालू रहती है। इसके लिए भावनाओं का आलम्बन किया जाता है।

ध्यान–साधना के लिए स्थान एवं आसन

ध्यान एक अत्यन्त पवित्र क्रिया है और चित्त को स्थिर करने का पुरुषार्थ है। अतः जहाँ चित्त स्थिर रहे एवं चित्त विकार रहित रहे ऐसे स्थान को पसन्द करना, ध्यान के लिए आवश्यक है। आचार्यश्री कहते हैं कि तीर्थंकरों की जन्म, दीक्षा, केवल–ज्ञान, निर्वाण भूमिओं में अथवा ऐसे स्थानों के अभाव में मन शान्त रहे वैसे एकान्त स्थल में ध्यान करें एवं ध्यान के पूर्व आसन जय भी आवश्यक है।[15] आचार्यश्री ने ध्यान के लिए निम्नोक्त आसन उपयुक्त माने हैं– 1. पर्यंकासन, 2. वीरासन, 3. वज्रासन, 4. कमलासन, 5. भद्रासन, 6. दण्डासन, 7. उत्कटिकासन, 8. गोदोहिकासन, 9. कायोत्सर्गासन।[16] तथापि ध्यान के लिए कोई आसन निश्चित नहीं है। साधक को जो आसन उपयुक्त लगे वह पसन्द कर सकता है। कहा है–

जायते येन येनेह विहितेन स्थिरं मनः।
तत्तदेव विधातव्यम् आसनं ध्यानसाधनम्।।[17]

जो–जो आसन करने से मन की स्थिरता प्राप्त होती है वही आसन ध्यान साधने के लिए करना चाहिए।

ध्यान विधि

ध्यान एक उत्तम क्रिया है। वह योग्य विधि अनुसार करने पर ही लाभप्रद होती है। इतना ही नहीं ध्यान अभ्यास एवं वैराग्य से ही सिद्ध होता है। इसके लिए संकल्पपूर्वक कार्य करने से ही सिद्धि प्राप्त होती है। दृढ़ संकल्प के बिना यह सम्भव नहीं है। इसके लिए कहा गया है कि लम्बे समय तक सुखपूर्वक बैठ सके ऐसे आसन में बैठ करके दोनों होठों को बन्द करके, नासिका के अग्रभाग पर दोनों दृष्टियों का स्थापन करके, ऊपर के दाँतों का नीचे के दाँतों के साथ स्पर्श न हो उस तरह, रजोगुण एवं तमोगुण से रहित होकर, दोनों भ्रकुटियों को विक्षेप किये बिना, प्रसन्न मन रखकर मेरुदण्ड को स्थिर रखकर, पूर्व या उत्तरदिशा सन्मुख बैठकर, अप्रमादभाव से ध्यान करना चाहिए।[18]

प्राणायाम ध्यान के लिए आवश्यक है या नहीं? प्रत्याहार की आवश्यकता एवं धारणा के स्थान

पतञ्जलि ने प्राणायाम के द्वारा ध्यान सिद्धि मानी है, किन्तु आचार्यश्री कहते हैं कि प्राणायाम से श्रमित मन स्वस्थता प्राप्त नहीं करता है। प्राण का निग्रह करने से शरीर में पीड़ा एवं मन अस्थिर होता है। पूरक, रेचक एवं कुम्भक क्रिया करने के लिए परिश्रम करना पड़ता है। उससे मन संक्लेश युक्त बन जाता है एवं मन संक्लेश मुक्ति का कारण नहीं बन सकता है।[19] अतः प्राणायाम से प्रत्याहार अधिक लाभप्रद माना गया है। शब्द, रूप, रस, गन्ध एवं स्पर्श स्वरूप पाँचों विषयों में से इन्द्रियों को मन के साथ खींचकर अतिशय शान्त बुद्धि वाला जितेन्द्रिय साधक धर्मध्यान करने हेतु मन को निश्चल करे उसी को प्रत्याहार कहा है।[20] प्रत्याहार के बाद ही मन धारणा के लिए योग्यता प्राप्त करता है।

धारणा के लिए आचार्यश्री ने निम्नोक्त स्थानों का कथन किया है–"नाभि, हृदय, नासिका का अग्रभाग, कपाल, भ्रकुटि, तालु, नेत्र, मुख, कान एवं मस्तक। इन स्थानों पर मन को स्थिर करने का अभ्यास करना चाहिए।[21]

ध्यान का क्रम

ध्यान करने की इच्छा रखने वाले को ध्याता, ध्येय एवं ध्यान के फल का ज्ञान होना आवश्यक है क्योंकि सुज्ञात साधक ही सिद्धि को प्राप्त करता है। आचार्यश्री ने ध्याता के लक्षणों का वर्णन किया है। कहा है कि साधक में इन सभी लक्षणों का होना अनिवार्य है– 1. साधक दृढ़निश्चयी होना चाहिए–प्राणांत कष्ट आने पर भी संयम धुरा का त्याग न करने वाला होना चाहिए, 2. सभी जीवों को स्व समान मानने वाला, 3. आत्मस्वरूप का ज्ञाता हो, 4. बाह्य वातावरण से अविचलित, 5. योगामृत रसायन का पान करने की इच्छा रखने वाला, 6. रागादि से मुक्त होकर साधना करने वाला, 7. क्रोधादि कषायों से अदूषित, 8. आत्मरमणता करने वाला, 9. सर्वत्र मन से निर्लिप्त, 10.

कामभोग से विरक्त, 11. देहादि से विरक्त, 12. संवेगयुक्त, 13. समभाव धारण करने वाला, 14. सभी जीवों के प्रति समदृष्टि, 15. करुणावान, 16. सांसारिक सुखों से विरक्त, 17. अचल मनोबल वाला, 18. चन्द्र की तरह सौम्य, 19. पवन की तरह असंग आदि गुणों से युक्त साधक ही ध्यान करने योग्य माना गया है।[22]

ध्येय के आधार पर ध्यान

योगशास्त्र में ध्यान के चार भेद निरूपित हैं-

1. **पिण्डस्थ**-शरीर में रहे हुए तत्त्वों का ध्यान।
2. **पदस्थ**-पद-अक्षर का ध्यान/मन्त्रों का ध्यान।
3. **रूपस्थ**-अरिहन्त परमात्मा का आलम्बन लेकर किया जाने वाला ध्यान रूपस्थ ध्यान है।
4. **रूपातीत**-देह रहित, निरञ्जन, निराकार सिद्धों का ध्यान रूपातीत ध्यान कहा गया है।[23]

इस प्रकार साधक इन चारों ध्यानों का अभ्यास करते हुए जगत के तत्त्वों का ज्ञाता बनता है और अनुभव जन्य ज्ञान को प्राप्त करते हुए आत्मविशुद्धि करता है। जैनधर्म में वैसे तो ध्यान के चार प्रकारों में धर्मध्यान एक प्रकार है उसमें आज्ञा आदि का विचार किया जाता है। किन्तु यहाँ आचार्यश्री ने अलग ही प्रकार से ध्यान का वर्णन किया है जो अपने आपमें मौलिक चिन्तन है और उसका समापन करते हुए कहते हैं कि यही धर्मध्यान है और उसके आगमादि में चार प्रकार सुप्रसिद्ध है, यथा- 1. आज्ञा विचय, 2. अपाय विचय, 3. विपाक विचय, 4. संस्थान विचय।[24]

तत्पश्चात् आचार्यश्री ने शुक्लध्यान के भेदों का वर्णन किया है।

1. पृथक्त्ववितर्क सविचार शुक्लध्यान
2. एकत्ववितर्क अविचार शुक्लध्यान
3. सूक्ष्मक्रिया अप्रतिपाती शुक्लध्यान
4. व्युपरतक्रिया अनिवृत्ति शुक्लध्यान[25]

इस प्रकार ध्यान करने वाला योगी अन्त में सभी कर्मों का क्षय करके परमोच्च स्थान सिद्धगति को प्राप्त होता है। वह शाश्वत एवं अविनाशी स्थान है, जहाँ सदाकाल ज्ञानादि में लीन रहकर योगी शाश्वत सुख का अनुभव करता है।

पादटिप्पण

1. श्री चौलुक्यक्षितिपतिकृतप्रार्थनाप्रेरितोऽहं, तत्त्वज्ञाना-मृतजलनिधेर्योगशास्त्रस्य वृत्तिम्। स्वोपज्ञस्य व्यरच-यमिमां तावदेषा च नन्द्यात्, यावज्जैनप्रवचनवती भूर्भवःस्वस्त्रयीयम्।।1।। -तथा टीका, पृष्ठ 564
2. (क) इति परमार्हत श्री कुमारपालभूपालशुश्रूषिते आचार्यश्री-हेमचन्द्र-विरचितेऽध्यात्मोपनिषन्नाम्नि संजातपट्टबन्धे श्री योगशास्त्रे द्वादशः प्रकाशः।। पृष्ठ 564

   (ख) या शास्त्रात् सुगुरोर्मुखादनुभवाच्चाज्ञापि किञ्चित् क्वचित्, योगस्योपनिषद् विवेकपरिपच्येतश्च-मत्कारिणी। आचार्येण निवेशिता पथि गिरां श्री हेमचन्द्रेण सा।।55।। पृष्ठ 563
3. योगशास्त्र, 1.4, पृष्ठ 12
4. योगः सर्वविपद्वल्ली-विताने परशुःशितः।
   अमूलमन्त्रतन्त्रं च, कार्मणं निर्वृत्तिश्रियः।।
   -योगशास्त्र, 1.5
5. भूयांसोऽपि हि पाप्मानः, प्रलयं यान्ति योगतः।
   चण्डवाताद् घनघना, घनाघनघटा, इव।।
   क्षिणोति योगः पापानि, चिरकालार्जितान्यपि।
   प्रचितानि यथैधांसि, क्षणादेवाशुशुक्षणिः।।
   कफविप्रुण्मलामर्श-सर्वौषधिमहर्द्धयः।
   संभिन्नस्रोतोलब्धिश्च, योगं ताण्डवडम्बरम्।।
   -योगशास्त्र 1.6, 7, 8
6. अहो योगस्य माहात्म्यं, प्राज्यं साम्राज्यमुद्वहन्।
   अवाप केवलज्ञानं, भरतो भरताधिपः।।
   -योगशास्त्र, 1.10, पृष्ठ 19
7. योगविंशिका, 1, आचार्य हरिभद्रसूरि
8. योगशास्त्र 1.15, पृष्ठ 46
9. योगशास्त्र 4.91, टीका, पृष्ठ 433
10. भावनाभिरविश्रान्तमिति भावितमानसः।
    निर्ममः सर्वभावेषु, समत्वमवलम्बते।।
    -योगशास्त्र 4.110, पृष्ठ 456
11. विषयेभ्यो विरक्तानां, साम्यवासितचेतसाम्।
    उपशाम्येत् कषायाग्नि र्बोधिद्वीपः समुन्मिषेत्।।
    -योगशास्त्र, 4.111, पृष्ठ 456

12. समत्वमवलम्ब्याथ, ध्यानं योगी समाश्रयेत्।
विना समत्वमारब्धे, ध्याने स्वात्मा विडम्ब्यति।।
-योगशास्त्र, 4.112
13. योगशास्त्र 4.114
14. मुहूर्त्तान्तर्मनः स्थैर्य, ध्यानं छद्मस्थयोगिनाम्।
धर्म्यं शुक्लं च तद्द्वेधा, योगरोधस्त्वयोगिनाम्।।
-योगशास्त्र 4.115
15. तीर्थं वा स्वस्थताहेतु, यद् तद् वा ध्यानसिद्धये।
कृतासनजयो योगी, विविक्तं स्थानमाश्रयेत्।।
-योगशास्त्र 4.123
16. योगशास्त्र 4.124
17. योगशास्त्र 4.114
18. सुखासनसमासीनः, सुश्लिष्टाधरपल्लवः।
नासाग्रन्यस्तदृग्द्वन्द्वो, दन्तैर्दन्तानसंस्पृशन्।।
-योगशास्त्र, 4.135
19. योगशास्त्र 6.3-5
20. इन्द्रियैः सममाकृष्य, विषयेभ्यः प्रशान्तधीः।
धर्मध्यानकृते तस्मात्, मनः कुर्वीत निश्चलम्।।
-योगशास्त्र, 6.6
21. योगशास्त्र, 6.3-5
22. योगशास्त्र 7.2-7
23. पिण्डस्थं च पदस्थं च, रूपस्थं रूपवर्जितम्।
चतुर्धा ध्येयमाम्नातं, ध्यानस्यालम्बनं बुधैः।।
-योगशास्त्र, 7.8
24. आज्ञाऽपाय-विपाकानां, संस्थानस्य च चिन्तनात्।
इत्थं वा ध्येयभेदेन, धर्म्यं ध्यानं चतुर्विधम्।।
-योगशास्त्र, 10.7
25. ज्ञेयं नानात्वश्रुतविचारमैक्यं श्रुतविचारं च।
सूक्ष्मक्रियमुत्सन्नक्रियमिति भेदैश्चतुर्धा तत्।।
-योगशास्त्र 11.5

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. योगशास्त्रनो गूर्जरानुवाद (स्वोपज्ञविवरण सहित), अनुवाद-सम्पादक-आचार्य श्री हेमसागरसूरि, सह-सम्पादक-पण्डित लालचन्द्र भगवान गाँधी, प्रकाशक-सेठ देवचन्द्र लालभाई जैन पुस्तकोद्धार फण्ड, सूरत, प्रथमावृत्ति, ईस्वी सन् 1969

-निदेशक, एल.डी. इंस्टीट्यूट ऑफ इण्डोलॉजी, अहमदाबाद (गुजरात)

नारी का सम्मान

खुशबू जैन

तू नारी है, नारीत्व का अभिमान कर,
कोई करे न करे, तू खुद अपना सम्मान कर,
तू बर्फ-सी शीतल, अग्नि-सी उष्ण,
तू दाख-सी कोमल, वज्र-सी कठोर,
तू वात्सल्य की मूर्ति, स्नेह का आगार,
अपने परिवार को, स्नेह सदभाव से भर,
तू नारी है, नारीत्व का अभिमान कर।
तू मातृत्व रूप, बच्चे को है चलना सिखाती,
खुद सोती गीले में, उसको सूखे पर सुलाती,
तू संस्कार रूप, वात्सल्यमयी माता,
तू सहनशीलता को, हृदय में धर,
तू नारी है, नारीत्व का सम्मान कर।
तू दोनों घर का, मान रखती,
सबकी हर ज़रूरत का, ध्यान धरती,
सबसे पहले जगती, बाद में है सोती,
तू त्याग की मूरत, सबकी खुशियों का ध्यान धर,
तू नारी है, नारीत्व का अभिमान कर।
तू बन पत्नी, पति को अर्द्धनारीश्वर बनाती,
फेरों पर लिए, सातों वचन है निभाती,
दोस्त बन,
उसके सुख-दु:ख की साथ बन जाती,
कर सुधार उसकी आदतों में,
जीवन में नया परिवर्तन लाती,
समस्या कोई जीवन में आये,
सरस्वती बन सम्मान कर,
तू नारी है, नारीत्व का सम्मान कर।

-66, मधुवन विहार कॉलोनी, साईनाथ खिड़किया के बाहर, करौली (राज.)

10 जनवरी 2020
जिनवाणी 32
ISSN 2249-2011

शोधालेख

व्यवहारभाष्य में वर्णित चिकित्सा-विधान

डॉ. योगेश कुमार जैन

व्यवहारभाष्य की रचना के समय भारत में चारों वर्णों (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र) के लोग अपने-अपने कर्म के अनुसार समाज एवं राष्ट्र की सेवा में नियुक्त थे। सभी परस्पर में एक दूसरे के साथ सम्मान एवं आदर पूर्वक व्यवहार करते थे। उनमें परस्पर प्रेम एवं मैत्री का भाव दृष्टिकोण था। चारों आश्रम बाल, युवा, वानप्रस्थ एवं संन्यास विद्यमान थे। बचपन गुरुकुल में विद्याभ्यास में बीतता था, उच्चवर्ण के अधिकतर बच्चे शिक्षा ग्रहण कर यथायोग्य कार्यों में संलग्न हो जाते थे। युवा होते ही वे गृहस्थाश्रम में प्रवेश करते थे। यह अवस्था 25 से 30 वर्षों के मध्य की होती थी। बच्चों को योग्यतम समझकर प्रौढ़ावस्था में प्राय: सभी वानप्रस्थाश्रम में प्रवेश करते थे। धर्मध्यान पूर्वक अन्तिम संन्यास आश्रम पूर्ण करते थे।

उस समय नारी शिक्षा की भी समुचित व्यवस्था थी, किन्तु अधिकांश बच्चियाँ सुयोग्य गृहिणी बनने में विश्वास रखती थीं। उच्च कुलीन वर्ग की कतिपय नारियाँ ही विदुषी बनती थीं। संन्यास की ओर भी स्वकल्याण की भावना से प्रेरित नारियाँ दीक्षित हो जाती थी तथा साध्वी बन जाती थी। तत्कालीन समाज के लोगों का खानपान सामान्य था। शाकाहार पर बल था, किन्तु अभक्ष्य भक्षण भी होता था। खानपान से उत्पन्न व्याधियों के उपचार हेतु विशेष विधि से निर्मित औषधियों का प्रयोग होता था।

व्यवहारभाष्य में रोग एवं उपचार (आयुर्वेद एवं आरोग्य) का वर्णन इस प्रकार प्राप्त होता है। आचार्य प्रतिकूल भोजन का प्रभाव बतलाते हुये कहते हैं-

वाहिविरुद्धं भुंजति, देहविरुद्धं च आउरो कुणति।[1]

अर्थात् यदि कोई मुनि शरीर की स्थिति के प्रतिकूल भोजन करता है या व्याधि ग्रस्त मुनि व्याधि के विरुद्ध भोजन करता है, कोई ग्लान व्यक्ति शरीर के विरुद्ध कार्य करता है, कोई अपनी शक्ति का अतिक्रमण करके कार्य करता है या कोई अकालचर्या करता है तो वह स्व-विनाशी होता है। कहा भी है-**य: कश्चित् पुरुषो व्याधिग्रस्तो व्याधिविरुद्धं व्याधिप्रतिकोपकारि भुंक्ते, तथा य आतुरो ग्लानो ग्लानत्वभग्न: सन् देहविनाशकारि करोत्यनशनप्रत्याख्यानादि।**[2]

बद्धासन एवं विश्रमणा का प्रभाव बताते हुये आचार्य कहते हैं कि-

वातादी सट्ठाणं, वयंति बद्धासणस्स जे खुभिया।
खंदजओ तणुथिरया, बलं च अरिसादओ नेवं।।[3]

इसी गाथा की टीका लिखते हुये आचार्य मलयगिरि कहते हैं-"वातादयो वातपित्तश्लेष्माणो ये बद्धासनस्य सत: क्षुभिता: स्वस्थानात् प्रतिचलितास्ते स्थानं व्रजन्ति स्वस्थानं प्रतिपद्यन्ते, ते न विक्रियां भजन्तीति भाव:, तथा वाचनाप्रदानतो मार्गगमनतो वा य: खेद उपजात: तस्य जयोऽपगमो भवति, तथा तनो: शरीरस्य स्थिरता दाढर्यं भवति, न विशरारूभाव:, अत एव च बलं शरीरं तदुपष्टम्भतो वाचिकं मानसिकं च तथा एवं विश्रामणातो वातादीनां स्वस्थानगमने अर्श आदय: अर्शांसि वातिकपित्तष्लेश्मजानि आदिशब्दात्तदन्यरोगा न उपजायन्ते, एते विश्रामणायां गुणा:।"[4]

बद्धासन अर्थात् एक आसन में अधिक समय तक रहने से वात, पित्त और कफ संक्षुब्ध हो जाते हैं- अपने स्थान से चलित हो जाते हैं तथा विश्रमणा से वे पुन: अपने स्थान पर लौट आते हैं। यात्रा और वाचना देने से होने वाली थकान विश्राम से दूर हो जाती है। विश्रमणा अर्थात् विश्राम से शरीर की स्थिरता एवं दृढ़ता बढ़ती है।

शरीर का बल बढ़ता है तथा कोई रोग नहीं होते।

चिकित्सा काल में पथ्य-अपथ्य विचार

रत्नत्रय मार्ग के पथिक आचार्य, उपाध्याय और गीतार्थ अर्थात् साधु (बाल, तरुण और वृद्ध) यदि किसी कारणवश रोग ग्रस्त हो जायें तो उपचार कर्त्ता सेवाभावी मुनि को किस प्रकार का व्यवहार करना चाहिये, यह बताते हुये आचार्य कहते हैं-

तिविधे तेगिच्छम्मी, उज्जुग-वाउलण-साहुणा चेव।
पण्णवणमणिच्छंते, दिट्ठंतो भंडिपोतेहिं।।[5]

अर्थात् आचार्य, उपाध्याय और गीतार्थ (बाल, तरुण और वृद्ध) भिक्षु की चिकित्सा चल रही हो तो उस चिकित्सा में व्यापृत सेवाभावी साधु को रोग ग्रस्त साधुओं के लिए स्पष्ट बतलाना चाहिए कि यह पथ्य अथवा औषधि ऐषणीय है, कल्प्य है अथवा अनेषणीय है, अकल्प्य है। जो भिक्षु उस चिकित्साकाल में भी अनेषणीय-अकल्प्य ग्रहण करना नहीं चाहता तब सेवारत भिक्षु यह प्रज्ञापना करे कि ग्लान अवस्था में मुनि अकल्प्य का सेवन कर सकता है तथा रोगोपचार के उपरान्त प्रायश्चित्त करके विशोधि को प्राप्त कर सकता है। इसे समझाने के लिए आचार्य गन्त्री-शकट और पोत-नौका का दृष्टान्त देते हैं।

जा एगदेसे अदढा उ भंडी,
सीलप्पए सा तु करेति कज्जं।
जा दुब्बला संठविया वि संती,
न तं तु सीलंति विसण्णदारुं।।
जो एगदेसे अदढो उ पोतो,
सीलप्पए सो उ करेति कज्जं।
जो दुब्बलो संठवितो वि संतो,
न तं तु सीलंति विसण्णदारुं।।[6]

अर्थात् जिस प्रकार किसी गाड़ी का एक भाग अदृढ़ है, कमज़ोर है। उस भाग का परिशीलन-मरम्मत करने पर वह गाड़ी कार्य करने लग जाती है। जो गाड़ी सुसंस्थापित होने पर भी यदि दुर्बल है, कार्य करने में अक्षम है, उस जीर्ण काठवाली गाड़ी का परिशीलन नहीं किया जाता है तथा इसी प्रकार जिस नौका का एक भाग अदृढ़ है, मजबूत नहीं है, उसका परिशीलन अर्थात् मरम्मत करने पर यह नौका कार्यकर हो जाती है। जो नौका संस्थापित करने पर भी दुर्बल है, कार्य करने में अक्षम है तो उस विषण्ण काठवाली नौका का परिशीलन नहीं किया जा सकता है।

सार्थक चिकित्सा का उद्देश्य बतलाते हुये आचार्य कहते हैं-

काहं अछित्तिं अदुवा अधीतं,
तवोवधाणेसु य उज्जमिस्सं।
गणं व नीइए य सारविस्सं,
सालंबसेवी समुवेति मोक्खं।।[7]

अर्थात् जो ग्लान भिक्षु यह जानता है कि मैं स्वस्थ होकर अनेक व्यक्तियों को प्रव्रजित कर तीर्थ को अविच्छिन्न करूँगा अथवा द्वादशांग का सूत्र और अर्थ से अध्ययन करूँगा, तपोविधानों में उद्यम करूँगा तथा मैं नीतिपूर्वक शास्त्रोक्त नीति के अनुसार गण की सारणा करूँगा। जो इन आलम्बनों को आधार बनाकर चिकित्सा के लिए अकल्प्य की प्रतिसेवना करता है तो वह सालम्बसेवी मुनि मोक्ष को प्राप्त होता है।

वमन-विरेचन आदि चिकित्सा

वमण-विरेयणमादी, कक्खडकिरिया जधाउरे बलिते।
कीरति न दुब्बलम्मी, अह दिट्ठंतो तवे दुविधो।।[8]

इस गाथा पर आचार्य टीका लिखते हुये कहते हैं कि- ''यद्यपि द्वावपि पुरुषौ सदृशरोगाभिभूतौ तथापि तयोर्मध्ये य आतुरः शरीरेण बलवान् तस्मिन् बलिके यथा वमनविरेचनादिका कर्कशक्रिया क्रियते न तु दुर्बले, तस्मिन् यथा सहते तथा अकर्कशा क्रिया क्रियते।'' अर्थात् जो रोगी शरीर से बलवान है उसको वमन, विरेचन आदि कर्कश क्रियाएँ कराई जाती हैं और जो दुर्बल है, उसे ये क्रियाएँ नहीं कराई जाती।

निद्रा का अभाव-अजीर्ण रोग का कारण

व्यवहारभाष्य के टीकाकार ''जग्गणे अजिण्णदि''[10] इस पद की व्याख्या करते हुये अनिद्रा के फल पर विचार करते हैं कि-रात्रौ जागृतामजीर्णादिदोषसंभवः, तथा निद्राया अभावे च अजीर्णदोषः।[11] अर्थात् अतिसंकीर्ण वसति में जब अनेक मुनि विश्राम करते हैं तो स्थानाभाव के कारण पूर्ण निद्रा नहीं हो पाती तथा जागरण करना पड़ता है। इस प्रकार अनिद्रा में अजीर्ण आदि रोग की सम्भावना बन जाती है।

कंटकविद्ध की चिकित्सा के तीन प्रयोग

व्यवहारभाष्य के टीकाकार 'परिमद्दणं दंतमलादि पूरणं'[12] इस पद की व्याख्या करते हुये व्याध के उदाहरण के माध्यम से किसी कंटकविद्ध ग्लान/मुनि की चिकित्सा कैसे की जा सकती है, इसका वर्णन करते हैं कि-कण्टकादिवेधस्थानानामंगुष्ठादिना परिमर्दनं। तदननतरं दन्तमलादिना आदिशब्दात्कर्णमलादिपरिग्रहः पूरणं कण्टकादिवेधनाम्।[13] अर्थात् यदि किसी साधु को गमनकाल में पैर में काँटा लग जाता है तो वह उस काँटे को स्वयं अथवा साथी साधु की सहायता से निकालता है तथा कष्ट वाले स्थान पर अँगूठे से मर्दन करता है। यदि फिर भी कष्ट रहता है तो दाँतो और कानों से मल निकाल कर विद्ध स्थान को भरता है। इस प्रकार तीन प्रकार से कंटकविद्ध की चिकित्सा का विधान है।

गुरुव्याधि से पूर्व लघुव्याधि की चिकित्सा

जिस प्रकार किसी बड़े लक्ष्य की प्राप्ति का उपाय करते समय बीच-बीच में समागत छोटे-छोटे कार्यो को पहले करना अनिवार्य होता है तथा वर्तमान में जिस प्रकार चिकित्सक शल्यक्रिया करने से पूर्व रोगग्रस्त मरीज की पूर्ण जाँच करता है और यदि उसे कोई छोटी या कम पीड़ादायी बीमारी हो तो उसे पहले दूर करता है तदुपरान्त शल्य चिकित्सा करता है। उसी प्रकार पुरा काल में भी चिकित्सा की यही पद्धति प्रचलित थी, तथा इसे ही आचार्य यहाँ बतलाते हैं कि गुरुव्याधि से पूर्व लघुव्याधि का उपचार आवश्यक होता है। आचार्य कहते हैं कि-

वणकिरियाए जा होति, वावडा जर-धणुग्गहादीया।
काउमुवद्दवकिरियं, समेंति तो तं वणं वेज्जा।।[14]

इसी गाथा की टीका लिखते हुये आचार्य कहते हैं कि-व्रणक्रियायां प्रारब्धायामपान्तराले या भवति व्यापदुपद्रवः काप्यापदित्याह ज्वरधनुग्रहादिका ज्वरो वा समुत्पन्नो धनुग्रहो वा वातविशेषः आदि शब्दात्तदन्येषां गुरुकव्याधिविशेषाणां जीवितान्तकारिणां परिग्रहः। तस्य व्यापल्लक्षणस्य उपद्रवस्य क्रियां कृत्वा ततः पश्चात्तं व्रणं वैद्याः शमयन्ति।[15] अर्थात् जिस प्रकार चिकित्सक व्रणक्रिया प्रारम्भ करते हैं, परन्तु बीच में यदि ज्वर, धनुग्रह (वात विशेष) आदि का उपद्रव सामने आता है तो चिकित्सक पहले इन उपद्रवों को शान्त करने की क्रिया करते हैं और तदनन्तर मूल व्रण (व्याधि) का शमन करते हैं। जैसे वैद्यक्रिया में जिससे आरोग्य होता है उसको पहले करते हैं, शेष का शमन बाद में किया जाता है। रोग ग्रस्त व्याधिमान के उपचारोपरान्त शरीर में ऊर्जा एवं पटुता कैसे बढ़ती है। इसे बतलाते हुये वृत्तिकार कहते हैं कि-सर्पिः सन्मिश्रभोजनभुक्तित ऊर्जा, घृतेन पाटवम्।[16] अर्थात् ब्राह्मी आदि के प्रयोग से वाक्पटुता, शरीर जाड्यापहारी औषधियों के प्रयोग से शरीर की लघुता, दूध तथा प्रणीत आहार के भोजन से मेधा का विकास तथा धारणाबल बढ़ता है। घृत के प्रयोग से ऊर्जा तथा पटुता प्राप्त होती है।

यदि कोई साधु/ग्लान वात रोग से ग्रस्त हो तो उसे किस प्रकार का आहार दिया जाना चाहिए, इसे बताते हुये आचार्य कहते हैं कि-निद्धमहुरं च भत्तं, करीससेज्जा य नो जधा वातो।[17] यदि वातादिना धातुक्षोभोऽस्य संजात इति ज्ञायते तदा भक्तमपथ्य-परिहारेण स्निग्धं मधुरं च तस्मै दातव्यम्। शय्या च करीषमयी कर्तव्या, सा हि सोष्णा भवति। उष्णे च वातश्लेश्मापहारः।[18] अर्थात् यदि कोई ग्लान/मुनि वात रोग से पीड़ित है तो उसे स्निग्ध और मधुर आहार दिया

जाए। उसके लिए करीषमयी शय्या की जाए (करीषमयी से तात्पर्य उष्ण शय्या। इससे वात और श्लेष्म का अपहार होता है।) जिससे कि उसे वायु का प्रकोप न हो।

इसे स्पष्ट करते हुये आचार्य कहते हैं-

वाते अब्भंगसिणेहपज्जणादी तहा निवाते य।
सक्करखीरादीहि य, पित्ततिगिच्छा उ कातव्वा।।[19]

अर्थात् वायु के निमित्त से होने वाले उन्माद में शरीर पर तैल का मर्दन किया जाता है तथा स्नेह-घृतपान कराया जाता है तथा उसे निवातग्रह में बिठाया जाता है। पित्त के निमित्त से होने वाले उन्माद में शर्करा, क्षीर आदि से उसकी चिकित्सा करनी चाहिए।

अवधावन का कारण बताते हुये आचार्य कहते हैं-

मोहेण व रोगेण व, ओधाणं भेसयं पयत्तेणं।
धम्मकधानिमित्तेण, अणाधसाला गवेसणता।।[20]

अर्थात् अवधावन के दो कारण हैं- मोह और रोग। रोग से होने वाले प्रसंग में प्रयत्नपूर्वक भेषज देना चाहिए। वह औषधि धर्मकथा के द्वारा, निमित्तकथन के द्वारा उत्पादित करनी चाहिए। यदि ऐसा न हो सके तो अनाथशाला में औषधि की गवेषणा करनी चाहिए।

इस विधि को विशेष रूप से समझाते हुये आचार्य कहते हैं-

मोहेण पुव्वभणितं, रोगेण करेंतिमाए जतणाए।
आयरियकुलगणे वा, संघे व कमेण पुव्वुत्तं।।
छम्मासे आयरिओ, कुलं तु संवच्छराणि तिन्नि भवे।
संवच्छरं गणो खलु, जावज्जीवं भवे संघो।।
अधवा बितियादेसो, गुयवसभे भिक्खुमादि तेगिच्छं।
जहरिह बारसवासा, तिछक्कमासा असुद्धेणं।।
पयत्तेणोसधं से, करेंति सुद्धेण उग्गमादीहिं।
पणहाणीय अलंभे, धम्मकहाहिं निमित्तेहिं।।[21]

अर्थात् रोग से अवधावन का प्रसंग हो तो पूर्वोक्त विधि से औषध प्राप्त करे तथा इस कथ्यमान यतना से उसका निवारण करना होता है। यतना से तात्पर्य प्रासुक औषध-भेषज प्राप्त हो तो उससे और यदि प्राप्त न हो तो अप्रासुक सामग्री से भी उसकी चिकित्सा करनी होती है। चिकित्सा करवाने वाले का क्रम इस प्रकार है- आचार्य, कुल, गण और संघ। आचार्य छः माह पर्यन्त उस रोगी की चिकित्सा करवाए। यदि रोग शान्त न हो तो 'कुल' तीन वर्ष तक चिकित्सा का भार सम्भाले, फिर 'गण' एक सम्वत्सर तक चिकित्सा कराये। फिर भी यदि रोग उपशान्त न हो तो 'संघ' यावज्जीवन उसकी चिकित्सा कराए। यह विधि उन मुनियों के लिए है जो भक्तप्रत्याख्यान नहीं कर सकते। इस संदर्भ में दूसरा मत अथवा आदेश यह है कि उस रोगी मुनि की यावज्जीवन तक, वृषभ बारह वर्षों तक तथा भिक्षु अठारह महिनों तक चिकित्सा कराये। चिकित्सा में प्राथमिकता प्रासुक सामग्री को देनी चाहिए। रोगी की औषध-चिकित्सा प्रयत्न पूर्वक उद्गमादि दोषों से शुद्ध वस्तुजात से करनी चाहिए। शुद्ध की उपलब्धि न होने पर पाँच दिन रात की परिहानि से यावत् चार गुरुमास के प्रायश्चित्त वाले अशुद्ध उपाय से भी चिकित्सा करनी चाहिए। इससे भी यदि लाभ प्राप्त न हो तो धर्म कथा से अथवा निमित्त के प्रयोग से औषध की प्राप्ति करनी चाहिए। इसी विधि को बतलाते हुये आचार्य कहते हैं-

तह वि न लभे असुद्धं, बहिठिय सालाहिवाणुसट्ठादी।
नेच्छंते बहिदाणं, सलिंगविसणेण उड्डाहो।।
पणगादी जा गुरुणा, अलब्भमाणे बहिं तु पाउग्गे।
बहिठित सालगवेसण, तत्थ पभुस्साणसुट्ठादी।।
असती अच्चियलिंगे, पविसण पतिभाणवंत वसभाओ।
जदि पडिवत्तियकुसला, भावेंति नियल्लगत्तं से।।
अधव पडिवत्तिकुसला, तो तेण समं करेंति उल्लावं।
पभवंतो वि य सो वी, वसभे उ अणुत्तरीकुणति।।
तो भणति कलहमित्ता, तुब्भे वहेज्जह मे उदंतं ति।
ते वी य पडिसुणंती, एवं एगाय छम्मासा।।[22]

अर्थात् उपर्युक्त उपायों से अशुद्ध अकल्प

औषधि भी प्राप्त न हो तो अनाथशाला या आरोग्यशाला के बाहर रहकर औषध प्राप्त करे। यहाँ भी औषध के अलाभ की स्थिति में अनाथशाला आदि के स्वामी पर अनुशासन कर औषध की याचना करे। यदि वे अर्थात् अनाथशाला के स्वामी बहि:स्थित व्यक्तियों को औषधदान न करें, तो उनके पूजनीय स्वामी के वेश में प्रवेश कर औषध प्राप्त करें। क्योंकि स्वलिंग में प्रवेश करने पर प्रवचन का उकड्डाह होता है। तथा पंचकादि प्रायश्चित्त की परिहानि से यावत् चार गुरुमास प्रायश्चित्तार्ह प्रायोग्य औषध यदि बाहर प्राप्त न हो तो आरोग्य शाला के बाहर रहकर औषध की गवेषणा करे। फिर भी यदि प्राप्त न हो तो उस शाला के स्वामी पर अनुशासन (धर्मकथा) आदि का प्रयोग करे। इसी प्रकार यदि अन्य उपायों से औषध की प्राप्ति न हो तो अनाथालय के स्वामी के वेश में भीतर प्रवेश करे। प्रतिभावान् अर्थात् उत्तर देने में समर्थ मुनि अपने लिंग के स्वामी के पास जाकर बातचीत करते हैं और अन्यवेश में प्रविष्ट मुनि से भी इस प्रकार वार्तालाप करते हैं, जिससे शाला का स्वामी आकृष्ट हो जाये अथवा वे प्रतिपत्तिकुशल मुनि शालास्वामी के साथ परस्पर उल्लास करते हैं और गृहीतलिंग वाला मुनि भी उसी प्रकार उसको प्रभावित करता है। यदा शाला स्वामी उनसे प्रभावित हो जाता है तो वह निवेदन करता है कि आप मेरे कलह मित्र हैं। मेरे कथन को, प्रार्थना को आप वहन करें। तथा वृषभ उसकी प्रार्थना को स्वीकार कर उससे आत्मीयता का व्यवहार बनाते हैं और इस प्रकार औषध प्राप्ति सहज हो जाती है। इस प्रकार अनाथशाला से छ: माह तक चिकित्सा हो सकती है।[23]

इस विधि का उपसंहार करते हुये आचार्य कहते हैं कि यदि फिर भी रोग से मुक्ति न मिले तो रोगी को भक्तविवेक अर्थात् अनशन करना उचित होता है।

पित्त की चिकित्सा विधि

वाते अब्भंगसिणेहपज्जाणादि तहा निवाते य। सक्करखीरादीहि य, पित्ततिगिच्छा तु कातव्वा।।[24]

अर्थात् आचार्य ने इस ग्रन्थ में उन्मादों का विवेचन करते हुये उनके दो प्रकार बताये हैं-यक्षावेश और मोहनीय। यक्षावेश से तात्पर्य उपसर्ग से है तथा मोहनीय से तात्पर्य यथा किसी रूपांगी को देखकर अथवा पित्तमूर्च्छा से होने वाला उन्माद। पित्तमूर्छा में जो उन्माद होता है वह वायु निमित्तक भी कहा जाता है। वायु के निमित्त से होने वाले उन्माद में शरीर पर तेल का मर्दन किया जाता है तथा स्नेह-घृतपान कराया जाता है तथा उसे निवात ग्रह में बिठाया जाता है। पित्त के निमित्त से होने वाले उन्माद में शर्करा, क्षीर आदि से उसकी चिकित्सा करनी चाहिए।

यहाँ विशेष यह कि मोह के उदय से अथवा पित्त के कारण जो उपसर्ग होता है उसे आत्मसञ्चेतित अर्थात् आत्मा के द्वारा आत्मा को किया हुआ उपसर्ग कहा गया है।[25]

इस प्रकार इस ग्रन्थ में विभिन्न रोगों की उत्पत्ति के कारण एवं निदान के साथ-साथ तथागत मुनि के प्रायश्चित्त का विधान भी वर्णित है। यथा- धातुक्षोभ से मृत्यु[26] प्रचुर मानी न पीने से अजीर्णता,[27] प्रतिकूल भोजन से रोग,[28] मन्दाग्नि में प्रचुर भोजन से रोगोत्पत्ति,[29] कुष्ठरोग एवं उसके प्रकार,[30] संक्रामक रोग[31] तथा रोग के साथ-साथ कुछ सावधानियों[32] का वर्णन व्यवहारभाष्य ग्रन्थ में किया गया है।

सन्दर्भ

1. व्यवहार भाष्य, गाथा 69।
2. व्यवहारभाष्य, गाथा 69, टी. प. 29।
3. व्यवहार भाष्य, गाथा 93।
4. व्यवहार भाष्य, गाथा 93, टी. प. 34।
5. व्यवहार भाष्य, गाथा 178।
6. व्यवहार भाष्य, गाथा 180-181।
7. व्यवहार भाष्य, गाथा 183।
8. व्यवहार भाष्य, गाथा 544।
9. व्यवहार भाष्य, गाथा 544, टी. प. 29।
10. व्यवहार भाष्य, गाथा 647।
11. व्यवहार भाष्य, गाथा 647, टी. प. 59।

12. व्यवहार भाष्य, गाथा 663।
13. व्यवहार भाष्य, गाथा 663, टी. प. 63।
14. व्यवहार भाष्य, गाथा 700।
15. व्यवहार भाष्य, गाथा 700, टी. प. 72।
16. व्यवहार भाष्य, गाथा 757, टी. प. 84।
17. व्यवहार भाष्य, गाथा 1098।
18. व्यवहार भाष्य, गाथा 1098, टी. प. 32।
19. व्यवहार भाष्य, गाथा 1152।
20. व्यवहार भाष्य, गाथा 2019।
21. व्यवहार भाष्य, गाथा 2020-2023।
22. व्यवहार भाष्य, गाथा 2024-2028।
23. छम्मासा छम्मासा, बितिए ततियाय एव सालाए।
काऊ अट्ठारस ऊ, अपउण ताहे विवेगो उ।। व्यवहारभाष्य, गाथा 2029।
24. व्यवहार भाष्य, गाथा 1152।
25. मोहेण पित्ततो वा, आयासंचेयओ समक्खातो।
एसो उ उवस्सग्गो, इमो तु अण्णो परसमुत्थो।। व्यवहारभाष्य, गाथा 1153।
26. धातुक्खोभेण वा धुवं मरणं। व्यवहारभाष्य, गाथा 1991।
27. खद्धादियणगिलाणे। व्यवहारभाष्य, गाथा 2533।
28. अकारकं चेद् द्रव्यं लभते तस्य भोजने ग्लानत्वम्। व्यवहारभाष्य, गाथा 2573, टी. प. 23।
29. मन्दाग्निः प्रचुरं भुङ्क्ते ततो ग्लानत्वादिदोशसंभवः। व्यवहारभाष्य, गाथा 2773।
30. संदंतमसंदंतं, अस्संदण चित्त मंडल पसुत्ती।
किमिपूयं लसिगा वा, पस्संदति तत्थिमा जतणा।। व्यवहारभाष्य, गाथा 2783।
31. संदंतो वक्खारो, अंतो बाहिं च सारणा तिण्णि। व्यवहारभाष्य, गाथा 2784।
32. पसवणफासलाला पस्सेए.....। व्यवहारभाष्य, गाथा 2788।

-सहायक आचार्य,
जैनविद्या एवं तुलनात्मक धर्म तथा दर्शन विभाग,
जैन विश्वभारती संस्थान, लाडनूँ

अन्यत्व भावना

श्रीमती अभिलाषा हीरावत

आत्मा अनात्मा का मेल है अनादि से
विवेक बुद्धि से पृथक्करण करें, मंगल आदि से,
आत्मा धारण करे, वह देह भी जब भिन्न है,
तो अन्य की क्या बात करें जो भिन्न से भी भिन्न है,
माता-पिता, स्त्री, पुत्र
परिजन का अल्पकालिक सम्बन्ध
सब सम्बन्धों का निमित्त कारण बनता है कर्मबन्ध,
देह आत्मा का सम्बन्ध चिर स्थायी नहीं
वियोगी से ममत्व का तादात्म्य, सुखदायी नहीं,
जितनी गहरी आसक्ति उतना गहरा दुःख आएगा
मैं और मेरा करने वाला, दुःख सन्ताप ही पाएगा।।
शरीर जीवात्म नहीं, पुद्गल जड़ रूप है।
आत्मा कभी जड़ नहीं शुद्ध चैतन्य स्वरूप है।।
कर्मों के विपाक से पुण्य पाप
के योग से आती है भिन्नता
अज्ञानी माना करते हैं देह आत्मा की अभिन्नता
पुद्गल विकार को आत्म विकार
समझे बहिर्-आत्मा
आत्मा स्वरूपतः, ज्योतिर्मय पूर्ण निश्चल निर्मल है
नित्य शाश्वत सनातन अविचल है
मोह मिथ्यात्व में जिसकी चेतना का हो गया खात्मा
अनात्मीय को आत्मीय माने वो मूढ़ है बहिरात्मा,
अन्य से आत्म भाव हटाकर,
स्व में स्थित ही अन्तरात्मा
विकल्प से अतीत अविनाशी,
अनन्त सुखवासी है परमात्मा
जगत् के समस्त संयोग, वियोग के ही सहचर हैं,
एकत्व आत्मस्वरूप को अपनाना ही श्रेयस्कर है,
'गजसुकुमाल' ने अप्रमत्त हो
'अन्यत्व भावना' भायी
अनुप्रेक्षा से आचरित कर त्वरित मुक्ति है पायी
'अन्यत्व भावना' की अनुप्रेक्षा कर ले रे भवी प्राणी!
दिखला रही मुक्ति पथ हमको 'मुदित' जिनवाणी।

-1101, वुड साइड, जी साउथ गोरखले रोड,
प्रभादेवी, मुम्बई-400025 (महाराष्ट्र) 9892417640

10 जनवरी 2020
जिनवाणी 38
ISSN 2249-2011

दीक्षा-शताब्दी

एकता और समता के प्रोत्साहक आचार्य श्री हस्ती

डॉ. दिलीप धींग

मैं जब छोटा था तब एक बार विद्यालय में एक अध्यापक ने कहा था कि जैनधर्म के कठोर नियमों की वजह से इस धर्म का अधिक प्रचार-प्रसार नहीं हुआ। लेकिन जैसे-जैसे मुझे जैनधर्म, समाज और इसकी अनुपम विशेषताओं के बारे में जानने को मिला तो नियमों में कठोरता का कारण पीछे खिसक गया। जैन धर्म के विस्तार में बाधक पहला कारण शायद जो समझ में आया वह है-जैनों की आपसी फूट। यूँ जैनी सबके साथ बड़े ही शान्तिप्रिय, अनुशासित, उदार और सहिष्णु होते हैं। लेकिन धार्मिक मामलों में उनके आपसी झगड़े व्यथित करते हैं। किसी भी धर्म और संस्कृति के विकास में ऐसी स्थितियाँ कई तरह के अवरोध खड़े कर देती हैं।

पिछली सदी में भी कुछ धर्माचार्य जाने-अनजाने असहिष्णुता की आग को हवा दे रहे थे। जैन दिवाकर चौथमलजी, आचार्य आनन्दऋषिजी, आचार्य हस्तीमलजी, उपाध्याय अमरमुनिजी जैसे कई प्रभावक मुनिराज स्थिति की इस गम्भीरता को गहराई से समझते थे। उन्होंने समता, सद्भाव, गुणानुरागिता, समन्वयशीलता, मैत्री जैसे सद्गुणों को अपने जीवन में सिद्धान्त और व्यवहार दोनों स्तरों पर जिया। उनके व्यक्तित्व की ऐसी अनेक विशिष्टताएँ उन्हें एकता के पक्षधर सन्तों की अग्रिम पंक्ति में खड़ा कर देती है। यहाँ हम आचार्य हस्ती के एकता विषयक विचार और व्यवहार पर विमर्श कर रहे हैं।

आज से नौ दशक पूर्व शोभाचार्य के चरणों में आचार्य हस्ती ने दीक्षा ग्रहण की। वह दीक्षा-समारोह एकता का एक आदर्श उदाहरण था। उनके दीक्षा-समारोह में आचार्य मन्नालालजी और जैन दिवाकर मुनि चौथमलजी की उपस्थिति से यह अनुमान लगाया जा सकता है कि जिस गुरु-परम्परा में आचार्य हस्ती की दीक्षा हुई, उसमें उदारता को हमेशा स्थान दिया जाता है। जैन दिवाकर चौथमलजी महाराज का तो पूरा जीवन ही *अहिंसा और एकता को समर्पित था। वे मानवीय एकता* और जैन एकता दोनों के जीवन्त प्रतिमान थे और उन्हें 'एकता के अग्रदूत' भी कहा जाता है। अपनी दीक्षा के समय मुनि हस्तीमलजी ने अपने गुरु के आशीष के साथ ही ऐसे एकता के अग्रदूत युगान्तरकारी श्रमणवर का भी आशीष पाया था। यह संयोग बहुत ही प्रेरक एवं उदाहरणीय है कि आचार्य हस्ती का जीवन भी एकता और समता को समर्पित रहा।

गुणानुरागिता

आचार्य हस्ती ने कहा था-''मानव जितना गुणग्राही और सत्य का आदर करने वाला होगा, उतना ही ऐक्य निर्माण-कार्य सरल और स्थायी हो सकेगा।''[1] उनके कथन के अनुरूप ही उनके जीवन में सर्वत्र गुणानुरागिता दृष्टिगोचर होती है। जिन व्यक्तियों और मनीषियों से उन्होंने कोई प्रेरणा ली या उन्हें प्रेरणा प्राप्त हुई तो उनके प्रति आचार्य हस्ती ने पन्थ, पद, वय, दीक्षा-पर्याय आदि का भेद किये बगैर कृतज्ञता व्यक्त करने में कोई संकोच नहीं किया। इसी प्रकार आचार्य हस्ती किसी में कोई विशिष्ट गुण देखते तो वे उसके प्रति सहज प्रमोदभाव व्यक्त करते थे। इससे गुणानुरागिता के साथ-साथ उनकी निरहंकारिता का सद्गुण भी प्रकट होता है। दस वर्ष के मुनि जीवन के बाद युवावस्था के शुभारम्भ में मुनि हस्ती को आचार्य पद पर आरूढ़ कर दिया गया था। आचार्य बनने के बाद भी उनकी वैसी ही विनम्रता और मिलनसारिता बनी रही।

आचार्य हस्ती ने आचार्य श्री मन्नालालजी महाराज के साथ मन्दसौर में छेद-सूत्रों की वाचना ली। आचार्य श्री मन्नालालजी के प्रति प्रमोदभाव व्यक्त

करते हुए आचार्य हस्ती ने कहा-''मन्दसौर में आपके साथ रहने का अवसर मिला। आपका बहुमानपूर्वक वात्सल्य कभी भुलाया नहीं जा सकता। आपके साथ छेदसूत्र की वाचना और प्राचीन सन्तों के जीवन के खट्टे-मीठे अनुभव सुने। श्रमण-व्यवहार में नित्य उपयोगी कई नवीन बातें सीखीं।''[2] इसी प्रकार श्रमण संघ के प्रथम आचार्य श्री आत्मारामजी से आपने ध्यान की अमर प्रेरणा ग्रहण की, तो वे उनके प्रति हमेशा कृतज्ञता का भाव रखते थे।[3] आचार्य श्री जवाहरलालजी की प्रवचन कला से प्रभावित होकर उन्होंने कहा था-''आपके विचारों एवं प्रवचन कला से मन अत्यधिक प्रभावित हुआ। आप जो कुछ भी कहते थे, बहुत सरल एवं मिठास भरे शब्दों में कहते थे और हृदयपटल पर उसका चित्र खींच देते थे। आपके अनुभवपूर्ण विचारों से बड़ी प्रेरणा मिली, बल प्राप्त हुआ।''[4]

जो गुणानुरागी होता है, वह स्वयं गुणों का पुञ्ज बन जाता है। आचार्य हस्ती के गुण और विशेषताएँ सबको आकर्षित करती थीं। फलस्वरूप अनेक सम्प्रदायों के आचार्यों और सन्तों ने उनके व्यक्तित्व की विशेषताओं को समय-समय पर रेखांकित किया। श्रमण संघ के प्रथम आचार्य आत्मारामजी ने उन्हें 'पुरिसवरगन्धहत्थी' सम्बोधन दिया था। बाद में उनके इस सम्बोधन के आधार पर ही आचार्य हस्ती के चर्चित जीवनचरित का नामकरण 'नमो पुरिसवरगंधहत्थीणं' किया गया। आगम टीकाकार आचार्य श्री घासीलालजी महाराज ने उन्हें 'नवकोटि मारवाड़ का सरताज' कहा तथा प्रशस्ति में 'आचार्य श्री हस्तीमल्ल गुणाष्टकम्' की रचना की।

मैत्रीभावना

आचार्य आनन्दऋषि, बहुश्रुत श्री समर्थमलजी म.सा, आचार्य श्री पद्मसागरजी, आचार्य श्री महाप्रज्ञजी, आचार्य श्री नानालालजी, आचार्य श्री देवेन्द्रमुनिजी, मरुधरकेसरी मुनि मिश्रीमलजी, प्रवर्तक मुनि श्री पन्नालालजी आदि विभिन्न सम्प्रदायों के श्रमणवरों के साथ उनके मैत्री सम्बन्ध थे। जैन धर्म की अन्य सम्प्रदायों के आचार्यों और सन्तों के प्रति आचार्य हस्ती की गुणदृष्टि और .तज्ञता के फलस्वरूप पारस्परिक मैत्री सद्भाव की अभिवृद्धि हुई। उनके सबसे और सबके उनसे मधुर और मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध रहे। न सिर्फ जैन सन्तों, अपितु जैनेतर सन्तों के प्रति भी आचार्य श्री हस्ती मैत्रीभाव रखते थे। उनके एक गीत की पंक्ति है-''करना सबसे प्यार है, यही धर्म का सार है।''[5]

सन्तों का जीवन तो प्राणिमात्र के प्रति मैत्रीभाव से भरा रहता है। लेकिन देखा जाता है कि सबसे मैत्री की बात करने वाले अपनों के प्रति ही मैत्रीभाव नहीं रख पाते हैं। आचार्य श्री हस्ती एक पहुँचे हुए आध्यात्मिक सत्पुरुष थे। उन्होंने सहज ही सबसे मैत्रीभाव रखा। वे मैत्री के उपासक और मैत्री के उपदेशक थे। इस प्रकार आचार्य श्री हस्ती की गुणग्राहिता, मैत्रीभावना, कृतज्ञता, सरलता, समता और निरहंकारिता से एकता की राह प्रशस्त हुई।

विद्वानों के संरक्षक

आचार्य हस्ती का गुणानुराग सिर्फ सन्तों के प्रति ही नहीं, गृहस्थों के प्रति भी था। कुछ अवसर ऐसे आए जब उन्होंने आगमज्ञ श्रावकों से आगमिक धारणाएँ ग्रहण कीं। यह उनकी सरलता और हृदय की विशालता का प्रमाण है। आचार्यश्री के व्यक्तित्व निर्माण में ब्राह्मण पण्डित दु:खमोचन झा का काफी योगदान रहा। आचार्यश्री के शब्दों में-''पण्डितजी यद्यपि गृहस्थ थे, फिर भी साधुवत् सरल, सुशील, सन्तोषी एवं त्याग-तप के रसिक थे। जीवन की आवश्यकताओं के बाद बचा हुआ उनका प्रत्येक क्षण हमारे लिए उत्सर्ग रहता था।''[6]

1978 में इन्दौर में उनकी प्रेरणा से स्थापित अखिल भारतीय जैन विद्वत् परिषद् उनकी दूरदृष्टि, गुणदृष्टि और श्रुतज्ञान के प्रति उनके अगाध प्रेम का प्रमाण है। सन्तों के समक्ष दूसरों को बोलने के अवसर कम ही मिलते हैं। आचार्य श्री हस्ती विद्वानों का बहुत आदर करते थे, उन्हें प्रेरित और प्रोत्साहित करते थे, उन्हें मञ्च और अवसर प्रदान करते थे तथा उनकी बातों

को ध्यानपूर्वक सुनते थे। सैद्धान्तिक दृष्टि से सहमति-असहमति से परे वे सबको सुनते थे। उनकी भावना थी कि विद्वान् आधुनिक परिप्रेक्ष्य में जैन तत्त्वज्ञान और सिद्धान्त प्रस्तुत करें तथा उसका उपयोग मानव-कल्याण और विश्व शान्ति में करें।

सहयोग

जब कभी अवसर आया, अन्य परम्पराओं के साधु-साध्वियों को उन्होंने या उनके नेश्रायवर्ती सन्तों ने सहयोग किया। इसी प्रकार आवश्यक होने पर अन्य सम्प्रदाय के सन्तों से उन्हें या उनकी निश्रा के सन्त-सतियों को यदि साध्वोचित सहयोग प्राप्त होता तो आचार्य हस्ती उनके प्रति हार्दिक कृतज्ञता व्यक्त करते थे। आचार्य श्री हस्ती कहते थे कि दीक्षा, संथारे आदि प्रसंगों पर आने-जाने, सहयोग करने में बिल्कुल संकोच नहीं करना चाहिये। उनकी विहार यात्राओं में मिलने वाले सैकड़ों सन्त-सतियों से वे बड़े ही माधुर्य और मैत्रीभाव से मिलते थे। जब सन्त इस तरह पारस्परिक सहयोग का व्यवहार करते हैं तो श्रावक-श्राविकाओं पर इसका गहरा अनुकूल असर होता है। इतिहास-लेखन के गुरुतर कार्य में भी आचार्यश्री की सहयोग भावना उजागर होती है।

सहिष्णुता

ङ्गनमो पुरिसवरगंधहत्थीणं' में डॉ. धर्मचन्द जैन लिखते हैं-''एकता तभी रह सकती है, जब परस्पर सहिष्णुता का भाव हो।'' इस बात के समर्थन में वे आचार्य हस्ती का कथन उद्धृत करते हैं-''आज विविध परम्परा के लोग जब एक जगह पर धर्मक्रिया करने बैठते हैं, तब भिन्न-भिन्न प्रकार की रीति-नीति देखकर परस्पर टकरा जाते हैं। वाद-विवाद में पड़ जाते हैं, जबकि धार्मिक मञ्च सहिष्णुता का पाठ पढ़ाने का अग्रिम स्थान है। लोकसभा में विभिन्न प्रकार की वेशभूषा, साज-सज्जा, बोलचाल और रीति-नीति वाले व्यक्ति एक साथ बैठ सकते हैं, तो फिर क्या लम्बी मुँहपत्ती और चौड़ी मुँहपत्ती वाले प्रेमपूर्वक एकसाथ नहीं बैठ सकते?''[7]

सम्प्रदाय एक व्यवस्था है। सम्प्रदाय बुरी नहीं, सम्प्रदायवाद बुरा है। आचार्य श्री हस्ती इस बात को इस तरह कहते हैं-''जिस प्रकार सेना की अलग-अलग बटालियनों की अलग-अलग व्यवस्था होती है, लेकिन सबका कार्य देश की रक्षा करना होता है। इसी प्रकार अलग-अलग सम्प्रदायें व्यवस्था मात्र हैं। सबका कार्य जिनशासन की रक्षा एवं गौरव की अभिवृद्धि करना है।'' इसी प्रकार आचार्य श्री हस्ती कहते हैं-''अहिंसक समाज का तो यह संकल्प होना चाहिये कि कभी भाई-भाई में आपस में टकराव हो जाए तो भीतर ही निपट लेंगे। इस प्रकार चलेंगे तो बहुत प्रमोद होगा और हम समझेंगे कि महावीर की वाणी ने आप पर असर किया है। यही महावीर की वाणी का सार है।''[8] एक अन्य जगह पर आचार्य श्री हस्ती धर्मस्थान के लिए झगड़ा नहीं करने का सुझाव देते हैं। समाज बड़ा होता है। किसी बात को लेकर कभी कोई विवाद हो सकता है। ऐसे विवादों को प्रचारित नहीं करना चाहिये। इस सम्बन्ध में आचार्य श्री हस्ती महत्त्वपूर्ण सुझाव देते हैं कि पर्चे निकालकर समाज का वातावरण दूषित करना उचित नहीं है।

विक्रम सम्वत् 2017 की महावीर जयन्ती पर आचार्य श्री हस्ती ने उपयोगी तेरह नियम बनाये, जिसे उस समय 108 व्यक्तियों ने ग्रहण किया था। उन 13 नियमों में छठा नियम है-साम्प्रदायिक झगड़ों से दूर रहेंगे, हो सके तो उन्हें शान्त करने, उनका समाधान करने का प्रयत्न करेंगे। सातवाँ नियम है-धार्मिक परिचय में अपने आपको जैन कहेंगे। अन्य नियम भी सामाजिक और मानवीय एकता की राह प्रशस्त करने वाले हैं। इस तरह ये तेरह नियम आचार्य श्री हस्ती के एकता तथा समन्वयशीलता के भाव को पुष्ट करते हैं।

साम्प्रदायिक वैमनस्य और नुक्ताचीनी पर चोट करते हुए आचार्य हस्ती 'जैन धर्म का मौलिक इतिहास' के भाग चार में लिखते हैं-''जैन इतिहास में खण्डन-मण्डनात्मक ग्रन्थों के पर्यालोचन से ऐसा प्रतीत होता है

कि अपने गच्छ के व्यामोह में वशीभूत हो प्राय: सभी गच्छों के साधुओं ने केवल अपने गच्छ की मान्यताओं को ही श्रेष्ठ एवं आगमानुसारी तथा अन्य गच्छों की मान्यताओं को गलत सिद्ध करने के प्रयास में ही अपने मुनि जीवन का बहुत बड़ा भाग व्यर्थ ही व्यतीत कर दिया। इन सबका घातक परिणाम यह हुआ कि भगवान महावीर का विश्वकल्याणकारी धर्मसंघ ऐसे विभिन्न गच्छों की बाड़ेबन्दी में विभक्त हो गया, जो एक-दूसरे को अपना प्रतिद्वन्द्वी अथवा शत्रु तक समझने लग गये थे!''[9]

डॉ. धर्मचन्द जैन लिखते हैं-''दूसरों की निन्दा-विकथा का श्रवण करने में न तो आचार्य हस्ती के कर्ण ही तत्पर होते थे, न मन में ऐसे वचनों का कोई स्थान होता था।''[10] अन्य सम्प्रदायों के प्रति कषायभाव रखने जैसी बातें उनसे कोसों दूर थीं। आचार्यश्री हर घटना का बारीकी से विश्लेषण करते थे। समय की नज़ाकत को समझते हुए आचार्य हस्ती कहते थे कि सम्प्रदाय-परिवर्तन की प्रेरणा प्रेम में बाधक है तथा विभिन्न सम्प्रदायों में प्रेम सम्बन्ध बढ़ाया जाना चाहिये। वे अपने व्याख्यानों में कहा करते थे-'कैंची बनकर नहीं, सुई बनकर रहो।' वे अपने काव्य में भी एकता का सन्देश देते थे। 'कौमी हमदर्दी' गीत में आचार्य हस्ती लिखते हैं-

जैनियों! कौमी हमीयत आप अब तो सीख लो।
रसभरी प्याली मुहब्बत की पिलाना सीख लो।
जातियाँ करती तरक्की देश में सब देख लो।
धर्मबन्धु से मुहब्बत का सबक अब सीख लो।[11]

सामाजिक एकता

धार्मिक और साम्प्रदायिक एकता के साथ-साथ आचार्य श्री हस्ती ने सामाजिक एकता की दिशा में भी अनुकरणीय और अविस्मरणीय कार्य किये। 'नमो पुरिसवरगंधहत्थीणं' में लिखा है कि सिंवाची पट्टी के 144 गाँवों में व्याप्त मनमुटाव को देखकर उनका दिल दहल उठा था। उन्होंने मन ही मन इस झगड़े को समाप्त करवाने का संकल्प किया और संकल्प के रूप में झगड़ा मिटने तक दुग्धसेवन का त्याग कर दिया। आचार्यश्री पहले से ही ऊनोदरी तप के साधक थे। इस संकल्प के कारण समस्या को समाप्त करने की दिशा में उनका आत्मबल प्रबलतर हो गया। आचार्यश्री के तपोमय संकल्प का सुपरिणाम हुआ। विक्रम सम्वत् 2022 में बालोतरा चातुर्मास में वह दीर्घकालीन विवाद एवं मनोमालिन्य प्रेम-मैत्री में परिणत हो गया। इसी प्रकार लासलगाँव (1999), फतहगढ़ (2013), पाली (2018), किशनगढ़ (2019) आदि बीसियों ग्राम-नगरों में उन्होंने कलह-कलुष धोकर प्रेम एवं मैत्री की सरिता प्रवाहित की।[12] सामाजिक कुरीतियों के निवारण में आचार्य हस्ती की प्रेरणाएँ सामाजिक एकता और समता की राह प्रशस्त करती हैं। इसी प्रकार साधर्मी वात्सल्य की प्रेरणाओं में भी सामाजिक एकता और समता की मंगल भावनाएँ छिपी हुई हैं। पद्मभूषण श्री देवेन्द्रराज मेहता ने ठीक ही लिखा- ''उनकी दृष्टि में राजा-प्रजा, अमीर-गरीब, वर्ण-जाति का कोई भेद नहीं था।''

इतिहास से प्रेरणा

चार खण्डों में प्रकाशित 'जैन धर्म का मौलिक इतिहास' आचार्य हस्ती का अमर अवदान है। इतिहास लेखन का यह कार्य उनकी एकता और गुणग्राहिता का दस्तावेज़ है। आचार्य हस्ती स्वयं के प्रति भी निष्पक्ष थे और दूसरों के प्रति भी। इतिहास लेखन में उन्होंने निष्पक्षता और प्रमाणपुरस्सरता को आधार बनाया। पद्मभूषण पण्डित दलसुख मालवणिया के शब्दों में-''जैन धर्म का यह तटस्थ और प्रामाणिक इतिहास है।'' शोध पत्रिका 'श्रमण' के अनुसार-''ऐतिहासिक तथ्यों की गवेषणा के लिए ब्राह्मण और बौद्ध साहित्य का भी उपयोग किया गया है।''

जैनधर्म का मौलिक इतिहास में आचार्य हस्ती के अनेक उद्धरण ऐसे हैं, जिनमें उनकी पारस्परिक एकता की भावना खुलकर अभिव्यक्त हुई है। जिनमें से दो घटनाओं की चर्चा यहाँ करना चाहूँगा। इतिहास के

तृतीय भाग में आठवीं सदी की एक घटना है, कन्नौज नरेश यशोवर्मन और कश्मीर नरेश ललितादित्य (मुक्तपीड़) के बीच देश-हित के लिए सन्धि-पत्र तैयार होता है। लेकिन ''सन्धिपत्र में पहले किसका नाम'' इस बात को लेकर दोनों के बीच सन्धि होते-होते रह गई। इस पर आचार्य हस्ती कहते हैं-''यह भारत के लिए बड़ी दुर्भाग्यपूर्ण घटना थी कि दो राजाओं के थोथे अहम् और उन राजाओं के मन्त्रियों की अदूरदर्शिता के कारण भारत की जो सेनाएँ आने वाले दुर्दिनों में देश की रक्षा के लिए काम आतीं, वे परस्पर ही लड़-भिड़ कर नष्ट या अशक्त हो गईं।''

वीर निर्वाण की सोलहवीं (विक्रम की 11वीं) सदी में महमूद गजनवी द्वारा किए गए भीषणतम आक्रमण में 50 हजार से अधिक भारतवासियों को अपने प्राणों की बलि देनी पड़ी थी और 20 लाख दीनार से अधिक मूल्य का माल गजनवी के हाथ लगा, जिसे वह गजनी ले गया। सोने की चिड़िया कहलाने वाले भारत की ऐसी दुर्दशा क्यों हुई? इस प्रश्न के उत्तर में इतिहासकारों द्वारा अनेक कारण सुझाए गए। इतिहास के चौथे भाग में आचार्य हस्ती मुख्य कारण बताते हैं- ''सह नाववतु, सह नौ भुनक्तु, सह नौ वीर्यं करवावहै, तेजस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहै'' ऋषियों की मन्त्रतुल्य इस शिक्षा का विस्मरण।[13] अर्थात् हम मिलकर साथ-साथ उठें-बैठें, साथ-साथ समान रूप से खाएँ-पीएँ, हम मिलकर एक साथ पौरुषपूर्ण परिश्रम करें, हमारा सर्वांगीण अध्ययन तेजस्वितापूर्ण अर्थात् उत्कृष्ट कोटि का हो और हम परस्पर कभी एक दूसरे से द्वेष न करें। इस मूल मन्त्र को भारतवासियों ने भुला दिया। इस सूत्र की पाँच शिक्षाएँ हैं-

1. **सह नाववतु**-हम एक ही दृढ़ संकल्प के साथ एक जुट हो प्रशस्त पुण्य-पथ पर साथ-साथ चलें।
2. **सह नौ भुनक्तु**-मिल-बाँट कर खाएँ-पीएँ, उपभोग करें।
3. **सह नौ वीर्यं करवावहै** -हम मिलकर एकजुट हो सर्वांगीण अभ्युदय तथा समष्टि के कल्याण के लिए पौरुष प्रकट करें।
4. **तेजस्वि नावधीतमस्तु**-हमारा सर्वांगीण अध्ययन तेजस्वितापूर्ण हो, जिससे कि हमारी तेजस्विता उत्तरोत्तर बढ़ती रहे।
5. **मा विद्विषावहै**-हम एक दूसरे को अपना बन्धु समझकर परस्पर कभी द्वेष न करें।

आचार्य हस्ती इस सूत्र की प्रत्येक शिक्षा की विस्तृत चर्चा करते हुए प्रेरणा लेने का अनुरोध करते हैं। उपनिषद् साहित्य के इस सूत्र के माध्यम से आचार्यश्री राष्ट्रीय एकता की शिक्षा भी देते हैं।

समतामयी दृष्टि

आचार्य हस्ती की संघ-परम्परा और विरासत में एकता के अनेक उदाहरण मिलते हैं। उनका संघ रत्नसंघ के नाम से अभिहित किया जाता है। इस संघ की अनेक विशेषताओं में एक विशेषता एकता का दृष्टिकोण भी है। इस संघ के अन्तर्गत तथा स्वतन्त्र रूप से अनेक संस्थाएँ, प्रकल्प और गतिविधियाँ चल रही हैं, जो आचार्य हस्ती के विराट् व्यक्तित्व, कृतित्व और उपदेशों से अनुप्रेरित हैं। हम 'जिनवाणी' (हिन्दी मासिक) का ही उदाहरण लें। किसी धर्मसंघ की पत्रिका के रूप में प्रकाशित अन्य धार्मिक पत्रिकाओं की तुलना में जिनवाणी का स्वरूप अपनी स्तरीयता और अन्य विशिष्टताओं के साथ एकता का सन्देश भी देता है। स्पष्ट है कि आचार्य हस्ती ने सबको एक सुलझी हुई और समतामयी दृष्टि दी। फलस्वरूप उनसे अनुप्रेरित गतिविधियों और उनके उपासक वर्ग में उदारता के दिग्दर्शन होते हैं। 'जिनवाणी' के सम्पादक डॉ. धर्मचन्द जैन के शब्दों में-''रत्नसंघ परम्परा के आचार्य होते हुए भी आप मूलरूप से जिन शासन के संरक्षक थे।''

जैनधर्म का मौलिक इतिहास के चतुर्थ भाग में जैनधर्म के अंचलगच्छ की विशेषता बताते हुए लिखा गया है- ''अंचलगच्छ की स्थापना से लेकर आज तक उसकी सबसे बड़ी विशेषता यह रही है कि इस गच्छ के आचार्यों, श्रमणों तथा अनुयायियों ने पारस्परिक वैमनस्योत्पादक खण्डन-मण्डनात्मक प्रपञ्चों से कोसों

दूर रहकर एक मात्र अपने लक्ष्य की ओर अग्रसर होते रहने की सृजनात्मक नीति को ही अपनाये रखा।''[14] आज सभी जैन संघ और पंथ ऐसी रीति-नीति रखें तो जिनशासन शक्तिशाली बनकर जन-जीवन में अपना और गहरा प्रभाव बना सकता है।

अन्तिम भोलावण

आचार्यश्री जैन दर्शन के अनेकान्त-सिद्धान्त को व्यवहार के धरातल पर जीने का मार्गदर्शन करते थे। जर्मन विद्वान् फेलिक्स बैली को उन्होंने कहा था- ''स्याद्वाद जगत् के वैचारिक संघर्षों को सुलझाता है। इसे वाणी और विचार की अहिंसा कहा जा सकता है।'' आचार्यश्री के प्रति अनन्य आस्थाशील श्रावक पूर्व न्यायाधिपति जसराजजी चौपड़ा लिखते हैं कि आचार्यश्री ने उन्हें निमाज की अन्तिम भोलावण में संघ-सेवा के अतिरिक्त जैन एकता की दिशा में भी कार्य करने के लिए कहा था। आचार्यश्री ने कहा था कि जैन एकता समय की महती आवश्यकता है।[15] अन्तिम आराधना में अन्तिम सन्देश का महत्त्व अत्यधिक हो जाता है। वस्तुतः आचार्य हस्ती गणाचार्य, वाचनाचार्य और युगप्रधानाचार्य; तीनों प्रकार के आचार्यों की विशेषताओं से युक्त थे। वैयक्तिक और सामुदायिक सौहार्द बढ़ाने एवं समन्वय स्थापित करने में उनकी एकता एवं समता की शिक्षाएँ बहुत उपयोगी हैं।

सन्दर्भ

1. नमोपुरिसवरगंधहत्थीणं, पृष्ठांक 365 एवं 458 (सम्पादक डॉ. धर्मचन्द जैन)
2. नमोपुरिसवरगंधहत्थीणं, आमुख, पृष्ठांक 19वाँ
3. वही, आमुख, पृष्ठांक 19वाँ
4. वही, आमुख, पृष्ठांक 19वाँ
5. नमोपुरिसवरगंधहत्थीणं, पृष्ठांक 789
6. वही, आमुख, पृष्ठांक 18वाँ
7. वही, आमुख, पृष्ठांक 34वाँ
8. नमोपुरिसवरगंधहत्थीणं, पृष्ठांक 458
9. जैन धर्म का मौलिक इतिहास, चतुर्थ भाग, पृष्ठांक 280-281
10. नमोपुरिसवरगंधहत्थीणं, आमुख, पृष्ठांक 25वाँ
11. नमोपुरिसवरगंधहत्थीणं, पृष्ठांक 792-793
12. नमोपुरिसवरगंधहत्थीणं, आमुख, पृष्ठांक 33वाँ
13. जैन धर्म का मौलिक इतिहास, चतुर्थ भाग, पृष्ठांक 203-206
14. जैन धर्म का मौलिक इतिहास, चतुर्थ भाग, पृष्ठांक 511
15. नमोपुरिसवरगंधहत्थीणं, पृष्ठांक 578

(आचार्य हस्ती जन्मशताब्दी के उपलक्ष्य में नवम्बर-2010 में पाली में आचार्य श्री हीराचन्द्रजी म. की निश्रा में आयोजित राष्ट्रीय विद्वत्संगोष्ठी में प्रस्तुत)

-निदेशक : अन्तरराष्ट्रीय प्राकृत अध्ययन व शोध केन्द्र, सुगन हाउस, 18, रामानुज अय्यर स्ट्रीट, साहुकारपेट, चेन्नई-600001 (तमिलनाडु)

चिन्तन में सहायक

डॉ. रमेश 'मयंक'

कलियुग में कदम-कदम पर
छल, प्रपंच, माया
धोखा, क्रोध, क्लेश की छाया
अहं, मान, मद, मोह की
बाधाएँ खड़ी करती हैं तब-
अधिकार-स्वामित्व की लालसाएँ
व्यर्थ दम्भ भरती हैं, आँसू-स्याही बनता
हाथ कलम पकड़ता दिल के कागज़ पर
बुद्धि शब्द बनती
जिसे जानने-जीने
लिखने-समझाने के प्रयास
अति महत्त्वपूर्ण है
ज्ञान के प्रकाश में
परोपकार के चिन्तन में सहायक
संकल्प, श्रद्धा और समर्पण हैं।

-बी-8, मीरा नगर, चित्तौड़गढ़-312001 (राज.)

10 जनवरी 2020
जिनवाणी 44
ISSN 2249-2011

दीक्षा-शताब्दी

शब्दातीत युगपुरुष पूज्य आचार्य श्री हस्तीमलजी म.सा.

श्रीमती अंशु संजय सुराना

वर्णमाला की यात्रा अक्षर से प्रारम्भ होती है। अक्षर को कभी ध्यानपूर्वक देखने की कोशिश करें। प्रारम्भ में अक्षर नितान्त अकेला होता है फिर उसे स्वर अर्थात् मात्राओं का संयोग मिलता है तब वह शब्द रूप में परिणत होता है, फिर शब्दों के समूह से वाक्य, वाक्यों के समूह से अनुच्छेद, अनुच्छेदों के समूह से अध्याय और अध्यायों के समूह से पुस्तक का निर्माण होता है। अक्षर से पुस्तक बनने की शृङ्खला में एक महत्त्वपूर्ण तत्त्व हर स्तर पर साथ होता है, वह है पुरुषार्थ। अब एक असाधारण जीव की यात्रा देखते हैं। वह जीव भी जब संसार में आया, अक्षर की भाँति अकेला ही आया था। फिर पुरुषार्थ के रूप में परिणत हुआ, फिर सद्गुणों के समूह को एकत्रित कर वह पुरुष एक दिन महापुरुष, फिर महापुरुष से युग पुरुष बन गया। अदम्य पुरुषार्थ करने वाले उस असाधारण जीव को आज संसार पूज्य आचार्यप्रवर श्री हस्तीमलजी म.सा. के नाम से जानता है। शैशवावस्था में दुःख झेले, तरुणावस्था में परीषहों से खेले, पुरुषार्थ किया ऐसा कि प्रौढ़ावस्था तक मेट दिये संसार के सारे झमेले। अक्षर की यात्रा को समझा, अब उन्हीं अक्षरों और शब्दों के माध्यम से शब्दातीत महापुरुष को समझने का, उनके गुणगान कर अपनी जिह्वा को पवित्र करने का प्रयास करते हैं।

अ अलौकिक प्रकाश से आलोकित हुआ वातावरण,
अहिंसा के अनगार का हुआ था धरा पर अवतरण।

आ आत्मज केवल-रूपा के, आगम अध्येता गहन,
आचरण में भी उतारा जीवन का कर डाला मन्थन।

इ इष्ट रहे जन-जन के, जिनवाणी का बरसाया सावन,
इच्छाओं का कर निरोध, पाया तुमने पद पावन।

उ उपसर्ग और परीषह की अग्नि को तुमने ध्वस्त किया,
उन्नति और उत्थान के संयम मार्ग को प्रशस्त किया।

ऊ ऊर्वरा हो भूमि तो वह बहुत धान उपजाती,
ऊष्मा तेरे वचनों की हर नैया पार लगाती।

ए एवन्ता सम लघुवय में ही संयम तुमने धारा,
एक-एक जिनवाक्य को अन्तर में तुमने उतारा।

ऐ ऐश्वर्य भरा तेरा आनन, सद्गुणों से चमकता,
ऐसा दर्शन पाकर हर मन ऐसे ही हरसता।
ज्यूँ मेघ गर्जना सुन चातक पक्षी है चहकता।।

ओ ओघे पर ले सर्प को, दिया तुमने जीवन दान,
ओ! गुरुवर बन गए तुम, वीर के शासन की शान।

औ औदारिक शरीर का तुमने, कर डाला पूरा उपयोग,
औषधि त्यागी, त्यागा पद, त्याग दिये सारे संयोग।

अं अन्त समय भी यही एक चिन्तन, धर्म ही है सहारा,
अन्तर की जागृत चेतना से, संधारा तुमने धारा।

अः पुनः पुनः तव दर्शन को, दिल मेरा तरसता है,
शनैः शनैः तव स्मरण से, नयनों से मेघ बरसता है।

क-कर्मवीर

'धम्मे सूरा' की उक्ति को कर दिया साकार,
संसार से मुख मोड़ लिया, बन गये अनगार।

ख -खेदज्ञ

कालज्ञ थे, समयज्ञ थे, थे आप खेदज्ञ,
आचारांगादि आगमों के बन गए आप मर्मज्ञ।

ग-गुणग्राही

गुणग्राही बनकर, बन गए आप बड़े गुणवान्,
गहन अध्ययन कर आगम का, किया आत्म ज्ञान।

घ-घट-घट के ज्ञाता

पलभर में ही हर लेते, व्यथा जो कोई लाता,
खुशियाँ झोली में भर देते, घट-घट के थे ज्ञाता।

च–चारित्रवान्

चारित्र निधि अखूट थी, जैसे कोई नव निधान,
'चरियं उट्ठं पक्कमई' वीतरागी स्वरूप का ही गान।

छ–छंद निरोधी

'छंद निरोहेण उवेइ मोक्खं' सूक्ति हुई साकार,
इच्छा के त्याग से, दिया जीवन को नव आकार।

ज–जयवन्त जीवन

जल कमल–सा था जीवन, अष्ट सम्पदा के स्वामी,
जिनशासन नौका खिवैया, तरा दिये अनेक प्राणी।

झ–झलक है सुधर्मा की

शान्ति धर्म की गजब साधना, कषाय नहीं थे पास,
झलक थी सुधर्मा की, जम्बू–सा होता अहसास।

ट–टेंशन रहित

न थी कल की चिन्ता, टेंशन से रहते थे सदा ही दूर,
आत्मचिन्तन का ही ध्येय, मस्त फकीरी से भरपूर।

ठ–ठहराव पूर्ण चित्त

ठहरावपूर्ण था चित्त, रहते थे आत्मा में स्थित,
असारता के अहसास से, संसार से रहे सदा विरक्त।

ड–डोर थामी जिनशासन की

डोर थामी जिनशासन की, साधना में रहे सजग,
'विज्जाणुगया जसंसिणो' से पहचान बनाई अलग।

ढ–ढील रहित

ढील न दी सिद्धान्तों में, किया पुरुषार्थ प्रबल,
जिनाज्ञा में ही जीना है, यही सजगता रखी प्रतिपल।

त–तत्त्वनिष्ठ

तत्त्वनिष्ठा पायी अनुपम, सुनकर शोभा के उपदेश,
जीवन उन्नत करने हेतु, दिया सामायिक सन्देश।

थ–थम्भरहित (अभिमान रहित)

लघुवय में बने आचार्य, फिर भी न था तनिक मान,
थम्भरहित जो होते हैं वे ही पाते हैं सच्चा ज्ञान।

द–दृष्टि सम्पन्न

दृष्टि आपकी इतनी सम्यक्, हुआ आतम उजास,
सम्यग्दर्शन का दीप जलाकर, किया जग में प्रकाश।

ध–धृतिमान्

सुख–दुःख में समभावी, सदा संयमी धृतिमान्,
'गुणिषु प्रमोदं' के प्रयोक्ता, रहे सदा ही गुणनिधान।

न–निरतिचार संयमी

धर्म का मर्म समझाने, सुदूर दक्षिण किया विहार,
71 वर्षीय सुदीर्घ संयम, आपने पाला निरतिचार।

प–पारदर्शी जीवन

कथनी करनी सदा एक–सी, जीवन निर्मल समदर्शी,
गुणग्राही आराधक, रहे सदैव पारदर्शी।

फ–फकीरपना

अल्प उपधि से जीवन जीया, वाह रे मस्त फकीरी,
अपनाएँ यदि तेरी साधना, मुक्ति पाने में नहीं होती देरी।

ब–बाल–ब्रह्मचारी

दिव्य ऊर्जा के संचारक, तीव्र क्षिप्र थी प्रज्ञा न्यारी,
नववाड़ से थे युक्त, आप थे विरले बाल ब्रह्मचारी।

भ–भाषा–विवेक

ऊँचा सम्बोधन था सबको, उत्कृष्ट था भाषा विवेक,
मधुर गिरा के प्रभाव से, शान्त हो गए कलह अनेक।

म–मेधावी

मेधावी और सरलमना, प्रखर प्रज्ञा के स्वामी,
'जलंते इव तेएण सूरिओ' में, नहीं रही कोई खामी।

य–योगीयशस्वी

यशस्वी, मनस्वी योगी, धन्य आपकी विरक्ति,
समाधि आत्मदर्शी की, दूर नहीं तव मुक्ति।

र–रत्नत्रय आराधक

परिस्थितियाँ नहीं बन पाई, संयम पालन में बाधक,
अकम्प अडोल रहे, रत्नत्रय आराधक।

ल–लघुता गुण–सम्पन्न

लघुवय में हुए दीक्षित, लघुता गुण से बने महान्,
आगम संस्कृत प्राकृतविज्ञ, माननीय रहे विद्वान्।

व–वीर्य सम्पन्नता

जाना है सिद्धालय, मन में बसी बस एक ही चाह,
वीर्य सम्पन्न गुरुवर, साधना में निरन्तर उत्साह।

श–शक्ति सम्पन्न

तपस्या, सत्त्व, एकत्व, के तराजू में तोल दिया,
किया सम्यक् पुरुषार्थ, मोक्ष राह को खोल दिया।

ष–षड्काय रक्षक

'अप्पसमे मण्णिज्ज छप्पिकाए' को दिया स्थान,
अनुकम्पा से ओतप्रोत, षड्काय रक्षक थे करुणा निधान।

स–संथारा साधक

जीवन को क्या, मृत्यु को भी सफल किया,
देह–आत्म के भेद विज्ञानी, आचार्य ने संथारा लिया।

ह–हटाया अज्ञान

स्वाध्याय का सन्देश गुँजाया, जन–जन का अज्ञान हटाया,
बाल–नारी तरुणों को भी, धर्मसरोवर में नहलाया।

क्ष–क्षमाशीलता

आगम जन–जन तक पहुँचाया, बहुत की थी धर्मदलाली,
मौलिक इतिहास था रचा आपने, क्षमाशीलता बड़ी निराली।

त्र–त्राणदाता

जहाज़ बने जिनशासन के, त्रस–स्थावर को दिया त्राण,
वर्तमान के वर्धमान का, अनुपम था अभयदान।

ज्ञ–ज्ञान

अद्भुत पालना की चारित्र की, अद्भुत आपका सम्यग्ज्ञान,
कदम जहाँ भी पड़े आपके, भक्त लुटाते थे तन–मन–प्राण।

अध्यात्म की वर्णमाला का प्रत्येक अक्षर एक ऐसा घाट है जिस पर जीवन की मैली चादर को धुना और धोया जा सकता है। आत्मा पर लगे धब्बों को छुड़ाया जा सकता है। प्रत्येक काल, समय, परिवेश में यह आध्यात्मिक वर्णमाला इन्द्रियों और मन की सत्ता पर आत्म–आधिपत्य स्थापित करने में सक्षम रही है। इस अप्रमत्त योगी ने जीवन ऊर्जा को समग्रता से अध्यात्म साधना में प्रयुक्त किया। प्रत्येक क्षण को अमूल्य और महत्त्वपूर्ण समझ कर मोक्ष आराधना में भागीरथ प्रयत्न किया। भले ही वे आज सशरीर रूप में हमारे सामने विद्यमान नहीं, परन्तु उनकी जयवन्त जीवनी से हर क्षण सलीके से जीने का अन्दाज़ और 'सामायिक–स्वाध्याय' के सन्देश से आत्मोन्नति करने का अभ्यास हमें प्राप्त होता रहेगा। उस संथारा साधक ने तो प्रभु वाणी रूपी पतवार से अपने जीवन की नैया तार ली और उनके जीवन ने अनेक भवी प्राणियों के लिए प्रेरणा का मार्ग और ऊर्जा का स्रोत प्रशस्त कर दिया। उस महापुरुष के स्मरण से ही सर्वतोभावी आत्मसमर्पण के साथ श्रद्धावनत यह तन–मन नतमस्तक हो जाता है।

न था कोई किस्सा, न है कोई कहानी,
उस आध्यात्मिक योगी की सच में ऐसी ज़िन्दगानी।
थे वे विरले सन्त, न है जिनका कोई सानी,
आज भी जिनको याद करके, आँखों से झरता है पानी।।

–एस 149, महावीर नगर, टोंक रोड़, जयपुर (राज.)

नववर्ष मंगलमय हो

'जिनवाणी' पत्रिका परिवार की ओर से सभी पाठकों को नववर्ष–2020 के लिए हार्दिक मंगल कामनाएँ।

आपका जीवन उत्तरोत्तर आध्यात्मिक ऊर्जा एवं व्यवहार की निर्मलता से परिपूर्ण हो।

–सम्पादक

10 जनवरी 2020
जिनवाणी 47
ISSN 2249-2011

तत्त्व-चर्चा

जिज्ञासा-समाधान

संकलित

प्रश्न– संसार से सच्ची निराशा आ जाने पर जीवन में मृत्यु के दर्शन होते हैं, उसी क्षण से वास्तविक जीवन की शुरूआत होती है। उसे उत्तराध्ययनसूत्र से पुष्ट कीजिए।

उत्तर– विनाशी जीवन की वास्तविकता का बोध होने पर अविनाशी जीवन की लालसा स्वत: जागृत हो जाती है। विवेक के प्रकाश में वास्तविक स्वरूप का ज्ञान होने पर साधक की दृष्टि लक्ष्य पर केन्द्रित हो जाती है। अत: नित्य प्राप्त में अविचल आस्था अथवा प्रतीति की वास्तविकता का परिचय सहज निवृत्ति में हेतु है।

उत्तराध्ययनसूत्र के 14वें अध्ययन की 26वीं गाथा में भृगु पुरोहित के कुमारों के पवित्र कथन से भृगु के हृदय में कुछ सद्बोध की भावना होने पर वे उन कुमारों से कहते हैं–हे पुत्रों! हम चारों ही सम्यक्त्व पूर्वक देशव्रत को धारण करके यहाँ पर रहेंगे और जब तुम्हारी अवस्था परिपक्व हो जायेगी तब हम सब दीक्षा ग्रहण करके भिक्षावृत्ति के द्वारा जीवन यात्रा को चलाते हुए विचरेंगे। पिता के इस कथन को सुनकर दोनों कुमार जीवन की क्षणिकता को प्रकट करते हुए कहते हैं– **'जस्सऽत्थि मच्चुणा सक्खं, जस्स वऽत्थि पलायणं'** (उत्तराध्ययनसूत्र, अध्ययन 14, गाथा 27) जिसकी मृत्यु से मित्रता है और जो मृत्यु से भाग सकता है तथा जिसको यह ज्ञान है कि मैं नहीं मरूँगा वही पुरुष 'कल' आगामी दिवस की आशा कर सकता है। अत: **'अज्जेव धम्मं पडिवज्जयामो'** (उत्तराध्ययनसूत्र, अध्ययन 14, गाथा 28) हम तो आज ही धर्म को ग्रहण करेंगे–जिस ग्रहण से फिर संसार में जन्म नहीं लेना पड़े। ऐसा एक पदार्थ भी इस संसार में नहीं है, हमने जिसका उपभोग न किया हो, अत: धर्म में श्रद्धा रखनी और कायादि के राग को दूर करना ही हमारा कर्त्तव्य है।

देहादि वस्तुओं पर अविश्वास होते ही अपने पर विश्वास हो जाता है और अपने पर विश्वास होते ही अपने कर्त्तव्य पर विश्वास स्वत: जग जाता है।

'असासए सरीरम्मि, रइं णोवलभामहं।' (उत्तराध्ययनसूत्र, अध्ययन 19, गाथा 14) शरीर के वास्तविक स्वरूप का बोध होते ही मृगापुत्र के भीतर से आवाज़ निकलती है–फेन बुलबुले के समान यह शरीर पहले अथवा पीछे कभी न कभी अवश्य ही छूटने वाला है और जो व्याधि, रोग, बुढ़ापा एवं मृत्यु आदि से ग्रस्त हो ऐसे शरीर में क्षणमात्र भी आनन्द की अनुभूति नहीं कर रहा हूँ। अत: **'जहा गेहे पलित्तम्मि'** (उत्तराध्ययन-सूत्र, अध्ययन 19, गाथा 23) **'एवं लोए पलित्तम्मि'** (उत्तराध्ययनसूत्र, अध्ययन 19, गाथा 24) जिस प्रकार घर में आग लग जाने पर उस घर का मालिक उस घर में रही सार वस्तुओं को निकाल लेता है और असार को छोड़ देता है उसी प्रकार जरा और मरण से लोक जल रहा है और इस लोक में से अपनी आत्मा को तारना ही मेरा कर्त्तव्य है।

सत्य की जिज्ञासा असत्य को खाकर सत्य से अभिन्न करने में समर्थ है। अथवा यों कहो कि अनन्त की लालसा वस्तुओं की कामनाओं का अन्तकर अनन्त से अभिन्न कर देती है। अत: सत्य की खोज का अधिकारी वही बन पाता है जिसके भोग में रोग, हर्ष में शोक, संयोग में वियोग, सुख में दु:ख, धन में वन, जीवन में मृत्यु का अनुभव हो जाए। जब साधक जीवन में ही मृत्यु का अनुभव कर लेता है तो उसका जीवन त्याग से जुड़ जाता है। मृत्यु और त्याग का स्वरूप किसी अपेक्षा एक है, परिणाम में भिन्नता है। मृत्यु का परिणाम जन्म है और त्याग का परिणाम अमरत्व है। मृत्यु अनिच्छा पूर्वक आती है और त्याग स्वेच्छा पूर्वक

किया जाता है। मृत्यु और त्याग दोनों में ही वस्तु आदि का वियोग है, परन्तु अन्तर यह है कि मृत्यु में सम्बन्ध तो बना रहता है, पर वस्तु नष्ट हो जाती है, त्याग में वस्तु तो बनी रहती है, पर उससे सम्बन्ध नहीं रहता है।

मृत्यु वस्तु का नाश करती है, त्याग वस्तु के सम्बन्ध का नाश करता है। मृत्यु में वस्तुएँ छूटती हैं, त्याग में आगे होकर छोड़ी जाती हैं। उत्तराध्ययनसूत्र के 13वें अध्ययन की 21वीं गाथा कहती है-**'इह जीविए राय! असासयम्मि, घणियं तु पुण्णाइं अकुव्वमाणो'** चित्त मुनि के द्वारा ब्रह्मदत्त चक्रवर्ती को त्याग के लिए प्रेरित करते हुए जीवन की सच्चाई प्रकट की गई है। हे राजन्! अशाश्वत इस जीवन में जो क्षणिक कामभोगों का त्याग एवं धर्म आराधना नहीं करता वह मृत्यु के मुँह में पहुँचने पर पश्चात्ताप करता है। **'जहेह सीहो व मियं गहाय'** (उत्तराध्ययनसूत्र, अध्ययन 13, गाथा 22) जिस प्रकार सिंह हरिण को पकड़कर ले जाता है, वैसे ही अन्तकाल में मृत्यु निश्चित ही मनुष्य को ले जाती है। काल के आने पर माता-पिता, भाई-बहिन कोई भी अपने जीवन का हिस्सा देकर बचा नहीं पाते हैं। कर्म बिना भूल किये निरन्तर जीवन को मृत्यु के समीप ले जा रहा हैं। अत: हे राजन्! मृत्यु के आने से पूर्व ही वस्तुओं से सम्बन्ध विच्छेद कर ले, जिससे पुन: संसार में जन्म लेना न पड़े।

'मरिहिसि रायं! जया तया वा....' (उत्तराध्ययन सूत्र, अध्ययन 14, गाथा 40) महारानी कमलावती इषुकार राजा को ''धर्म ही सच्चा साथी है, इसके अतिरिक्त और कोई नहीं'' इसी को समझाते हुए कहती है-हे राजन्! एक दिन इन मनोरम कामभोगों को छोड़कर जब मृत्यु की गोद में जाओगे तब एकमात्र धर्म ही रक्षक होगा। धर्म के सिवाय कोई शरण देने वाला नहीं है। अत: जिस प्रकार पिञ्जरे में बन्द हुई पक्षिणी सुख का अनुभव नहीं करती है उसी प्रकार 'मैं' भी इन स्नेह बन्धन में आनन्द का अनुभव नहीं कर रही हूँ। मृत्यु के आने से पूर्व ही मैं अकिञ्चन विषय-वासना से दूर परिग्रह एवं हिंसा के दोषों से मुक्त होकर त्यागमय जीवन को अपनाऊँगी।

अत: संसार से सच्ची निराशा आ जाने पर जीवन में मृत्यु के दर्शन होते हैं और जीवन में ही मृत्यु का अनुभव हो जाने पर वस्तुओं के रहते हुए ही वस्तुओं से सम्बन्ध विच्छेद हो जाता है, जिससे वास्तविक जीवन की शुरुआत हो जाती है। अर्थात् वस्तुओं से सम्बन्ध विच्छेद हो जाने पर वर्तमान में ही साधक अचाह पद को प्राप्त कर लेता है जिसमें नित्यभोग, चिरशान्ति, अमरत्व और परम प्रेम निहित है।

(क्रमशः)

प्रभु धर्म करूँ मन से

(तर्ज : प्रभु मन विपरीत हो प्रसंग.....)

मोहन कोठारी 'विनर'

प्रभु धर्म करूँ मन से, मुझे मंज़िल दे देना,
मैं मुक्ति का प्यासा, मुझे मुक्ति दे देना।
प्रभु धर्म करूँ मन से.....।। टेर।।

शुभ करणी करने से, सुफल तो मिलता है,
अशुभ करणी करने से, भव भ्रमण ही बढ़ता है।
शुभ करणी करूँ निशदिन, ऐसा चिन्तन दे देना,
प्रभु धर्म करूँ मन से.....।।1।।

पुण्यवानी उदय आई, मानव भव में आया,
सद्भाग्य है यह मेरा, कुल जैन का है पाया।
करूँ सफल साधना मैं, ऐसी आशी दे देना,
प्रभु धर्म करूँ मन से.....।।2।।

प्रमाद को तज कर मैं, पुरुषार्थ को अपनाऊँ,
संकट आये चाहे, नहीं तनिक भी घबराऊँ।
रहे मर्यादा मय जीवन, ऐसी भावना दे देना,
प्रभु धर्म करूँ मन से.....।।3।।

-जानता साड़ी सेन्टर, फरिश्ता कॉम्प्लेक्स, स्टेशन रोड़, दुर्ग-491001 (छत्तीसगढ़)

10 जनवरी 2020
जिनवाणी 49
ISSN 2249-2011

युवास्तम्भ

शीत लहर... या ...कृपा लहर?

श्री तरुण बोहरा 'तीर्थ'

आज सोलहवाँ जन्मदिन है मेरा 11 जनवरी... सर्दी का मौसम... कड़ाके की ठण्ड... कम्पाने वाली शीत लहर चल रही है। पर घर में घुसते ही मेरी पूरी सदी गायब हो गयी, क्योंकि गरमागरम डाँट जो पड़ने वाली थी पापा से। जैसा सोचा वह ही हुआ। पापा ने पूछ ही लिया...

गौरव! कहाँ है जैकेट?

जी पापा! नहीं ख़रीद पाया।

तो फिर क्या किया उन एक हजार रुपयों का? कहाँ गिरा के आया है?

पापा की आवाज़ तेज हो रही थी... और मेरी आँखें नम।

तब तक तो मम्मी भी आ गई रसोई से...

क्यों डाँट रहे हो जी गौरव को... आज तो उसका जन्मदिन भी है...

अरे भई... मैं डाँट कहाँ रहा हूँ... पूछ रहा हूँ... पापा की आवाज़ थोड़ी नरम हुई।

उसी नरम आवाज़ में मम्मी से कहने लगे... अरे... जो सुबह प्रवचन सुनकर... जब बाहर निकले थे तब गौरव को जन्मदिन के उपहार में हजार रुपये तुम्हारे सामने ही तो दिए थे। इसे कहा भी था कि इससे जो मर्जी ले लेना... या दोस्तों के साथ खर्च कर देना। पर इसने कहा था कि मुझे तो नया जैकेट ही खरीदना है... बस इसीलिए पूछा कि जैकेटे नहीं ख़रीदा क्या...?

मम्मी ने प्यार से सिर पर हाथ फेरा और पूछा... गौरव बेटा... क्या हुआ जैकेट नहीं ख़रीदा क्या? या रुपये दोस्तों के साथ खर्च कर दिए क्या? कहीं गिर गए क्या? कहीं गिर भी गए तो कोई बात नहीं... पापा और दे देंगे बेटा।

नहीं मम्मी रुपये गिरे नहीं... उन रुपयों से मैं कुछ और लेकर आ गया... या यूँ कहूँ कि मैंने हजार रुपये का सदुपयोग कर लिया।

मम्मी कुछ कहती... इसके पहले ही...

पापा-सदुपयोग?

जी पापा... सदुपयोग

मम्मी-साफ़-साफ़ बोलो बेटा।

देखो पापा... देखो मम्मी! आप लोग मुझे हर छुट्टी के दिन प्रवचन में लेकर जाते हो... आज रविवार की छुट्टी भी थी और मेरा जन्मदिन भी था... और सुबह प्रवचन में हम सबने... सन्त महापुरुष के श्रीमुख से सुना भी कि... "मिले हुए का सदुपयोग करो"... सो मैंने कर लिया

पापा (हँसते हुए)-अच्छा... ये हुई न बात... भई हम भी सुनें कि तुमने कैसे सदुपयोग किया?

तब तक तो मम्मी भी मुस्कुराने लगी।

जी पापा ! खरीदने को तो मैं जैकेट ही गया था... एक दुकान में हजार रुपये में अच्छा-सा जैकेट मिल भी गया... पहन के देखा... अच्छा लगा... पैसे भी दे दिए... दुकान से बाहर निकला तो देखा... कि सामने चबूतरे पर एक बुजुर्ग दम्पत्ति जो याचक से दिख रहे थें... ठण्ड से जबरदस्त काँप रहे थें... मुझसे देखा नहीं गया.... सन्त भगवन्त की वह ही पंक्ति कानों में गूँज रही थी... "मिले हुए का सदुपयोग करो"... फिर क्या... वापस दुकान के अन्दर जाकर... जैकेट को वापस किया... उसी दुकान से 500-500 रुपये के दो अच्छे से कम्बल ख़रीदे... और उन बूढ़े दादा-दादी को ओढ़ा दिये... और मेरे पास पहले के 50 रुपये थे... तो उन दोनों को गरम-गरम चाय और बिस्किट भी दिला दिए... बस... ऐसे ही मैंने कर लिया सदुपयोगा... **मिले हुए का सदुपयोग**

देखा मैंने... मम्मी के मुस्कुराते हुए चेहरे पर... आँसुओं की धार बह निकली है... और पापा... पापा के आँसू भी जैसे आँखों से बाहर निकलने को बेताब हैं... उन्होंने गर्व से अपने सिर को ऊँचा किया और मेरे कन्धे को थपथपाते हुए बाँहों में मुझे समेट लिया... और मम्मी ...मम्मी तो पता नहीं... रो रही है... या हँस रही है... मेरे मस्तक को बार-बार सहला कर बलाईयाँ ले रही है... मम्मी ने ही... कुछ देर बाद... हँसते हुए पूछा...

क्यूँ रे गौरु... तुमने तो कहा कि मैं जैकेट नहीं लाया पर कुछ और लेकर आया हूँ... वो क्या लाया है फिर?

जी मम्मी... मैं लाया हूँ ना... उन बूढ़े दादा-दादी के इतने सारे आशीर्वाद...

पापा (जोर से हँसते हुए)-यह हुई न बात... देखा दिलदार बाप का दिलदार बेटा... ले बेटा ये दो हजार रुपये... तेरे जन्मदिन का छोटा-सा उपहार...

अब मुस्कुराने की बारी मेरी थी...

मुस्कुराते हुए तो मम्मी-पापा को बहुत बार देखा था... पर आज पहली बार देखी है... उनके चेहरे पर... भव्य भावों के साथ... आँसुओं की रिमझिम वर्षा में गौरव भरी मुस्कान...

और... कदम फिर निकल पड़े हैं... मिले हुए का सदुपयोग करने के लिए... और उसके पहले... गुरु भगवन्त के पास जाकर कृतज्ञता ज्ञापित करने के लिए... जीवन में अनमोल सूत्र देने के लिए... इस शीत लहर में कृपा लहर बरसाने के लिए।

-"JINSHASAN", B-102, Veetrag City, Jaisalmer bypass Road, Jodhpur-342008 (Raj.)

जीवन-बोध क्षणिकाएँ

श्रद्धेय श्री यशवन्तमुनिजी म.सा.

जागृति

चेतन जागे,
देह में परायापन लागे,
तो मिथ्यात्व भागे।।

श्रद्धा

देह अनित्य है,
आत्मा नित्य है,
यह श्रद्धे वह
कृतकृत्य है।।

अपना-पराया

अरूपी चेतन का
रूपी पुद्गल कभी
अपना होता नहीं,
यह श्रद्धा करले
वह जीवन को
व्यर्थ खोता नहीं।।

परित्याग

संकल्प-विकल्प में
कुछ मिलता नहीं,
आनन्द का सुमन
खिलता नहीं।।

पराजय

वैषयिक सुख में
जीवन की हार है,
सच पूछो तो यह
जले पर खार है।

क्रोध

क्रोध देता है
अवसाद,
अब चखो
क्षमा का स्वाद।।

-डायरी से संकलित

श्री महावीराय नमः

जय गुरु हीरा श्री कुशलरत्नगजेन्द्रगणिभ्यो नमः जय गुरु मान

जैन भागवती दीक्षा-महोत्सव

आदरणीय धर्मप्रेमी बन्धुवर,

सादर जय जिनेन्द्र !

आपको सूचित करते हुए परम प्रसन्नता है कि आगमज्ञ, प्रवचन-प्रभाकर, व्यसन मुक्ति के प्रबल प्रेरक, जिनशासनगौरव परम श्रद्धेय आचार्यप्रवर पूज्य श्री 1008 श्री हीराचन्द्रजी म.सा. की आज्ञा से, आत्मार्थी, शान्त-दान्त-गम्भीर, प्रबल पुरुषार्थी परमश्रद्धेय उपाध्यायप्रवर पं. रत्न श्री मानचन्द्रजी म.सा. की मंगल मनीषा से एवं साध्वीप्रमुखा विदुषी महासती श्री तेजकंवर जी म.सा. की शुभाकांक्षा से माघ शुक्ला चतुर्थी, बुधवार, 29 जनवरी, 2020 को जलगाँव (महा.) तथा जयपुर में निम्नांकित मुमुक्षु बहिनों की जैन भागवती दीक्षाएँ सम्पन्न होने जा रही हैं-

29 जनवरी, 2020 को जलगाँव (महा.) में

मुमुक्षु बहिन सुश्री निमिषाजी लुनावत

की भागवती दीक्षा

परमश्रद्धेय आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा. के सुशिष्य श्रद्धेय श्री मनीषमुनिजी म.सा. आदि ठाणा 2 के मुखारविन्द से एवं विदुषी महासती श्री सौभाग्यवतीजी म.सा., व्याख्यात्री महासती श्री चारित्रलताजी म.सा., सेवाभावी महासती श्री विमलेशप्रभाजी म.सा. आदि ठाणा 21 के पावन सान्निध्य में सम्पन्न होगी।

29 जनवरी, 2020 को जयपुर (राज.) में

मुमुक्षु बहिन सुश्री दीपिकाजी मुणोत

की भागवती दीक्षा

परमश्रद्धेय आचार्यप्रवर पूज्य श्री 1008 श्री हीराचन्द्र जी म.सा. की आज्ञानुवर्तिनी साध्वीप्रमुखा विदुषी महासती श्री तेजकंवरजी म.सा. आदि ठाणा एवं व्याख्यात्री महासती श्री ज्ञानलता जी म.सा. आदि ठाणा 20 के पावन सान्निध्य में सम्पन्न होगी।

दीक्षा महोत्सव पर आप व्रत-नियमयुक्त श्रद्धा समर्पित कर
दीक्षा की अनुमोदना का लाभ प्राप्त करें।

विनीत

मोफतराज मुणोत
संयोजक-संरक्षक मण्डल
आनन्द चौपड़ा
राष्ट्रीय कार्याध्यक्ष

प्रकाशचन्द टाटिया
राष्ट्रीय अध्यक्ष
बुधमल बोहरा
राष्ट्रीय कार्याध्यक्ष

रतनलाल बाफना
संयोजक-शासनसेवा समिति
धनपत सेठिया
महामंत्री

दीक्षा-समिति

महेन्द्र एम. कटारिया-नागपुर
उपाध्यक्ष-09422459676

महावीर मकाणा-ब्यावर
मंत्री- 09649827000

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ

मुमुक्षु बहिन सुश्री निमिषाजी लुणावत

जन्म तिथि : 04 अक्टूबर, 1989

जन्म स्थान : नरसिंहपुर (मध्यप्रदेश)

शिक्षण : बी.एस.सी., द्वितीय वर्ष (बायोटेक्नोलॉजी)

पारिवारिक परिचय

बड़े दादा-दादी	–	स्व. श्री कोमलचन्दजी-स्व. श्रीमती कस्तुरीबाईजी लुणावत
छोटे दादा-दादी	–	स्व. श्री रामचंदजी-श्रीमती प्रेमबाईजी लुणावत, नागपुर (महा.)
दादा-दादी	–	स्व. श्री हुकमचंदजी-स्व. श्रीमती रतनदेवीजी लुणावत
वीर पिता-माता	–	श्री सुनीलकुमारजी-श्रीमती सुषमाजी लुणावत
चाचा-चाची	–	श्री सुदेशजी-श्रीमती अलकाजी लुणावत, श्री राकेशजी-श्रीमती ज्योतिजी लुणावत
भाई-भाभी	–	श्री रोहनजी-श्रीमती पूजाजी लुणावत, श्री रूमितजी-श्रीमती अलंकृताजी लुणावत
भुआ-फूफासा	–	श्रीमती साधनाजी-श्री सुभाषजी बरड़िया, नागपुर (महा.), श्रीमती संध्याजी-श्री अनिलजी जैन, भोपाल (मध्यप्रदेश), श्रीमती संजूषाजी-श्री प्रकाशजी बाघमार, जबलपुर (मध्यप्रदेश)
नाना-नानी	–	स्व. श्री पानमलजी-स्व. श्रीमती कमलाबाई जी बोथरा, कटंगी (मध्यप्रदेश)
मामा-मामी	–	श्री पारसमलजी-श्रीमती प्रीतिजी बोथरा, स्व. श्री अनिलजी-श्रीमती शोभाजी बोथरा, श्री दिलीपजी-श्रीमती किरणजी बोथरा
मासी-मासोसा	–	श्रीमती ताराजी-श्री अरुणजी संकलेचा, जबलपुर (मध्यप्रदेश), श्रीमती संगीताजी-श्री अमरचंदजी सुराना, दुर्ग (छत्तीसगढ़), श्रीमती ममताजी-श्री नरेन्द्रजी डाकलिया, राजनांदगांव (छत्तीसगढ़)
भाई-बहन	–	श्री संस्कारजी, श्री रिषितजी, सुश्री मेघालीजी, सुश्री चारूजी
भतीजा-भतीजी	–	श्री वर्णित डिवितजी, सुश्री ताशवीजी

धार्मिक अध्ययन

आगम कण्ठस्थ	–	सुखविपाक सूत्र, पुच्छिंसु णं, दशवैकालिक सूत्र, नन्दीसूत्र, अनुत्तरौपपातिकदशा, उत्तराध्ययन सूत्र 1 से 24, 28 वाँ, 34 वाँ अध्ययन
स्तोक कण्ठस्थ	–	जैन स्तोक वारिधि- आठवीं कक्षा के थोकड़े, कर्मग्रन्थ- 1,2,3,5 एवं अन्य कई थोकड़े
स्तोत्र कण्ठस्थ	–	भक्तामर, कल्याण मंदिर, महावीराष्टक
अन्य	–	तत्त्वार्थ सूत्र वैराग्यावधि – 2 वर्ष

आयोजक

दलीचन्द जैन (अध्यक्ष) नैनसुख लूंकड़ (उपाध्यक्ष) कस्तूरचंद बाफना (मंत्री)
श्री वर्द्धमान स्थानकवासी जैन श्रावक संघ, जलगांव

कंवरलाल संघवी (अध्यक्ष) पदमचंद नाहर (मंत्री)
श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, जलगांव

जलगांव सम्पर्क सूत्र

सुनील बाफना	हेमन्त कोठारी	प्रशांत कोठारी	अनिल बोथरा
भू.पू.उपाध्यक्ष-युवक परिषद्	अध्यक्ष-युवक परिषद्	भू.पू.अध्यक्ष-युवक परिषद्	कार्याध्यक्ष-अ.भा.युवक परिषद्
099755-66444	094227-70141	094222-82501	097654-77999

वीर परिवार

जलगांव अस्थायी पता
बाफणा हाऊस, गांधी उद्यान के पास, गणपति नगर, जलगांव-425001 (महा.)

स्थायी पता
गुरुदेव ऑटो डील, गयादत्त वार्ड, स्टेशन गंज, नरसिंहपुर (म.प्र.)

सम्पर्क-सूत्र
सुनीलकुमार लुणावत-94249-97789
रोहन लुणावत-94070-99992
रूमितजी लुणावत-94249-97789

मुमुक्षु बहिन सुश्री दीपिकाजी मुणोत

जन्म तिथि-12 अगस्त, 1998 • जन्म स्थान- भोपालगढ़ (राज.)
मूल निवासी - भोपालगढ़, जिला-जोधपुर (राज.)

पारिवारिक परिचय

दादा-दादी	-	स्व. श्री जवरीलालजी-श्रीमती सूरजबाईजी मुणोत
वीर पिता-माता	-	श्री कुन्दनमलजी-श्रीमती कमलेशजी मुणोत
चाचा-चाची	-	श्री दिनेशजी-श्रीमती ज्योतिजी मुणोत
भाई-भाभी	-	श्री अनिलजी-श्रीमती मीनाक्षीजी लुणावत, श्री प्रियांसजी, श्री मनीषजी, श्री ऋषभजी, श्री हर्षितजी
बहन-बहनोई	-	श्रीमती रेखाजी-श्री राकेशजी बरड़िया
बहन	-	सुश्री कोमलजी, सुश्री अर्चिताजी बाफना, सुश्री खुशीजी, सुश्री दिव्याजी, सुश्री छविजी, सुश्री पूर्तिजी
भुआसा-फूफासा	-	श्रीमती लीलाजी-स्व. श्री शान्तिलालजी मुथा, श्रीमती कुसुमजी-श्री अशोकजी बाफणा
भतीजी	-	सुश्री दीक्षिताजी, सुश्री काव्याजी
भानजी	-	सुश्री मोक्षिकाजी, सुश्री वंशिकाजी
नाना-नानी	-	स्व. श्री हुक्मीचन्दजी-श्रीमती बर्फीदेवीजी जैन
मामा-मामी	-	श्री सुमतजी-श्रीमती सुधाजी जैन
मासी-मासोसा	-	स्व. श्रीमती शीलाजी-श्री प्रकाशजी जैन, श्रीमती सुशीलाजी-श्री बागमलजी, श्रीमती मंजूजी-श्री राजेन्द्रजी, श्रीमती कल्पनाजी-श्री कमलजी लोढ़ा, श्रीमती उर्मिलाजी-श्री अमृतजी

धार्मिक अध्ययन

आगम वाचनी	-	दशवैकालिकसूत्र, नन्दीसूत्र, उपासकदशांगसूत्र, आवश्यकसूत्र, अन्तगडदसासूत्र, उत्तराध्ययन सूत्र।		
स्तोक कंठस्थ	-	जैन स्तोक वारिधि-नवमीं कक्षा तक के थोकड़े, कर्मग्रंथ 1 से 6, पंचसंग्रह 1-4।		
स्तोत्र कंठस्थ	-	भक्तामर, महावीराष्टक, हीराष्टक, रत्नाकर पच्चीसी, हस्ती चालीसा, हीरा चालीसा, मेरी भावना, लघु साधु वन्दना।		
भाषा ज्ञान	-	हिन्दी, अंग्रेजी	धार्मिक परीक्षा	- शिक्षण बोर्ड की 3 कक्षा
वैराग्यावधि	-	9 वर्ष		

आयोजक

डॉ. जितेन्द्र सिंह कोठारी	सुशील कुमार जैन	प्रमोद महनोत	सुरेश चन्द कोठारी
अध्यक्ष	मंत्री	अध्यक्ष	मंत्री
श्री श्वे. स्था. जैन संस्था, सांगानेर-प्रतापनगर		श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, जयपुर	

प्रतापनगर संघ कार्यालय सम्पर्क सूत्र

सुधीरकुमार जैन	प्रमोद श्रीमाल	वीरेन्द्रकुमार जैन	अजीतकुमार संकलेचा
संयुक्त मंत्री	कोषाध्यक्ष	उपाध्यक्ष	कार्यकारिणी सदस्य
9468597640	8005606936	8824877209	9997330909

वीर परिवार

स्थायी पता
25 ए, तिलक नगर द्वितीय, बड़ला रोड़, महामन्दिर, जोधपुर (राज.)

सम्पर्क-सूत्र
कुन्दनमल मुणोत-9887865051
दिनेशकुमार मुणोत-9887820777
प्रियांश मुणोत-8619610462
अनिल जैन-8079091797

अस्थायी पता
61/51, सेक्टर-6, श्री श्वेताम्बर जैन रत्न स्वाध्याय भवन के सामने, प्रतापनगर-सांगानेर, जयपुर (राज.)

जलगांव दीक्षा-महोत्सव-कार्यक्रम

वि. सं. 2076 माघ शुक्ला तृतीया, मंगलवार, 28 जनवरी, 2020

शोभा यात्रा प्रातः 8.30 बजे बाफणा हाऊस, गांधी उद्यान के सामने से प्रारम्भ होकर स्वाध्याय भवन, गणपति नगर श्रद्धेय श्री मनीषमुनिजी म.सा. आदि ठाणा के श्रीचरणों में पहुँचेगी तथा मांगलिक श्रवण किया जाएगा।

अभिनन्दन-समारोह

वीर परिवार एवं दीक्षार्थियों का

समय : दोपहर 2.00 बजे

स्थान : रतनलाल सी. बाफणा स्वाध्याय भवन, सिद्धी व्यंकटेश मंदिर के पीछे, गणपति नगर,आकाशवाणी चौक, जलगांव-425001 (महा.)

वि. सं. 2076 माघ शुक्ला चतुर्थी, बुधवार, 29 जनवरी, 2020

अभिनिष्क्रमण यात्रा

प्रातः 9.30 बजे वीर परिवार के अस्थायी निवास स्थान से प्रस्थान कर रतनलाल सी. बाफना स्वाध्याय भवन, गणपति नगर दीक्षा स्थल पर पहुँचेगी, जहाँ श्रद्धेय श्री मनीषमुनिजी म.सा. आदि ठाणा 2 एवं विदुषी महासती श्री सौभाग्यवतीजी म.सा. आदि ठाणा 21 के पावन सान्निध्य में दीक्षा-महोत्सव कार्यक्रम प्रारम्भ होगा।

दीक्षा विधि शुभारम्भ प्रातः 11.30 बजे से श्रद्धेय श्री मनीषमुनिजी म.सा. के मुखारविन्द से

जयपुर दीक्षा-महोत्सव-कार्यक्रम

वि. सं. 2076 माघ शुक्ला तृतीया, मंगलवार, 28 जनवरी, 2020

शोभा यात्रा प्रातः 9.00 बजे 61/51, सेक्टर-6, श्री श्वेताम्बर जैन रत्न स्वाध्याय भवन के सामने, प्रतापनगर से प्रारम्भ होकर साध्वीप्रमुखा विदुषी महासती श्री तेजकंवरजी म.सा. आदि प्रभृति महासतीवृन्द के श्री चरणों में पहुँचकर मांगलिक श्रवण कर अभिनन्दन स्थल पर पहुँचेगी।

अभिनन्दन-समारोह वीर परिवार एवं दीक्षार्थियों का समय : 11.30 बजे

स्थान : 68/एस-1, जागृति मार्ग, हल्दी घाटी गेट के पास, टोंक रोड़, सांगानेर-प्रतापनगर, जयपुर

वि.सं. 2076 माघ शुक्ला चतुर्थी, बुधवार, 29 जनवरी, 2020

अभिनिष्क्रमण यात्रा

प्रातः 08.15 बजे वीर परिवार के अस्थायी निवास स्थान से प्रस्थान कर दीक्षा स्थल पर पहुँचेगी, जहाँ साध्वीप्रमुखा विदुषी महासती श्री तेजकंवरजी म.सा. आदि संत-सतीमण्डल के पावन सान्निध्य में दीक्षा-महोत्सव कार्यक्रम प्रारम्भ होगा।

दीक्षा विधि शुभारम्भ प्रातः 11.30 बजे से साध्वीप्रमुखा विदुषी महासती श्री तेजकंवरजी म.सा. के मुखारविन्द से

10 जनवरी 2020
जिनवाणी 55
ISSN 2249-2011

English-section

Woman in Jainism

Dr. Priyadarshana Jain

[As the world stands at crossroads inspite of immense scientific advancement and technological development reflected in all spheres of life on one hand and the ever-growing intolerance, violence, fear and insecurity that grips communities and nations at large on the other; this paper attempts to assess the position and role of 'Woman in Jainism' in modern crucial times.

The paper attempts to study the role of Jain Woman as a humble *Śrāvikā* (laity), a devout *Sādhvī*, an able philanthropist, nurturer of the young minds as a *pāṭhaśālā* teacher, a *tapasvī* and a pilgrim on the path of liberation giving *garbha sanskāra* to the life that she holds within and nurturer of values in the family and society. Uniqueness of Jain woman, an ideal Jain woman, reference of 64 great Jain women (*Mahāsatīs*) in Jain scriptures, etc also shall be covered.]

[Key Words: *Śramaṇa, Śramaṇopāsikā, Tīrthaṅkara, Śrāvikā, Mahāsatīs, Tattva-jñāna, Caturvidha-saṅgha, ,Vinaya, Viveka, Sañyama, Tapa, Jina, Tīrtha,Ahimsā, Anekānta, Aparigraha, Paṭhaśālā*]

Introduction

Man has made tremendous progress in all fields, but he has failed to exercise respect for all concerned, be it the natural resources or women. Abuse of all kinds is the order of the day and this is because of the materialistic culture, flawed education system and the women too have forgotten their role of an ideal woman - a woman of values, a woman of substance, a woman of insight, a woman of carter of values to the next generation, a woman who stands for truth, welfare and beauty (*Satyam, Śivam* and *Sundaram*), a woman who is compassionate and tolerant, a woman who is a friend, philosopher and guide of the entire mankind, a woman who is friend of all and foe of none; all these and more go to make up an ideal woman; but given the materialistic orientation of this super jet age, a woman too is unable to exercise her role of an ideal woman and steer man on the path of holistic health, peace and prosperity.

It is revealed in the Daśavaikālika Sūtra, *"dhammo maṅgalamukkiṭṭham, ahimsā, sañjamo, tavo; devāvi tam namamsanti, jassa dhamme sayā maṇo"* i.e., that *dharma* is most auspicious which comprises of *ahimsā* (non-violence), *sañyama* (self-restraint) and *tapa* (austerity)[1]. Even the gods (celestial) bow to him whose mind is engrossed in such a *dharma*. But how can this mind be engrossed in the highest *dharma*? The saints and seers preach to all mankind the highest *dharma* but who teaches this highest *dharma* to the innocent children? It is the woman who is said to be the carter of wisdom and enlightenment from one generation to the other as far as young minds are concerned. She is indeed the first teacher/guru of the child. It is she who gives birth to *Tīrthaṅkaras*[2] and *Avatārs* and all great men (*mahāpuruṣās*), it is from her womb that all men are born, who in turn nurture mankind to tread on the right path and scale great heights.

Indian culture is unique and holds spiritual and cultural values of non-violence, truth, self-control, austerity above all values. Saints and seers, *Tīrthaṅkars* and *Avatārs* have nurtured the great land of Bhārata and have extolled the position of woman to great heights. It is said, '*Yatra naryastu pujyante*

ramante tatra devatāḥ i.e., 'Where women are revered, even gods choose to dwell there.' Indian culture is an amalgamation of two cultures viz., *Vedic* and *Śramaṇic* cultures and Jainism belongs to the *Śramaṇic* current of thought. Jainism gives highest regard to women and says that her role in shaping the life of man is significant and second to none. It is in her lap that man learns the first lessons of life. It is said that one mother is equivalent to 1000 teachers. All are aware of the role of a woman as a mother, sister, daughter, wife, friend, etc, but Jainism addresses her as *Śramaṇopāsikā, Śrāvikā* and *Dharmasaṅginī*. She is an *upāsikā* (devotee) of *Śramaṇās*. A *Śramaṇā* is one who exerts on the path of liberation, who overcomes his passions of anger, conceit, deceit and greed and exercise equanimity in all walks of life. Thus a *Śramaṇopāsikā* is one who desires to tread on the path of liberation. Who desires to overcome her inner enemies and who strives to the equanimous through the ups and downs of life like her role models–the *Śramaṇās*. A '*Śrāvikā* is one who listens (*śṛuṇoti*) to the teachings of the '*Śramaṇās*, is wise (*vivekavatī*) and takes to exemplary practices (*kriyāvatī*) of non-violence, self- restraint and austerity like the *Śramaṇās* although partially and to the extent possible. A Jain woman is one who is first friend of her own self who treads on the path of dharma and enables her better half to tread on the same and so is considered as a *dharmasaṅginī*. She nurtures man with her selfless love and wisdom and remains an anchor for man thus enabling him to be an ideal man fit to serve society and not indulge in all kinds of abuse rampant today. A Jain woman ought to be a fellow pilgrim of man and together cross the ocean of transmigration through the practice of spirituality, divinity and humanity preached by the *Tīrthaṅkaras*. This goes to prove that it is the woman folk in the Jain tradition who have been the flag bearers of *dharma*.

Jains are the followers of *Jinas* and *Jinas* are those who are conquerors/victors of their inner enemies. In other words a Jain is one who desires to conquer him-self and evolve to the level of a *Jina* irrespective of gender, caste, creed and nationality. Jainism recognizes the sanctity of all life forms and asserts that the purpose of human life is to manifest the inherent divine potential through spiritual, non-violent, compassionate, enlightened way of life. The legendary *Tīrthaṅkaras* have time and again preached the Jain way of life in Bharata *Kṣetra*; Ṛṣabha being the first in this era and Mahāvīra being the last of the *Tīrthaṅkaras* in this era. The *Tīrthaṅkaras* are the ford makers and establish the four-fold Jain congregation called *'tīrtha'*, which comprises of *Sādhu, Sādhvī, Śrāvaka, Śrāvikā*. It is from here that we trace the place of Woman in Jainism.

The Jain lay-woman is called *Śrāvikā* or *Śramaṇopāsikā* and the female ascetics are called *Sādhvī* or *Āryā*. We see that Jain woman is considered equal as far as the formation of the *tīrtha* is concerned. In the eyes of law that governs *dharma* both men and women have equal rights to be part of this *tīrtha* and to progress on the path of liberation. There is neither casteism nor gender bias in Jainism and Jain women enjoy equal rights in most aspects. It is because of the values that this tradition stands for and the woman folk too uphold them to the extent possible, crime rate is minimal in this tradition and the community is recognized as a peace loving, non-violent community.

Jain Woman as a *Śrāvikā*: There were 3,18,000 *Śrāvikās* in the order of Bhagwān Mahāvīra when compared to their male

counterpart of 1,59,000 laymen[3]. Like a *Śrāvaka* (Jain lay-man), a *Śrāvikā* is one who is well versed in the teachings of the omniscient (*Tīrthaṅkara Arhats* and his followers), imbibes their teachings in her day to day life and takes to various practices in order to liberate herself from the cycle of transmigration. She has faith in the reality called *tattvās* (reals) which are as follows: *jīva* (living), *ajīva* (non-living), *puṇya* (meritorious karma), *pāpa* (demeritorious karma), *āsrava* (influx of karma), *samvara* (stoppage of karma), *nirjarā* (shedding of karma), *bandha* (bondage) and *mokṣa* (liberation) which is preached by the *kevala-jñānīs* (omniscients)[4]. She adores the *pañca parameṣṭhīs* i.e., the five supreme personalities viz., *Arhats, Siddhas, Ācāryas, Upādhyāyas* and *Sādhus*[5] and not only chants the great *namaskāra mantra* but nurtures the life in her womb with that chanting at the embryonic stage itself. The first lesson that she teaches her child is to be devoted to these supreme personalities and follow their footsteps of non-violence for enlightenment. She takes to the *āvaśyakas* (essential practices) like *sāmāyika, caturviṁśati-stava, vandanā, pratikramaṇa, kāyotsarga, pratyākhyāna*[6] besides *deva-pūjā, gurupāsti, svādhyāya, sañyama, tapa* and *dāna*[7] to the best of her ability and tries to impart these teachings to her children in some way or the other. Partial observance of the vows of *ahimsā, satya, asteya, brahmacarya* and *aparigraha* can be seen in the life of an ardent Jain woman.[8]

The Jain lay-women like the Jain nuns were well versed in the Jain canonical literature at the time of Mahāvīra. Jayanti Bai was a great *Śrāvikā* who conversed with Mahāvīra and made many philosophical and metaphysical enquiries which are popularly known as 'Jayanti bai ke praśna'.[9] She enquired from Bhagwan who is better - a person who is asleep or a person who is awake? To this Mahāvīra replied that the living beings who take to *adharma* and inflict all kinds of violence towards all *prāṇa, bhūta, jīva, sattva;* it is better that they are asleep. And the living beings that are *dharmī* and take to non-violence towards all *prāṇa, bhūta, jīva, sattva*; it is good that they are awake for they will exert for their enlightenment and inspire others to do so. She asked many such questions for which Bhagwān gave discerning answers in the *anekanta* style and she too became enlightened eventually. Jainism asserts that liberation is the birthright of every individual and irrespective of caste, creed, religious background; anybody and everybody can strive for it and realize it within. Although the Digambaras believe that women have to be reborn as men for the final move towards liberation. But the Svetambaras believe irrespective of the gender, all can be liberated provided they tread on the path of liberation which is triple-fold. Whatever may be the beliefs, both men and women have to conquer their lower instincts of food, fear, pleasure and possession to rise higher in life. Human birth is precious and rare and not to be wasted in mundane pleasures. The Jain children are made aware of this fact right from their childhood and so one will not come across a Jain who is a terrorist or who believes in terrorising other beings in the name of religion.

The Jain women folk today are educated and they also educate their children knowing very well the importance of education. Hence the literacy rate is the highest in this community which is 94.1% when compared to the national average of 65.38%. The highest female literacy rate is 90.60% compared with

the national average of 54.16%.[10]

Jain Woman as an able Philanthropist and a nurturer of Values: A Jain woman, who is a member of the congregation (*tīrtha*) like her male counterpart, supports her family and the community in building and preserving Jain Pilgrim and Community Centres. Classic example is the Devrani Jethani temple at the world famous Dilwara temple in Rajasthan built by two co-sisters. The first woman freedom fighter was a Jain woman, the heroic Queen Chennabhairadevi, of the 14th and 15th century who built the temple town of Gerusappa and ruled for 54 yrs with rare statesmanship, bravery and shone as patron of all religions and sects. Gerusappa was the capital of Salva kings, in Uttara Kannada, Karnataka. She was also known as the Pepper Queen who fought the Portuguese. Even today one can see the ruins of this temple town on the banks of the river Sharavathi.[11] Next is Kalaladevi, mother of Chamundaraya who inspired her son to install the highest monolith statue of Gommateshwara/Bahubali at Shravanbelgola. Attimabe, a Jain woman by birth was born in a warrior family in Tamilnadu, was a great philanthropist who earned the title 'dana-chintamani'.[12] She made available Jain literature in South India and her contribution is well known in South India. So she was invited by Kalala devi, mother of Chamundaraya to attend the first Mahamastakabhisek of Gommateshwara.[13] Tirumalai Jain temple in Tamilnadu is called as Kundavai Jinalaya as the Chola princess Kundavai gave donation for that temple.[14]

Even today the women support the men in conducting the *Cāturmāsa* (four-month rainy season when the ascetics stay in one place) and participate with great enthusiasm in religious ceremonies carried out in the Jain community not only in India but in US, UK, Belgium, Thailand and other countries where there is a sizeable Jain Diaspora. The women form Mahilā Maṇḍals, Śrāvikā Maṇḍals, Kanyā Maṇḍals, (Jain Women Groups), etc and these groups engage in spreading awareness about the teachings of the *Tīrthaṅkara Arhats* and carry out the religious and social activities which include *dāna* (charity), *shīla* (chastity), *tapa* (austerity) and *bhāva* (noble and spiritual character). A Jain woman nurtures these values in her children not by precept but by being an example for the child. Taking the child to the temple and to the pious saints, enchanting the child by taking him/her to the beautiful Jain religious pilgrim centres, telling them stories of *Tīrthaṅkaras* and other legen-dary tales, sending them to the *paṭhaśālā,* giving lessons in consciousness through food consciousness and fasting, singing *bhajans* and *stutis*, caring for the elderly at home, taking the child to a gośalā/pinjarāpole (animal welfare centres) or to an orphanage on his/ her birthday, taking to the religious rituals of *samāyika, pratikramaṇa, sallekhanā,* etc; she becomes a living example for the child to understand art of living and dying right through his formative years. A Jain child learns from his/her parents (more from the mother) to manage time, wealth and resources like water, electricity, etc judiciously and wisely for Jainism believes that there is life in earth, water, fire, air, plants and the 8.4 million species and none should be harmed and exploited. She teaches him *Jayaṇā/Yatnā* (carefulness/sensitivity towards six kinds of life-forms) besides other ethical and moral values and the importance of a bio-centric life-style in place of anthropocentric lifestyle which is accentuated right from childhood. She sows the seeds of non-violence, compassion and charity in her children at a very tender age, thus enabling them to be eco-warriors and non-violent

citizens contributing to sustainable development, peace and harmony for the larger good of mankind. The child also imbibes business and philanthropic acumen from both his parents and thus he becomes a worthy citizen contributing to the economic growth of the country and also to a peaceful society at large.

Jain Woman as a *Sādhvī*: The Jain female ascetics are addressed as *Sādhvī* or *Āryā* (Digambar tradition) and there are around 10,000 of them today who walk barefoot throughout the length and breadth of India to awaken the masses imparting valuable lessons related to the three great principles of *Ahimsā* (non-violence), *Anekānta* (non-absolutism) and *Aparigraha* (non-possesssion) as taught by *Tīrthaṅkara*s. There were 14,000 monks and 36,000 nuns in the order of the 24th *Tīrthaṅkara* Bhagwan Mahāvīra and Candanabālā was the first disciple who was born as a princess but sold as a slave girl. She is remembered for her extra-ordinary devotion, endurance, forgiveness and other virtues in the Jain community. She was instrumental in enabling Mahāvīra to complete his six month long fasting.[15] Brahmī and Sundarī were the daughters of King Ṛṣabha (who later on became the first *Tīrthaṅkara Ādinātha*) and their father taught them the Brahmī script (lipi) and mathematics respectively. He also taught the 64 arts and crafts to the women folk and empowered them to face the challenges of life.[16] Later on these young princesses took to renunciation and inspired their great warrior brother, Bahubali to give up false pride and become enlightened. Mahasati Madanrekha was another great Queen turned nun who faced many hardships and remained chaste protecting her *śīla* and also went to a battle-field and averted a fierce battle that would have broken between her two sons whom she gave birth to before embracing renunciation.[17]

Marudevī Mātā, mother of Ṛṣabhadeva was a celebrated lady who got enlightenment sitting on an elephant according to the Svetambara tradition.[18] Who can forget Mahāsatī Rajimati who was associated with the 22nd *Tīrthaṅkara* Ariṣṭanemi in his past eight births and in the last birth followed his footsteps on the pathway of liberation. When she was harassed and invited for mundane pleasures by Muni Rathnemi, younger brother of Ariṣṭanemi, she condemned his unworthy act and lectured him with prudence the importance of being steadfast on the great path of enlightenment. He later on atoned for his sins and purified himself.[19]

Names of few great Jain Women (*Mahāsatīs*): We come across narratives of great Jain Women in the Svetambar Jain canonical literature. These women characters in Jainism gave up their life but did not succumb to the pressures that life threw at them in different forms. So they were called *mahāsatīs* meaning great pious women who were steadfast in their commitment to truth and chastity. '*Sat*' means reality and '*satī*' means one who abides in reality and '*mahāsatī*' means one who never deviates from the noble path, come what may! The Jains venerate to the 16 great *mahāsatīs* like they pay their obeisance to the *Tīrthaṅkarās*. Ācārya Jaymalji Maharaj in his 'Chausath Sati Vandana' and 'Badi Sadhu Vandana' has eulogised and venerated the great Jain women saints and pious ladies who remained steadfast in chastity and their commitment to the triple-fold path of liberation which constitutes of right-vision (*samyak-darśana*), right-knowledge (*samyak-jñāna*) and right-conduct (*samyak-cāritra*).[20] Of the many pious women venerated in Jainism, names of 64 *mahāsatīs* are given in his 'Chausath Sati Vandana'.[21] One

needs to check out the Jain narrative literature for a better understanding of the role and place of women in Jainism. A sample specimen of the names and references are given here :-

S.No	Name	Reference
1.	Marudevi Mātā	Āvaśyaka Cūrṇi &Triśasṭī Śalāka Puruṣa Caritra
2.	Brahmī	Jambu dvipa Prajñapti
3.	Sundarī	Jambu dvipa Prajñapti
4.	Subhadrā	Antakṛtdaśā Sūtra
5.	Rajimatī	Uttarādhyayana Sūtra
6.	Devānandā	Bhagavatī Sūtra
7.	Candanabalā	Āvaśyaka Niryukti
8.	Draupadī	Jñātādharma Kathā Sūtra
9.	Sitā	Triśasṭī Śalāka Puruṣa Caritra
10.	Anjanā	Triśasṭī Śalāka Puruṣa Caritra & Padma Purāṇa
11.	Rukmini	Antakṛtadaśā Sūtra
12.	Mrgavati	Āvaśyaka Niryukti
13.	Madanrekha	Uttarādhyayana Sūtra
14.	Pottila	Jñātādharma Kathā Sūtra
15.	Revati	Bhagavatī Sūtra

All the *mahāsatīs* mentioned above and those not mentioned in the above list took to the *dharma puruṣārtha* through the observance of non-violence, self-restraint and austere practices giving up *artha* and *kāma puruṣārtha* in order to attain *mokṣa* and so they are venerated and eulogised in the Jain community. They demonstrated that the human body is the contrivance to cross the mighty ocean of birth and death and the soul is the ferryman which is beyond caste, creed, religion, gender, nationality, etc. Liberation is the shore which the great seers reach. Having the form of a man or a woman is due to the previously bound *nama-karma* (name and form determining *karma*) which is beyond one's control in this birth. One has different kinds of sensual and sexual inclinations due to the *mohanīya-karma* (delusion producing karma) which can be checked and altered for higher spiritual evolution.

Jain Woman as a *Tapasvī*: A Jain woman is aware of the transitory nature of the world and takes to some form of austerity in her day to day life. She outnumbers men in taking to fasting and other religious practices. A visit to a Jain prayer hall during the *cāturmāsa* period is a living testimony of the above statement. An ardent Jain woman engages in some kind of fasting or the other throughout her life be it *varṣītapa, siddhī tapa, vardhamāna tapa, kalyānaka tapa, etc.* She takes to them on a regular basis for soul-cleansing. These practices are one of the pillars of religious life and are central to the psyche of a Jain. Periodical fasting, intermittent fasting, *āyambil* (salt-less diet), fasting from sunset to sunrise, etc are the most favoured ones in the Jain community. All the *Ṭīrthaṅkaras* take to fasting and rigorous austerities to annihilate the karmas for liberation. The Jain women folk too emulate them and take to the 12-fold austerities like *anaśana*, eating less than required, conquering the desires and temptations, atonement, humility, scriptural study, meditation, detachment, etc. Fasting is primarily an expression of women's religiosity among Jains

and if a woman's fasting is spiritually beneficial to her, it is also useful in both spiritual and material ways to her entire family.[22] The women engage more than the men in the religious and austere practices. The children in the Jain community try to emulate their parents and so right from childhood these children try to nurture *yoga* in place of *bhoga* and also learn to stay *niroga*. Such austere practices attest to the creditworthiness of the entire family. It can also have a direct karmic effect on the well-being of other members of the family.[23]

Jain Woman as a *Pāṭhaśālā* Teacher: Jain women are generally not job seekers but sometimes are job givers. There are Jain women who are Chartered Accountants, Interior Designers, Jewellery Designers, Teachers, Entrepreneurs, Artists, Members of Self-help Groups, Social Workers who engage in religious and community projects, manage an NGO, Manḍal or a Trust. The Jain women householders are guided by the ascetic community in taking to numerous religious practices in order to evolve spiritually for one's inner well-being and holistic development. So the laywomen send their children to the *pāṭhaśālā* (Sunday schools) and many times they too master the Jain tenets and become *pāṭhaśālā* teachers and contribute to the larger good of the society. In Chennai alone there must be around 500 to 1000 *pāṭhaśālā* teachers, teaching at various *pāṭhaśālās, sanskāra vaṭikās, jñāna-śālās, svādhyāya kendras*, etc. There are many registered *pāṭhaśālā* teachers with the Jaina Federation of North America and UK not only learning and teaching the profound Jain Philosophy but practising in their day to day life also. Same is the case with every town and city in India where there is a considerable Jain population. Nowadays there are many Jain Women Social Groups who are active on the Social Media endorsing their religious and cultural identity.

Jain Woman as a Pilgrim giving *Garbha Saṁskāra*: A Jain Woman believes in imparting lessons on non-violence, self-restraint and austerity to the little one in the womb itself. This has been practised by the Jain women since ages. The mother of a *Tīrthaṅkara* to be sees the 14/16 auspicious dreams and nurtures the *garbha* beautifully. Following this the Jain women read and sing hymns like Namaskara Mahamantra, Bhaktamara Stotra, Baraha Bhavana, 14 Sapnā, etc and read/listen to the discourses on the sacred Jain lore during their pregnancy. They are extremely careful in nurturing the *garbha* with *sātvika* food, thoughts, etc. Such is the importance of motherhood for it is she who is the first teacher of man. If she is wise and compassionate, man learns to be non-violent and compassionate; and if she is not judicious, entire mankind has to pay a price for her short-sightedness.

Pujya Praveen Rishiji, a Jain monk has envisioned and designed the *Garbha Saṁskāra* Program[24] by which valuable *saṁskāra* are imparted to the *garbha* at the embryonic state by the mother to be. The lady has to be extremely careful in nurturing the womb with utmost positivity and carefulness in her day to day behaviour and conduct. She is advised not to take to spicy food, overuse of technology, indulge in sensual and sexual pleasures, avoid gossip and any kind of restlessness, give up the *kuvyasanas*, etc. On the other hand she is advised to take to simple, *sātvika* diet, go to the temple/ *upāśraya* (Jain prayer hall), listen to the discourses, read the sacred scriptures, take to *sāmāyika* and other rituals, enthusiastically take to *supātra dāna* (giving alms to the ascetics) and other kinds of charity like *āhāra dāna, auṣadha dāna, jñāna*

dāna, abhaya dāna; take to *maitri* (friendliness towards all beings), *pramoda* (appreciation of the worthy), *kāruṇya* (compassion) *mādhyastha* (indifference towards the wrong-doers) and other contemplations (*bhavanās*) and nurture the womb with saintly and noble thoughts. This gift of motherhood is unique to a woman, and so in the Jain community the Jain women are guided to be careful and take to the 12-fold contemplations and inner wisdom for the wellness of the life that she nurtures in her womb.[25]

An Ideal Jain Woman: On close examination of the Jain literature we understand that an ideal Jain woman is one who is endowed with extra-ordinary qualities. The Bhagavatī Sūtra[26] enumerates the qualities of an ideal Jain layman and the same are applicable to a Jain laywoman too and some of them are as follows. An Ideal Jain lay-woman is one who is :

I. Knowledgeable about the 9 *tattvas* and 6 subtances. She ought to be well-versed in the basics of Jain philosophy and metaphysics/*tattva-jñāna*.
ii. Does not depend on others for *dharma ārādhanā*.
iii. She is steadfast in her faith and none can deviate her from the path of the conquerors (*jinās*).
iv. She does not nurture any doubt regarding the revelations of the omniscients.
v. Participates in religious discussions to enhance in-depth knowledge about the realistic pluralistic Jain philosophy revealed through *pramāṇa* and *naya*.
vi. The means of livelihood are fare and just.
vii. Her doors are always open for charity.
viii. Takes to religious and spiritual living for six days in a month i.e., on the 8th, 14th and 15th day of the dark and bright fortnight.
ix. Is trustworthy, upright, righteous and reliable.
x. Observes the *vratas* and *niyamas* with utmost sincerity.
xi. Generously gives alms and serves the ascetic community.
xii. Serves her faith and takes to writing, debating, oration, singing, etc.
xiii. Nurtures very little desires and leads a contented life.
xiv. Minimizes the activities that cause violence to the six kinds of life forms.
xv. Takes to three *manorathas* (wishes) related to contentment, renunciation and noble death.
xvi. Adores the worthy ascetics and fellow pilgrims.
xvii. Atones for the sins at the time of sunrise and sunset and takes to the ritual of *pratikramaṇa*.
xviii. Always inclined to help fellow brethren.
xix. Regularly observes the vow of equanimity called *sāmāyika* and listens to the discourses related to the teachings of the *Jinas*.

Uniqueness of Jain Woman: Besides the above characteristics of an Ideal Jain Woman given in the Bhagavatī Sūtra, there are some noteworthy features observed in a Jain Woman and they are given below. A Jain woman is one who:

i. Is a member of the *caturvidha sangha*.
ii. Is *ātmārthī, paramārthī* and *mokṣārthī*. Has faith in the five supreme personalities.
iii. Takes to *svādhyāya* of the four *anuyogas* i.e., different aspects of religious literature.
iv. Is well-versed to guide, inspire and

teach her children the basic values related to art of living and facing the inevitable death using effective story-telling and communication skills.

v. Takes to *jayaṇā* and *dharma jagaraṇā,* whenever time permits.

vi. Takes to the 12-fold contemplation for self-realization and self-actualization.

vii. Observes godliness and cleanliness. She visits the temple/*upāśraya* and sometimes even inspires the family members to take to temple construction and/or group pilgrimages. Thus we find so many Jain temples worldwide and movement of Jain ascetic community in India. A Jain woman believes in simple living and high thinking. Keeps her home and neighbourhood clean. This springs from the philosophical and metaphysical grounding of Jain women.

viii. Takes to periodical fasting and other religious practices.

ix. Participates enthusiastically in the religious and community activities.

x. Takes to *yoga, prāṇāyāma, jāpa* etc.

xi. Takes to home remedies for common ailments, besides nature cure, ayurveda or homeopathy. Last resort would be the allopathic treatment. This is in sync with the *ahimsā* principle.

xii. Is generally socially and economically empowered. Of course there would be the weaker Jain women too. Although their percentage is not so high. In this case the other groups and members of the congregation come forward to help them with generous contributions in cash or kind. JITO is a prominent Jain organization which empowers the weaker Jains across India.

xiii. Manages the family, finance, resources, guests, etc with *vinaya* (humility) and *viveka* (wisdom). The same are inculcated in the children also.

xiv. Does not hoard the wealth but keeps the wealth in circulation through investment and charity.

xv. Does not take to the usage of animal products leather, silk, ivory, etc and also harmful foods. Is health conscious and avoids all harmful foods which may be packaged or otherwise. A Jain woman and an ardent Jain family follow vegetarianism strictly and sometimes even veganism. The ardent Jain woman avoids underground roots and stems too. This is in accordance with the *ahimsā* doctrine.

xvi. Spends her time, energy and knowledge in nurturing and holistically empowering the family and the community.

xvii. Takes to open religious book and other exams, participates in religious and cultural competitions and programs and annual camps, etc.

xviii. She tries to conquer her senses and passions and tread on the path of spirituality.

Conclusion: Thus a Jain woman stands as an ideal of austerity, tolerance, forgiveness, compassion, non-violence, equanimity, like her male counterpart. Bhagwan Mahāvīra gave equal importance to the women folk and said that they too can evolve to the higher levels of perfection and emancipation by living a life full of virtues. It is values that make or break a person. If society is at cross roads today, it is because the values that pass on from one generation to another through men and women has suffered a serious setback and this is due to the ever increasing influence of materialistic culture impounding our society from all quarters and also due to the women folk being ignorant of the importance

of human life and their role and place in preserving mankind.

In modern times of terrorism and drug trafficking, where the women folk and children are also not spared and are so vulnerable to trafficking, it is important to understand the Jain community model and values that govern this minority Jain community which is just 0.04 of the Indian population. There is no punishment under Indian Penal Code for the women folk who observe the minor vows and non-violent lifestyle and are careful not to take to the transgressions of the *aṇuvratas* (minor vows). One needs to re-visit the culture and tradition of the Jains which gives prominence to inner well-being and self-actualization, simple living and high thinking, sustainable development through eco-friendly lifestyle, economic and social empowerment of all stakeholders; where there is no scope for any exploitation be it of women or the valuable resources, and where there is equal enjoyment of human rights and where the rights of the animals and every member of the environment is protected.

References

1. Daśavaikalika Sūtra, Ed. Madhukar Muni, Pub by Sri Agam Prakashan Samiti, Beawar
2. Jain Dharma Ka Maulik Itihasa, Hastimalji MaSa, Pub By Samyak Gyan Pracharak Mandal, Jaipur
3. Ibid
4. Fundamentals of Jainism, Vijaya Arya, Trans by Priyadarshana Jain, Pub by Diwakar Prakashan, Agra
5. Avaśyaka Sūtra, Ed. Madhukar Muni, Pub by Sri Agam Prakashan Samiti, Beawar
6. Ibid
7. Ratnakaranda Shravakacahar, Samantabhadra, Pub by Vitarag Vigyan Svadhyaya Mandir Trust, Ajmer
8. Upasakadasāṅga Sūtra, Ed. Madhukar Muni, Pub by Sri Agam Prakashan Samiti, Beawar
9. Bhagwati Sūtra, 12.2 Ed. Madhukar Muni, Pub by Sri Agam Prakashan Samiti, Beawar
10. Jain Community-Wikipedia
11. www.jainheritagecentres.com
12. Tamizhum Samanamum, Mylai Seeni Venkatasamy, Pub by Naam Tamizhar Publications
13. Bhagwan Shri Rishabh dev's Son, Gommatesh Bahubali, Dr.Chakravarthi Nainar Devakumar, Pub by Arinjaya and Tathagat Jain, New Delhi
14. Jain Sites of TamilNadu, www.ifpindia.org
15. Jain Dharma Ka Maulik Itihasa, Hastimalji MaSa, Pub By Samyak Gyan Pracharak Mandal, Jaipur
16. Ibid
17. Uttarādhyayana Sūtra, Ch 9, Ed. Madhukar Muni, Pub by Sri Agam Prakashan Samiti, Beawar
18. Ibid
19. Uttarādhyayana Sūtra Ch 22 and Daśavaikālika Sūtra, Ch 1,Ed. Madhukar Muni, Pub by Sri Agam Prakashan Samiti, Beawar
20. Chausath Sati Sajjhāya, By Jaymalji Ma.Sa. Pub by Jaymal Jain Parshwa Padmodaya Foundation, Chennai
21. Ibid Pg 19-22
22. The Essence of Jainism, K.N.Upadhyaya, Pub by Radha Soami Satsang, Beas
23. Ibid
24. www.anandtirth.com
25. Barah Bhavanā, Dr. Hukumchand Bharill, Pub by Pt Todarmal Smarak Trust, Jaipur
26. Bhagawati Sūtra, Ch 2.5 Ed. Madhukar Muni, Pub by Sri Agam Prakashan Samiti, Beawar

-Asst Prof & Head, Dept of Jainology, University of Madras, Chennai-5

Some Pearls

- Everyone may not be good but there's always something good in everyone. Never judge anyone easily because every saint has a past and sinner has a future.
- If you want to change the fruits you will first have to change the roots. If you want to change the visible, you must first change the invisible.

-Mrs. Minakshi D. Jain, 17/729, CHB, Jodhpur (Raj.)

10 जनवरी 2020
जिनवाणी 65
ISSN 2249-2011

तत्त्वबोध

कैसे बनें श्रुत-पारगामी?

श्री पारसमल चण्डालिया

''**ण**मो चउवीसाए तित्थयराणं उसभाइ महावीरपज्जवसाणं...''-इस अवसर्पिणी काल में भगवान ऋषभदेव से लेकर भगवान महावीर स्वामी पर्यन्त 24 तीर्थङ्कर भगवन्त हुए। वे चार घनघाति कर्मों का क्षय कर सर्वज्ञ सर्वदर्शी बने। स्वयं पूर्ण बनने के बाद उन्होंने संसार के समस्त जीवों को दुःखमुक्त और पाप मुक्त करने की भावना से तीर्थ की स्थापना की। जगत् के उद्धार के लिए उपदेश फरमाया, अनेकों के अज्ञान अन्धकार को दूर करके स्वयं मोक्ष पधारे और भव्यजनों के लिए मोक्षमार्ग का प्रतिपादन किया।

तीर्थंकर जगत् के यथावस्थित अर्थ को बतलाते हैं। कहा भी है-**'अत्थं भासइ अरहा सुत्तं गंथंति गणहरा णिउणं'** (आवश्यक निर्युक्ति 192) तीर्थङ्कर द्वारा फरमाये अर्थरत्न को गणधर सूत्र में गूँथते हैं। तीर्थंकरों की अनुपस्थिति में गणधर शासन की धुरा सम्भालते हैं और भव्यजीवों के उपकार के लिए सूत्रों की रचना करते हैं जो आज भी विद्यमान है।

वर्तमान अवसर्पिणी के अन्तिम तीर्थङ्कर श्रमण भगवान महावीर स्वामी मोक्ष पधारे। गौतम गणधर आदि भी मोक्ष पधार गये। तत्पश्चात् पाट परम्परा अनुसार आचार्य शासन नायक बने। वीर निर्वाण के 1000 वर्ष बीते तब तक जिनवाणी आगमसूत्रों को कण्ठस्थ रखने की प्रथा रही-शिष्य को गुरुमुख से वाचना-सूत्रार्थ मिलता, बार-बार के परावर्तन से स्मृति तीक्ष्ण बनती-स्मरण शक्ति तेज रहती। वे पुस्तक रखने को प्रमाद मानते और संयम-जीवन में सजग और अप्रमत्त रहने में ही उस समय के साधुओं का प्रचण्ड पुरुषार्थ था, परन्तु गिरता काल, मति-मन्दता, प्रमाद-वृद्धि और प्रकृति-प्रकोप-दुष्काल आदि कारणों से परिवर्तन आया। वीर निर्वाण की दूसरी सदी के उत्तरार्द्ध में दुष्काल पड़ा, परन्तु चौदह पूर्वधर जैसे वाचनादाता और स्थूलिभद्र जैसे मति मार्तण्ड की उपस्थिति में श्रुत खजाने का अधिक नुकसान नहीं हुआ।

वीर निर्वाण की नवीं सदी में बारह वर्षों के विनाशकारी दुष्काल से परिस्थिति बहुत ही विकट बन गई, आहार पानी की समस्या के कारण श्रुतसेवी साधुओं की परेशानी बढ़ती गई और श्रुतसागर सूखने लगा। दुष्काल के अन्त में मथुरा नगरी में आचार्य स्कन्दिल के नेतृत्व में बची हुई श्रुत समृद्धि को जीवित रखने के उद्देश्य से श्रमण समुदाय एकत्रित हुआ। श्रमणों द्वारा अत्यन्त परिश्रम पूर्वक सुरक्षित रखी हुई श्रुत स्मृति के आधार पर आगम पाठों का संकलन हुआ। यह वाचना **स्कन्दिली** या **माथुरी वाचना** के नाम से प्रसिद्ध हुई। इसी बीच **वलभी** में **आचार्य नागार्जुन** के नेतृत्व में भी एक वाचना हुई। दोनों ही वाचनाओं में मुख्यतया ग्यारह अंगों का संकलन हुआ। दोनों आचार्यों के साक्षात् मिलन के अभाव में और स्मृति भेद के कारण दोनों वाचनाओं में पाठ भेद होना सहज था। पुनः **वीर निर्वाण सम्वत् 980** में दुष्काल के कारण **देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमण** की नेश्राय में संघ एकत्रित हुआ और उपलब्ध सभी पाठों का संकलन हुआ, आगम आदि शास्त्र पुस्तकारूढ हुए। उस समय उपलब्ध स्कन्दिली और नागार्जुनीय वाचनाओं में से दूसरी वाचना को पाठान्तर रूप में स्वीकार किया गया। क्योंकि वीर निर्वाण की छठी सदी में युग प्रधान आर्यरक्षित सूरि के समय में तथा **माथुरी** एवं **वल्लभी वाचना** में आगमों को संगृहीत करने का प्रयास हुआ, आगमों का संकलन हुआ। वर्तमान आगमों के पद-परिमाण को देखते हुए लगता है कि दुष्काल, पठन-पाठन में आई कमी के कारण आज जो श्रुतसम्पदा उपलब्ध है उसकी अपेक्षा

बहुत कुछ लुप्त हो गया है।

आज तीर्थङ्कर, गणधर, केवली नहीं, मन:पर्यवज्ञानी, अवधिज्ञानी नहीं, मात्र मति-श्रुत ज्ञानी हैं, अत: वर्तमान में यदि किसी का आधार है, तो एकमात्र जिनवाणी का, उपलब्ध श्रुत सम्पदा, उपलब्ध आगम साहित्य का। हमारे परम उपकारी सुधर्मा स्वामी द्वारा रचित 12 अंगों में से वर्तमान में दृष्टिवाद का विच्छेद हो गया। शेष आचारांग आदि 11 अंग, अंगप्रविष्ट और 12 उपांग, 4 मूल, 4 छेद, आवश्यक आदि अंग बाह्य कुल 32 आगम (श्वेताम्बर मूर्तिपूजक मान्यतानुसार कुल 45 आगम) उपलब्ध हैं।

पञ्चांगी का स्वरूप

आगम सूत्रों को समझने के लिए पूर्वाचार्यों द्वारा निर्युक्ति, भाष्य, चूर्णि और टीकाएँ रची गईं। सूत्रों के साथ इन चार को मिलाने से पञ्चांगी कहलाती है। पञ्चांगी का स्वरूप इस प्रकार है-

1. सूत्र-अर्थ रूप में तीर्थंकर द्वारा भाषित और सूत्र रूप में गणधर द्वारा ग्रथित आगम।

2. निर्युक्ति-आगमों के मूल सूत्र पर निर्युक्ति होती है, जिसकी शैली संकोचशील तथा गूढ़ होती है। भाषा प्राकृत और पद्यमय होती है। पारिभाषिक शब्दों की व्याख्या ही इसका मुख्य उद्देश्य होता है। किसी भी विषय का विस्तृत विवेचन निर्युक्ति में नहीं होता। एक शब्द के अनेक अर्थ होते हैं, किस प्रसंग पर कौनसा अर्थ संबद्ध है इसका जो निर्णय करती है उसे **'निर्युक्ति'** कहते हैं। जैन आगमों के पारिभाषिक शब्दों की व्याख्या करने के लिए निर्युक्तिकार के रूप में आचार्य भद्रबाहु स्वामी का नाम प्रसिद्ध है। भद्रबाहु स्वामी ने आवश्यक, दशवैकालिक, उत्तराध्ययन, आचारांग, सूत्रकृतांग, दशाश्रुतस्कन्ध, वृहत्कल्प, व्यवहार, सूर्यप्रज्ञप्ति और ऋषिभाषित इन पर निर्युक्ति रची। निर्युक्ति आगमों पर ही होती है, परन्तु सभी आगमों पर निर्युक्ति नहीं रची गई।

3. भाष्य-निर्युक्ति की शैली गूढ़ और संक्षिप्त होती है, उसमें रहे गूढ़ार्थ का विवेचन करने के लिए निर्युक्ति के आधार पर अथवा स्वतंत्र रूप से प्राकृत पद्यमय भाषा में भाष्य रचे गये। निर्युक्ति में विविक्त किये हुए पारिभाषिक शब्दों के अर्थ बाहुल्य को अभिव्यक्त करे उसे **'भाष्य'** कहते हैं। कितने ही भाष्य निर्युक्ति पर होते हैं तो कितनेक भाष्य मूल सूत्र पर होते हैं। जैसे सभी आगमों पर निर्युक्ति नहीं हैं वैसे ही सभी आगमों पर भाष्य भी नहीं लिखे गये हैं। भाष्यकार के रूप में आचार्य श्री जिनभद्रगणि क्षमाश्रमण तथा संघदास गणि के नाम विशेष रूप से प्रसिद्ध हैं। आचार्य श्री जिनभद्रगणि क्षमाश्रमण ने विशेषावश्यक भाष्य एवं जीतकल्पभाष्य की तथा संघदास गणि ने बृहत्कल्प लघु भाष्य तथा पंच कल्प महाभाष्य की रचना की है।

4. चूर्णि-आगम ग्रन्थों के प्राकृत पद्यमय निर्युक्ति और भाष्य को गद्यात्मक शैली में विशद करने की दीर्घ दृष्टि भरी भावना से आचार्यों ने प्राकृत अथवा संस्कृत मिश्रित प्राकृत में जो कुछ विस्तृत व्याख्याएँ रची हैं, वे **'चूर्णि'** कही जाती हैं। आगमेतर साहित्य कर्मप्रकृति आदि पर भी चूर्णियाँ रची गई है।

5. वृत्ति (टीका)-निर्युक्ति, भाष्य, चूर्णि के बाद स्थान है वृत्ति का, जिसमें प्रत्येक विषय का विस्तृत विवेचन होता है। शाब्दिक बाहुल्य के साथ पदार्थ बाहुल्य भी होता है। इस प्रकार की ग्रन्थ रचनाएँ वर्तमान में विद्यमान हैं। प्रमुख टीकाकार के रूप में आचार्य शीलाङ्क, हरिभद्र और अभयदेवसूरि प्रसिद्ध हैं। श्री अभयदेव सूरि ने नौ अंगों पर टीकाएँ लिखी। वे नवांगी टीकाकार के रूप में प्रसिद्ध हुए।

पञ्चांगी में सूत्र का महत्त्व

उपर्युक्त पञ्चांगी में तीर्थङ्कर भाषित आगम सूत्र एवं सिद्धान्त सर्वोपरि हैं। क्योंकि मूल सूत्र ही पञ्चांगी का आधार है। जैसे पुरुष के अंगों में मस्तिष्क सर्वोपरि है वैसे ही समय पुरुष-सिद्धान्त पुरुष के पाँच अंगों में सूत्र, मस्तिष्क की भाँति सर्वोपरि है। आगम सिद्धान्तों को समझने में व्याख्या-साहित्य मात्र सहयोगी है। व्याख्या-साहित्य की वही बात मान्य की जाती है जो

आगम आधारित है अथवा आगम वाणी को पुष्ट करती है। आगम रूपी मस्तिष्क से अनुप्रेक्षा करके ही शेष पञ्चांगी पर विचारणा करना योग्य है। सूत्र से विरुद्ध कोई विधान मान्य नहीं है भले ही वह टीका या ग्रन्थ आदि में हो। कवि आनन्दघन जी ने श्री नमिनाथ जिन स्तवन में कहा है-

चूरणि भाष्य सूत्र निर्युक्ति वृति परम्पर अनुभव रे।
समय पुरुष ना अंग कहिया ए, जे छेदे ते दूरभव रे।।
नमि जिनवर ना चरण उपासक, षड्दरसन आराधे रे..

श्रुताभ्यास की आवश्यकता

भगवान महावीर का शासन 21,000 वर्ष तक चलेगा। पाँचवें आरे के अन्त तक जिनवाणी रहेगी। जिनवाणी-श्रुत आगम को सुरक्षित रखने का दायित्व चतुर्विध संघ का है। वर्तमान में चतुर्विध संघ के प्रमुख घटक साधु-साध्वी तो आगम स्वाध्याय करते ही हैं, पर शेष दो घटकों श्रावक, श्राविकाओं को भी आगम पढ़ने चाहिए। बिना आगम ज्ञान किये वे **'अम्मापियरो'** की भूमिका नहीं निभा सकते हैं। आज कुछ लोग तर्क देते हैं कि श्रावक श्राविकाओं को सूत्र नहीं पढ़ने चाहिए, किन्तु यह बात आगम से मेल नहीं खाती है। श्रावक सूत्रों का पठन-पाठन कर सकते हैं। समवायांग सूत्र एवं नन्दी सूत्र में श्रावकों के लिए **'सुयपरिग्गहा तवोवहाणाइं'** तथा उत्तराध्ययन सूत्र में **'णिग्गंथे पावयणे सावए से वि कोविए...' 'सीलवंता बहुस्सुया'** कहा है इन पाठों से तथा अन्यान्य सूत्र पाठों से श्रावकों का सूत्र पढ़ना उचित साबित होता है। ज्ञान के चौदह अतिचार श्रावक के भी बताये हैं। समकित के 67 बोल में प्रभावना आठ में कहा है-**'जिस काल में जितने सूत्र उपलब्ध हों उतने पढ़ें और अन्य जीवों को प्रतिबोध देकर उनकी उन्नति करें।'**

दशवैकालिक सूत्र, अध्ययन 9, उद्देशक 4 में चार प्रकार की समाधि बताई है-उसमें एक है श्रुत-समाधि। श्रुत समाधि का वर्णन करते हुए बताया है कि श्रुताभ्यास क्यों करना चाहिये और उसका फल क्या है?

णाणमेगग्गचित्तो य ठिओ ठावयइ परं।
सुयाणि य अहिज्जित्ता, रओ सुयसमाहिए।।

शास्त्रों का अध्ययन करने से ज्ञान की प्राप्ति होती है। चित्त वृत्ति अचल होकर एकाग्र हो जाती है। आत्मा अहिंसा, सत्य आदि आत्मिक धर्म में पूर्णत: स्थिर हो जाती है। जिससे धर्म से गिरते हुए या डिगे हुए अन्य जीवों को भी धर्म में पुन: स्थिर करने का सामर्थ्य प्राप्त हो जाता है, इसलिए साधक सदैव श्रुत समाधि में संलग्न रहे अर्थात् अन्य सभी आवश्यक कार्यों से समय निकाल कर स्वमत और परमत के पूर्ण ज्ञाता आचार्य, उपाध्याय के पास श्रुत शास्त्रों का अध्ययन करे।

उपसंहार

प्राचीनकालीन श्रावक श्राविकाएँ श्रुतपारगामी एवं आगम अभ्यासी थे। वर्तमान में (श्वेताम्बर) स्थानकवासी समाज में विद्वान् जैन पण्डितों की अत्यन्त कमी है। श्रुत-सम्पदा को सुरक्षित रखने के लिए वर्तमान में भी ऐसे श्रुत अभ्यासी आगम मर्मज्ञ जैन पण्डित श्रावक-श्राविकाओं की नितान्त आवश्यकता है। इसके लिए जरूरी है कि श्रावक-श्राविकाएँ समय निकाल कर विद्वान् आचार्य, उपाध्याय, श्रुतधर गुरु भगवन्तों के सान्निध्य में उनके निर्देशानुसार उपर्युक्त पञ्चांगी का अध्ययन करें, स्वाध्याय कर शंकाओं का समाधान प्राप्त करें। सूत्रों के पुस्तकारूढ़ हो जाने के बाद आज आगम बत्तीसियाँ तो स्थानकों में उपलब्ध हैं, पर आगमपाठी श्रावक-श्राविकाओं की कमी है। आगम उपलब्ध होने पर भी कई बातें ऐसी हैं जो गुरु से समझने की आवश्यकता रखती हैं। गुरु से समझे बिना उनका यथार्थ स्पष्टीकरण नहीं हो सकता। अत: गुरु भगवन्तों के सान्निध्य में रहकर आगम धारणाओं को समझें, समझाएँ तो ही श्रुत-पारगामी बन सकते हैं। यदि हम ऐसा कर पाते हैं तो यह जिनशासन की महती सेवा होगी।

- 7/14, उत्तरी नेहरू नगर, विट्ठल बस्ती, नेहरू गेट, ब्यावर-305901 (राज.)
(मो.) 9413787333

10 जनवरी 2020
जिनवाणी 68
ISSN 2249-2011

तत्त्व-चर्चा

आओ मिलकर कर्मों को समझें (2)

श्री धर्मचन्द जैन

जिज्ञासा– कर्म पुद्गल आत्मा पर कब से लगे हुए हैं?

समाधान– कर्म पुद्गल आत्मा पर अनादि काल से लगे हुए हैं। जिस प्रकार से जमीन के अन्दर खदानों में रहे हुए सोने के साथ रेत, कंकर, पत्थर आदि लगे हुए रहते हैं। वे रेत, कंकर आदि कब से लगे हैं, तो कहना होगा जब से सोना खदान में है तभी से लगे है। गाय-भैंस-बकरी आदि के दूध से भी समझ सकते हैं कि उस दूध में पानी कब से मिला है, तो कहना होगा जबसे दूध है तभी से उसमें पानी का अंश मिला हुआ ही रहता है। इसी प्रकार जीव जब से संसार में जन्म-मरण कर रहा है, राग-द्वेषादि भाव कर रहा है तब से उसके कर्म पुद्गल भी लगे हुए हैं, अत: आगमकारों ने अनादि काल से लगना बतलाया है। क्योंकि जीव अनादि काल से कर्मों के कारण ही संसार में जन्म-मरण कर रहा है।

जिज्ञासा– कर्म पुद्गल आत्मा पर क्यों चिपकते हैं?

समाधान– यद्यपि आत्मा का शुद्ध स्वभाव वीतराग भाव में स्थिर रहना है, तथापि अनादि काल से राग-द्वेष, काम-क्रोध-लोभ-मोह आदि के संस्कार होने के कारण कर्म पुद्गल आत्मा पर चिपक जाते हैं। आत्मा स्वभाव से अरूपी है तथा कर्म पुद्गल रूपी है। अरूपी के साथ रूपी का सम्बन्ध कैसे हो सकता है? समाधान रूप में कहा जा सकता है कि पूर्व बद्ध कर्मों के उदय के कारण राग-द्वेषादि विकारी भाव आत्मा में पैदा होते हैं। विकारी भावों के कारण से आत्म-प्रदेशों में स्पन्दन होता है, आत्म-प्रदेशों के स्पन्दन से मन-वचन-काया की प्रवृत्ति होती है, इस प्रवृत्ति से कर्म पुद्गल आत्मा पर एक क्षेत्रावगाह होकर चिपक जाते हैं। दूसरे शब्दों में जीव की मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय और योगों की प्रवृत्ति से कर्म पुद्गल आत्म-प्रदेशों से बन्ध जाते हैं। पूर्व में बन्धे हुए कर्म पुद्गलों पर नये कर्म पुद्गल बन्धते रहते हैं।

जिन आकाश प्रदेशों में आत्मा रहती है, उन्हीं आकाश प्रदेशों पर कर्म पुद्गल चिपक जाते हैं, उसे एक क्षेत्रावगाह सम्बन्ध कहते हैं। कर्म ही कर्मों को खीचते हैं अर्थात् भाव कर्मों से द्रव्य कर्मों का बन्ध होता है और द्रव्य कर्मों के उदय से भाव कर्म उत्पन्न होते हैं, इस प्रकार कर्मों के बन्ध-उदय का चक्र चलता रहता है।

जिज्ञासा– कर्म पुद्गलों की क्या-क्या विशेषताएँ हैं?

समाधान– कर्मग्रन्थ भाग-5 में, पञ्चसंग्रह भाग-2 में तथा भगवती सूत्र शतक-12 उद्देशक-4 में आठ प्रकार के पुद्गल बतलाये हैं-औदारिक, वैक्रिय, आहारक, तैजस, कार्मण, श्वासोच्छ्वास, भाषा और मन के पुद्गल।

कर्म पुद्गलों की विशेषताएँ इस प्रकार हैं-

1. ये पुद्गल सम्पूर्ण लोक में फैले हुए हैं।
2. ये चतु:स्पर्शी तथा अनन्त प्रदेशी स्कन्ध के रूप में होते हैं।
3. ये सूक्ष्म पुद्गल सूक्ष्म रज के समान गतिशील होते हैं।
4. जो कर्म पुद्गल जिस जीव के आत्म प्रदेशों के अत्यन्त निकट होते हैं, अनन्तर अवगाढ अर्थात् आत्म प्रदेशों पर रहे हुए होते हैं, वे ही कर्म पुद्गल उस जीव के बन्धते जाते हैं। दूर रहे हुए कर्म पुद्गल उस जीव के नहीं बन्धते हैं।
5. सभी कर्म पुद्गलों में 5 वर्ण, 2 गन्ध, 5 रस तथा 4 स्पर्श (शीत, उष्ण, स्निग्ध, रुक्ष) इस प्रकार कुल 16 वर्णादि होते हैं।
6. सभी कर्म पुद्गलों की स्थिति जघन्य एक समय से लेकर उत्कृष्ट असंख्यात काल (असंख्यात

उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी के समय प्रमाण) तक की होती है।

7. कर्म पुद्गल विस्रसा परिणमन अर्थात् स्वाभाविक रूप से कभी भी बदल सकते हैं। अर्थात् जो आज कर्म पुद्गल के रूप में हैं वे कभी भी अन्य रूपों में अर्थात् सात प्रकार के पुद्गलों में से किसी भी रूप में बदल सकते हैं। असंख्यात काल के बाद तो उनमें बदलाव हो ही जाता है।

जिज्ञासा- कर्म बलवान है अथवा आत्मा?

समाधान- यद्यपि कर्मों की शक्ति भी अनन्त है और आत्मा का सामर्थ्य भी अनन्त है फिर भी यह कहा जा सकता है कि अज्ञान अवस्था में कर्म अधिक बलवान हो जाते हैं, क्योंकि वे जीवों को अनेकानेक तरह से दु:खी बनाने में सहायक बन जाते हैं। किन्तु जब आत्मा जागृत बन जाती है, ज्ञान भाव को विशेष रूप से प्रकट कर लेती है तब आत्मा बलवान बन जाती है, कर्मों को पछाड़ देती है और अपने वास्तविक स्वरूप को प्रकट कर शाश्वत सुखों में लीन बन जाती है।

जब तक शेर सोया हुआ है तब तक चूहा भी बलवान हो जाता है और जागृत होते ही शेर बलवान बन जाता है।

जिज्ञासा- कर्मों के बन्ध से छुटकारा कैसे हो सकता है?

समाधान- यद्यपि प्रवाह की अपेक्षा से कर्मबन्ध अनादि काल से होता आ रहा है, फिर भी यदि किसी कर्म विशेष की अपेक्षा से विचार करें तो एक बार के बन्धे हुए कर्म पुद्गल अधिक से अधिक 70 कोटाकोटि सागरोपम तक आत्मा के साथ लगे रह सकते हैं, उसके बाद तो वे कर्म पुद्गल आत्मा से अलग हो ही जाते हैं। उससे पहले यदि कर्मों से छुटकारा पाना हो तो जीव को अपनी विशुद्धि बढ़ानी होती है। क्रोधादि कषायों के त्याग करने से विशुद्धि बढ़ती है। कर्मों के उदय में मन्दता होने पर विशुद्धि बढ़ पाती है। क्षमा, सरलता, विनम्रता, निर्लोभता धारण करने से विशुद्धि विशेष रूप से वृद्धिंगत होती है।

बन्धे हुए कर्मों का अबाधाकाल पूर्ण होने पर जब वे फल देते हैं, उस समय सावधान रहना, समता में रहना, साक्षी भाव में रहना, किसी व्यक्ति, वस्तु, परिस्थिति को दोष नहीं देना, उन्हें मात्र निमित्त मानना, अपने ही किये हुए कर्मों का फल मानकर समता भाव में स्थिर रहना, दूसरों के दोषों को न देखकर उनके गुणों को देखकर उनकी अनुमोदना करना, स्वयं के दुष्कृत्यों की बार-बार आलोचना-निन्दा-गर्हा करना, अनित्यादि भावनाओं का चिन्तन करना, मैत्री-करुणा-प्रमोद और माध्यस्थ भावना से पूरित जीवन जीना आदि-आदि ये ऐसे उपाय हैं, जिन्हें पूरी तरह अपनाने से पूर्व में बन्धे हुए कर्मों से छुटकारा भी मिलता है तथा नये कर्म-बन्धनों से भी जीव बच जाता है।

जिज्ञासा- 'किये हुए कर्मों को भोगे बिना मुक्ति नहीं होती' इस कथन का क्या आशय है?

समाधान- "कडाण कम्माण न मोक्ख अत्थि।" अर्थात् किये हुए कर्मों का फल भोगे बिना मुक्ति नहीं होती। इस कथन का आशय तीन प्रकार से समझा जा सकता है-

1. जो कर्म जीव ने बाँधे हैं उनका प्रदेश उदय (बिना अनुभूति) तो अवश्य ही आता है, किन्तु विपाक उदय (फलानुभूति) आये अथवा नहीं भी आये। स्थिति-अनुभाग के विपाक उदय को अपवर्तनाकरण के द्वारा घटाया जा सकता है और उद्वर्तनाकरण के द्वारा बढ़ाया भी जा सकता है।
2. जो कर्म तीव्र संक्लेश परिणामों में अथवा विशेष परिणामों में बन्धे हैं, उनमें से उनका जितना भाग निकाचित बन्धा है, उतने कर्मों का फल जीव को प्राय: भोगना पड़ता है। निकाचित में भी जो गाढ़ निकाचित बन्ध होता है, उसमें परिवर्तन नहीं होता। सामान्य निकाचित बन्ध को अनुप्रेक्षा स्वाध्याय एवं शुक्लध्यान की उत्कृष्टता से घटाया भी जा सकता है।

3. जिस गति, जाति आदि का, जीव वर्तमान भव में आयुबन्ध कर लेता है तो उस जीव को उस गति, जाति में जन्म लेना ही पड़ता है, इस अपेक्षा से आयु कर्म का फल भी जीव को भोगना ही पड़ता है। बन्धे हुए आयुकर्म की स्थिति-अनुभाग में तो यदा-कदा परिवर्तन भी हो सकता है, किन्तु गति-जाति में परिवर्तन नहीं होता।

निकाचित के अलावा शेष बन्धे हुए कर्मों में जीव परिणाम विशेष से परिवर्तन भी कर सकता है, उन्हें उसी रूप में भोगना आवश्यक नहीं है। संक्रमण, उद्वर्तन, अपवर्तन, उदीरणा, उपशमना, विसंयोजना आदि के द्वारा बन्धे हुए कर्मों में परिवर्तन किया जा सकता है। वर्तमान की सजगता, समता एवं सहनशीलता से कर्मों की निर्जरा भी की जा सकती है।

जिज्ञासा- निर्जरा कर्मों की होती है अथवा नो कर्मों की?

समाधान- आत्मा के बन्धे हुए कर्म जब अपना फल देकर अथवा बिना फल दिये भी आत्मा से अलग हो जाते हैं तो उसे निर्जरा कहते हैं। पूर्व के बन्धे हुए कर्म-पुद्गल ही आत्मा से अलग होते हैं, इस अपेक्षा से कर्मों की निर्जरा होना कहा जाता हैं। दूसरी अपेक्षा से विचार करें तो बन्धे हुए कर्म जब तक उदय में रहते हैं, तब तक वे कर्म कहलाते हैं। आत्मा से अलग होते ही वे कर्म पुद्गल (कार्मण वर्गणा के पुद्गल) कहलाते हैं, उन पुद्गलों को भगवती सूत्र में नो कर्म कहा गया है, अतः नो कर्मों की निर्जरा होती है, ऐसा भी उल्लेख मिलता है। नो कर्म अर्थात् जो अब कर्म रूप में नहीं है, अपितु कार्मण वर्गणा के रूप में है। अगरबत्ती के उदाहरण से भी कर्म-नो कर्म को मोटे रूप में समझा जा सकता है। जैसे अगरबत्ती का जितना हिस्सा जल रहा है, वह कर्म के उदय का प्रतीक है तथा जो भाग जल चुका है, राख बन चुका है, वह नो कर्म का प्रतीक है। जलने के बाद ही वह राख बन चुका हिस्सा, अगरबत्ती से अलग होता है। ठीक इसी प्रकार से कर्म उदय में आ चुकने के बाद अगले समय में आत्मा से अलग होते हैं, तो उन्हे नो कर्म की निर्जरा कह दी जाती है।

सारांश रूप में यह कहा जा सकता है कि पूर्व पर्याय की अपेक्षा से कर्मों की निर्जरा मानना चाहिए तथा वर्तमान पर्याय की अपेक्षा से नो कर्मों की निर्जरा मानना चाहिए।

(क्रमशः)

-रजिस्ट्रार, अखिल भारतीय श्री जैन रत्न

ऐसे जीएँ

श्री निर्मल जामड़

कुछ शौक ऐसा किया करो।
फिर उसके बाद जिया करो।।
इस बहके बहके दौर में,
इन्सान खो रहा है शोर में।
कभी मन का आईना देखकर,
पहचान ख़ुद की किया करो।।1।।
दुनिया में आने का सिला,
क्या-क्या मिला, क्या न मिला।
खुशियाँ मिले तो बाँट लो,
ग़म होले-होले पिया करो।।2।।
चाहत ही दूरी बढ़ाती है,
ख़ुद अपना वज़ूद घटाती है।
हम सबके हैं, सब अपने हैं,
ऐसी दुआएँ किया करो।।3।।
हम सब हैं, प्यासे प्यार के,
कोई संग के, कोई रंग के।
आँखें कहें तो, दिल सुने,
होठों को अपने सिया करो।।4।।
कुछ शौक ऐसा किया करो।
फिर उसके बाद ज़िया करो।।

-2/175, जवाहर नगर, जयपुर-302004 (राज.)
9929747906

10 जनवरी 2020
जिनवाणी 71
ISSN 2249-2011

स्वास्थ्य-विज्ञान

श्वसन क्रिया हो सम्यक्

डॉ. चंचलमल चोरडिया

यदि किसी भिखारी को लाखों रुपये देने के बदले दस से पन्द्रह मिनट तक श्वास रोकने के लिये कहें तो वह उसके लिये तैयार नहीं होगा। ऐसी अमूल्य श्वसन क्रिया हमारे स्वयं के द्वारा जन्म से मृत्यु तक अनवरत संचालित होती है। परन्तु हम उसका महत्त्व नहीं समझते। श्वसन क्रिया को जानना, समझना और उसका सही ढंग से उपयेाग करना प्रत्येक व्यक्ति के लिये अनिवार्य है।

प्राणायाम का महत्त्व

सम्यक् प्रकार से सजगतापूर्वक श्वसन क्रिया को संचालित, नियन्त्रित करने की विधि को प्राणायाम कहते हैं। प्राणायाम का शाब्दिक अर्थ होता है-प्राण का आयाम अर्थात् उसका संकोच एवं विस्तार। साधारण भारतीय मान्यता के अनुसार प्रत्येक योनि में हमें निश्चित श्वासों के खजाने के अनुसार आयुष्य प्राप्त होती है। यदि उन श्वासों को जल्दी-जल्दी अविवेकपूर्ण ढंग से पूर्ण कर दिया जाये तो हम जल्दी ही मृत्यु को प्राप्त कर लेते हैं और यदि उन्हीं श्वासों का अपव्यय न किया जाये, पूर्ण श्वास-नि:श्वास लिया और निकाला जाये तो उन सीमित श्वासों को लेने में हमें अधिक समय लगेगा। अर्थात् हमारी आयु, जीवन अथवा दूसरे शब्दों में कहें तो प्राण का पूर्ण उपयोग होगा।

जिस प्रकार बाह्य शरीर की शुद्धि के लिए स्नान किया जाता है, उसी प्रकार शरीर के आन्तरिक अवयवों की शुद्धि के लिए प्राणायाम का बहुत महत्त्व होता है। प्राणायाम द्वारा मन, बुद्धि, ज्ञान, विवेक को विकसित कर आत्मा को परमात्मा बनाया जा सकता है। अत: प्राणायाम को योग की आत्मा भी कहते हैं।

प्राणायाम से फेफड़े मजबूत होते हैं, रक्त के विकार दूर होते हैं, शरीर का संतुलित और सुडोल विकास होता है, मन में उत्साह एवं मानसिक बल भी बढ़ता है, ध्यान में चित्त लगता है, दीर्घ आयु प्राप्त होती है, स्मरण शक्ति बढ़ती है, स्फूर्ति आती है, आलस्य नहीं आता।

चन्द्रभेदी प्राणायाम से गर्मी एवं पित्त सम्बन्धी रोगों से तुरन्त लाभ होता है। शरीर में ठण्डक बढ़ती है। बुखार में आराम मिलता है। सूर्यभेदी प्राणायाम सर्दी सम्बन्धी रोगों में विशेष प्रभावकारी होता है। भ्रामरी प्राणायाम से मानसिक तनाव, चिन्ता, क्रोध, निराशा में कमी आती है। स्मरण शक्ति और स्वर सुधरता है। श्वसन और गले के रोग ठीक होते हैं। कपालभाति प्राणायाम से श्वसन तन्त्र और नासिका मार्ग स्वच्छ होता है। दमा दूर होता है। रक्त शुद्ध होता है। हृदय की कार्यक्षमता सुधरती है। श्वसन, पाचन और रक्त परिभ्रमण तन्त्र बराबर कार्य करने लगते हैं। लोम-विलोम प्राणायाम से नाड़ी शोधन होने से स्नायु संस्थान सशक्त होता है।

प्रात:काल प्रदूषण की कमी होने के कारण वायुमण्डल में ऑक्सीजन की मात्रा अपेक्षाकृत अधिक होती है। प्रात:काल फेफड़े, ब्रह्माण्ड से प्राण ऊर्जा ग्रहण करने हेतु अधिकाधिक सजग और सक्रिय होते हैं। अत: प्रात:काल घूमने, दौड़ने, जोगिंग एवं फेफड़ों के अन्य व्यायाम से अधिक लाभ मिलता है। जो व्यक्ति प्राय: देर से निद्रा त्यागते हैं, वे फेफड़ों की सक्रियता का पूर्ण लाभ नहीं ले पाने के कारण अपेक्षाकृत कम फुर्तीले होते हैं।

श्वास लेते समय पेट पूरा फूलना चाहिए और श्वास निकालते समय पेट जितना अन्दर जा सके जाना चाहिए। तभी सम्पूर्ण स्नायु संस्थान में प्राण वायु का प्रवाह सम्भव होता है। जब हम पूरा, गहरा, धीरे-धीरे श्वास लेते हैं तो शरीर के ज़्यादा से ज़्यादा अवयवों को प्राण ऊर्जा पहुँचती है। जिससे जो कोशिकाएँ मृत प्राय: हो जाती हैं, पुनर्जीवित होने लगती हैं। मन्दगति से गहरी श्वास लेने वाला व्यक्ति अपेक्षाकृत शान्त, तनाव मुक्त और प्रसन्न रहता है। गहरी श्वास से डायाफ्राम सहित पेट

के समस्त अंगों की अच्छी मालिश हो जाती है। गहरा श्वास लेने से मृत कोशिकाओं को पुन: जीवित करने हेतु ज्यादा प्राण वायु मिलती है। जल्दी-जल्दी श्वसन क्रिया करने से शुद्ध वायु ऑक्सीजन अपना पूरा कार्य किए बिना ही पुन: बाहर निकल जाती है, जिससे शरीर में उसका पूर्ण उपयोग आवश्यकतानुसार नहीं हो पाता।

पूर्ण श्वास लेना जितना आवश्यक है, उतना ही पूरा नि:श्वास भी आवश्यक है। श्वास के माध्यम से जो ऑक्सीजन के रूप में प्राण वायु हम ग्रहण करते हैं, वह रक्त शुद्ध करने में कार्बन डाई ऑक्साइड में बदल जाती है। यदि इस दूषित वायु का शरीर से समय पर पूर्ण निष्कासन न हुआ हो तो शरीर में अनुपयोगी विजातीय तत्त्वों में वृद्धि होने लगती है; जिससे प्राण ऊर्जा के प्रवाह में अवरोध आने के कारण रोग होने की सम्भावना रहती है। जो व्यक्ति प्राणायाम नहीं करते, उन्हें भी प्रात:काल स्वच्छ एवं शुद्ध वातावरण में कम से कम कुछ समय तो गहरी धीमी पूर्ण सजगतापूर्वक अवश्य श्वसन क्रिया करनी चाहिये। साथ ही प्रात: भूखे पेट ही बिना कुछ खाये कतिपय बार गहरी श्वास प्रक्रिया करने के बाद मुँह बन्द करके पूरे वेग से नाक से जितनी ज्यादा वायु बाहर फेंक सकें, फेंकने का अपनी सामर्थ्य और विवेक अनुसार प्रयास करना चाहिये। दो ऐसे नि:श्वासों की प्रक्रिया के बीच कुछ समय आराम से नियमित श्वसन क्रिया ही करनी चाहिए। ऐसा करने से सारे शरीर में वायु का प्रवाह एकदम तेज हो जाता है और जो विजातीय तत्त्व साधारण रेचक प्रक्रिया से निष्कासित नहीं होते हैं, वे भी बाहर निकल जाते हैं। साथ ही स्वत: पूर्ण वेग से श्वास की पूरक क्रिया होती है, जिससे सारे शरीर में प्राण ऊर्जा का प्रवाह पहुँचने लगता है। इस प्रक्रिया द्वारा शरीर में लम्बे समय से जमा अवरोध तथा विजातीय तत्त्व अपना स्थान छोड़ने लगते हैं। जो ऐसा भी न कर सकें उन्हें मुँह बन्द कर पूर्ण वेग से कुछ समय के अन्तराल में 11 से 21 बार प्रतिदिन हँसना चाहिए।

श्वास नाक से ही क्यों लें?

नासिका शरीर का वह अंग है जिसका कार्य श्वास द्वारा ली जाने वाली वायु को फेफड़े में पहुँचने के पूर्व पर्याप्त शुद्ध, परिमार्जित एवं शरीर के तापक्रम के अनुरूप बनाना है ताकि बाह्य वातावरण की गर्म अथवा सर्द हवा फेफड़ों को किसी प्रकार की हानि नहीं पहुँचा सके। दूसरी बात नाक में स्थित श्लेष्मा झिल्लियाँ (म्यूकस मेम्ब्रेन) वायु में उपस्थित उन असंख्य रोगाणुओं को भी हटा देती हैं, जो फेफड़ों के लिए अतिघातक सिद्ध हो सकते हैं। साथ ही उन धूल कणों से भी बचाव करती हैं, जिनसे किसी कारणवश नासिका के रोम में रुकावट नहीं हो पाती। ये झिल्लियाँ श्वास की वायु को आवश्यक शुष्कता-आर्द्रता भी प्रदान करती हैं।

तीसरी बात यह है कि नाक से ही दुर्गन्ध और सुगन्ध की अनुभूति होती है। गन्ध की अनुभूति हानिकारक वायु को अन्दर जाने से रोकती है। जैसे ही हमें किसी दुर्गन्ध की अनुभूति होती है, हम तुरन्त श्वास लेना बन्द कर देते हैं और जल्द से जल्द वहाँ से दूर होकर ताजी हवा वाले स्थानों में पहुँचने का प्रयास करते हैं।

नेति क्रिया के लाभ

श्वास सम्बन्धी रोगों के उपचार हेतु 'नेति क्रिया' भी विश्वसनीय सहज पद्धति है। नासिका के छिद्रों की तरल पदार्थों से सफाई करने की विधि को नेति क्रिया कहते हैं। जिन व्यक्तियों को किसी भी प्रकार की एलर्जी होती है, उनके लिये नेति क्रिया अत्यन्त लाभकारी होती है। नेति क्रिया से आज्ञा चक्र भी सक्रिय होता है।

प्रात:काल और सोने से पूर्व नेति क्रिया करने से न केवल नथूनों की सफाई होती है, अपितु उसके साथ-साथ निद्रा अच्छी आती है। आँखों की ज्योति सुधरती है। सिर की गर्मी शान्त होती है। स्मरण शक्ति बढ़ने लगती है। बाल झड़ना बन्द हो जाते हैं और लम्बे समय तक बाल काले बने रहते हैं, ऐसे प्रत्यक्ष-परोक्ष अनेक लाभ होते हैं। शिवाम्बु से नेति क्रिया विशेष लाभप्रद होती है।

सारांश यह है कि जीवन पर्यन्त स्वस्थ रहने की कामना रखने वालों को श्वसन सम्बन्धी प्रकृति के सनातन नियमों का ईमानदारी पूर्वक पालन कर प्राकृतिक ऊर्जाओं का अधिकाधिक उपयोग करना चाहिए।

-चोरड़िया भवन, जालोरी गेट के बाहर,
जोधपुर-342003 (राज.)

10 जनवरी 2020
जिनवाणी 73
ISSN 2249-2011

प्रेरक-कथा

पतन की सीमा नहीं

श्री अशोक कुमार बोहरा 'दिव्य हृदय'

श्रमणाचार से च्युत श्रमण घोर पतन की ओर अग्रसर हो सकता है। एक बार एक श्रमण मुनि ने अपने सांसारिक पुत्र को दीक्षित किया। पुत्र के प्रति सन्त मुनि का स्नेह होने के कारण प्रथम दिवस से ही उसे भिक्षाचर्या के लिए नहीं भेजा।

दीक्षा के बाद पुत्र-मुनि को भी पद विहार करना पड़ता था। ऊबड़-खाबड़ मार्ग, उष्ण-शीत, कंटीले मार्ग में विहार करना उसे अत्यन्त कष्टकर लगता था। पुत्र अत्यन्त सुकुमार था। उसने अपने पिता-मुनि से निवेदन किया कि पद विहार में मुझे कंकड़-पत्थर लगने एवं ऊबड़-खाबड़ मार्ग से अत्यन्त कष्ट होता है, मेरे पाँवों में छाले पड़ जाते हैं, रक्त बहने लगता है। अत: मुझे चरण पादुका (चप्पल या जूते) दिलवा दीजिये। पिता-मुनि ने स्नेहवश उसे चप्पल दिलवा दी।

फिर कुछ दिवस पश्चात् कोमलांग पुत्र मुनि ने अपने पिता-मुनि से अत्यन्त विनीत शब्दों में निवेदन किया कि-''हे भन्ते! मुझे धूप-बरसात में नंगे सर चलने से बहुत तकलीफ़ होती है। संयम यात्रा निर्बाध गति से चलने में बाधा आती है। अत: मेरे लिए छतरी की व्यवस्था करवा दीजिये।'' पिता मुनि ने मोहवश पुत्र की यह माँग भी पूरी कर दी।

पुत्र-मुनि भी क्रमश: सुविधाभोगी होने लगा। कुछ दिनों बाद पिता-मुनि से अत्यन्त विनम्र शब्दों में कहा कि-''हे मुनिवर! मुझे तृण के बिछौने में रात-रात भर नींद नहीं आती। बिछौना अत्यन्त चुभता है अत: बिछौने के लिए कोमल बिछौने की व्यवस्था करवा दीजिये तो संयम-मार्ग सुखकर हो जायेगा।'' पिता पुत्र के प्रबल आग्रह को मना नहीं कर सके तथा कोमल बिछौने की व्यवस्था करवा दी।

एक दिवस पुत्र ने पिता-मुनि से अत्यन्त करुणापूर्ण वचनों से कहा-''हे भगवन्! मुझे केशलोचन में अत्यन्त तकलीफ़ होती है, मेरे सिर एवं चेहरे से रक्त निकलने लगता है, घाव हो जाते हैं तो सिर पर उस्तरा फिरवा दीजिये।'' पिता मुनि ने सोचा कि यदि पुत्र की बात नहीं मानूँगा तो यह संयम मार्ग से पतित हो जायेगा और सभी जगह अपयश हो जायेगा। अत: उन्होंने यह बात भी मान ली।

सुख-सुविधाओं और अच्छे आहार से उसकी इन्द्रियाँ अत्यन्त प्रदीप्त हो गई और पिता मुनि के समक्ष अकल्पनीय माँग रख दी। हे बाबाजी! मैं कष्टों को सहते-सहते तंग हो गया हूँ, अत: मेरे लिये एक जीवन संगिनी की व्यवस्था करवा दीजिये।'' पिता यह सुनते ही भौचक्के रह गये। अत: पिता मुनि ने पुत्र से कहा-''तुम संयम के लायक नहीं हो। स्खलना की भी हद होती है।''

आज का शिष्य होता तो मोबाइल, एसी, पंखा, टेलीफोन, गाड़ी की माँग करने लगता।

जैन साधु-साध्वी इन सभी सुविधाओं से दूर रहते हैं। साधु-समाचारी का पूर्णत: पालन करते हैं। बाईस परीषह सहन करते हैं।

मधुकरवृत्ति-कापोती वृत्ति, केश लोच, पद विहार एवं भिक्षाचर्या (निर्दोष गोचरी) अत्यन्त कष्टकर होने पर भी इनका सम्यक् रूप से पालन करते हैं।

-10, प्रताप नगर, दादाबाड़ी, कोटा-324009 (राज.) 946056762

जिनवाणी के सम्बन्ध में आपके अमूल्य सुझाव एवं लेख सादर आमन्त्रित हैं। Email : editorjinvani@gmail.com

-सम्पादक

कृति की 2 प्रतियाँ अपेक्षित हैं

नूतन साहित्य

श्री गौतमचन्द जैन

आओ! तराशें.... जिन्दगी-कृतिकार-मुनि-मनितप्रभसागर, आशीर्वाद-गच्छाधिपति आचार्यप्रवर श्री जिनमणिप्रभसूरिजी, सम्पादन-साध्वी डॉ. नीलाञ्जनाश्रीजी। जहाज मन्दिर प्रकाशन पुष्प-109। ***प्रकाशन एवं प्राप्ति स्थल***-श्री जिनकान्तिसागर-सूरि स्मारक ट्रस्ट, जहाजमन्दिर, माण्डवला-343042, जिला-जालोर (राज.) फोनः 0141-256107, ***पृष्ठ***-100+10+10 = 120, ***मूल्य***-रुपये 50/-, संस्करण सन् 2009, 2019।

प्रस्तुत कृति कृतिकार की रचना 'प्रवाह' नामक प्रथम खण्ड का पूर्णरूपेण संशोधित संस्करण है। कृतिकार ने यह रचना आचार्यप्रवर श्री जिनकान्ति-सागरसूरीश्वरजी म.सा. एवं आचार्यश्री जिनमणिप्रभ-सूरीश्वरजी म.सा. को सादर समर्पित की है। प्रस्तुत रचना में लेखक ने जीवन को एक प्रवाह के रूप में देखा है और वह लगातार बहता जा रहा है। जीवन का लक्ष्य इस प्रवाह को रोकना है। जब तक प्रवाह नहीं रुके, तब तक सही दिशा देना आवश्यक है। जो यह समझ लेता है, वह प्रवाह से मुक्त हो जाता है। प्रस्तुत रचना में लेखक ने जीवन के विभिन्न पहलुओं से सम्बन्धित चिन्तन के सूत्र प्रस्तुत किये हैं, जो सरल एवं सहज तथा सुबोध हैं और जीवनोपयोगी एवं चिन्तन को नई दिशा देने वाले हैं। इसमें 74 विषयों पर जीवन के अमूल्य चिन्तन प्रस्तुत हुए हैं, जो पठनीय एवं आचरणीय हैं।

जीएँ तो ऐसे जीएँ-उपर्युक्तानुसार। जहाजमन्दिर पुष्प-110। ***पृष्ठ***-87+20+7 = 114, ***मूल्य***-रुपये 50/-, प्रथम संस्करण सन् 2008।

प्रस्तुत कृति कृतिकार की रचना 'प्रवाह' के द्वितीय खण्ड का पूर्णरूपेण सम्पादित संस्करण है। कृतिकार ने यह रचना युगपुरुष परमात्मा महावीर को समर्पित की है। प्रस्तुत रचना में रचनाकार ने 48 लेख विभिन्न शीर्षकों में लिखे हैं जो जीवन में ग्रहण करने योग्य एवं शिक्षाप्रद हैं। यथा-मोह का विसर्जन, मुक्ति का सर्जन, प्रायश्चित्त की युक्ति : अपराध से मुक्ति; आज में छिपा कल का राज आदि। सभी लेख पठनीय हैं।

जीवन का दर्पण-कर्त्तव्य का प्रतिबिम्ब-उपर्युक्तानुसार। जहाजमन्दिर पुष्प-199, ***पृष्ठ***-84 + 6 + 10 = 100, ***मूल्य***-रुपये 30/-, संस्करण सन् 2000 (2019)।

प्रस्तुत कृति में लेखक ने श्रावक के आवश्यक कर्त्तव्यों का 19 लेखों में सुन्दर विवेचन किया है। ये सभी लेख प्रत्येक जैन श्रावक के लिए पठनीय, ज्ञेय और उपादेय हैं। संक्षेप में बहुत सुन्दर तरीके से श्रावक के कर्त्तव्य समझाये गये हैं।

विचार विरासत-उपर्युक्तानुसार। जहाज मन्दिर पुष्प-228। ***पृष्ठ***-130+10 = 140, ***मूल्य***-रुपये 50/-, संस्करण सन् 1500 (2019)।

लेखक ने प्रस्तुत कृति को परमात्मा ऋषभदेव को समर्पित किया है। प्रस्तुत पुस्तक को लेखक ने चार भागों में विभक्त किया है। प्रथम भाग 'मंगलम् भगवान वीरो' में 12 विषयों पर लेख प्रस्तुत किये गये हैं जो भगवान ऋषभदेव, पारसमणि पुरुषादानीय पार्श्वनाथ और भगवान महावीर से सम्बन्धित हैं। दूसरा भाग-यात्रा का अनुभव-अनुभव की यात्रा है। इसमें पाँच विषयों में खम्भात तीर्थ की पावन यात्रा, श्री लोढ़ण पार्श्वनाथ, अन्तरिक्ष पार्श्वनाथ, कलिकुण्ड पार्श्वनाथ और नीलगिरि की मधुर यात्रा का सुन्दर चित्रण किया गया है। तृतीय भाग अध्यात्म का अमृत-तत्त्व में 8 विषयों पर चिन्तन परक लेख प्रस्तुत किये हैं जो अहिंसा, स्वाध्याय, अनेकान्तवाद, प्रतिक्रमण, संथारा आदि विषयों से सम्बन्धित हैं जिनमें महत्त्वपूर्ण जानकारी उपलब्ध है। चतुर्थ भाग चिरन्तन चिन्तन की चाँदनी शीर्षक से है जिसमें 11 विषयों पर चिन्तन परक लेख सन्निहित हैं। शिक्षा, मृत्यु, नौ पद, चार दुर्लभ बातें,

क्षमा, नम्रता, श्रावक का चिन्तन और अश्रुओं का निर्मल जल आदि विषयों पर महत्त्वपूर्ण सामग्री से युक्त लेख पठनीय हैं। सम्पूर्ण पुस्तक ही पठनीय, ज्ञानवर्धक एवं मार्गदर्शक है।

विचार वैभव-उपर्युक्तानुसार। जहाजमन्दिर पुष्प-229। ***पृष्ठ***-118 + 10 = 128, ***मूल्य***-रुपये 50/-, संस्करण सन् 1500 (2019)।

प्रस्तुत रचना को लेखक ने परमात्मा पार्श्वनाथ को समर्पित किया है। लेखन ने प्रस्तुत रचना को पाँच खण्ड में विभक्त किया है। प्रथम खण्ड-तस्मै श्री गुरवे नमः में 10 लेखों में सभी प्रमुख आचार्यों का सुन्दर शैली में प्रेरक जीवन परिचय दिया गया है और अन्त में 11वें लेख में 'बधाई हो बधाई' कविता लिखी गई है जिसमें सुन्दर भावाभिव्यक्ति की गई है। द्वितीय खण्ड विचार की विसरात में पाँच लेख प्रस्तुत किये हैं जो खरतरगच्छ दिवस, परमात्मा महावीर का कल्याणक, गौतमरास एवं सेठ मोतीशा और जैनधर्म का गौरव एवं सत्त्व से सम्बन्धित है। तृतीय खण्ड 'पर्व-साधना का सौम्य-सौन्दर्य' शीर्षक से है-जिसमें अक्षय तृतीया, पर्युषण पर्व, कल्पसूत्र, चातुर्मास का महत्त्व एवं साधना आदि विषयों से सम्बन्धित ग्यारह लेख सन्निहित हैं। चतुर्थ खण्ड जिनशासन सदैव धन-धन में तीन लेख हैं जो हमारे शासन के शृङ्गार, अनुमोदना की अमृतधारा और विहार कैसे और कब करें? विषयों से सम्बन्धित महत्त्वपूर्ण जानकारी देने वाले हैं। पञ्चम खण्ड 'जानो और पाओ' में पाँच लेख लिखे गये हैं जो सभी के लिए जानने और पढ़ने योग्य हैं। यथा वरक अभक्ष्य है, आहार को बनायें उपहार, पारिवारिक शान्ति एवं सद्भाव की नींव, विज्ञान से विकास या विनाश?, आतिशबाजी से नुकसान ही नुकसान और कल, आज और कल। सम्पूर्ण पुस्तक आद्योपान्त सभी के लिए पठनीय है।

-पूर्व डी.एस.ओ., 70, 'जयणा', विश्वकर्मा नगर-द्वितीय, महारानी फॉर्म, जयपुर (राजस्थान)

आगामी पर्व तिथि

माघ कृष्णा 4, मंगलवार	14.01.2020	उपाध्यायप्रवर पण्डित रत्न श्री मानचन्द्रजी म.सा. का 86वाँ जन्मदिवस
माघ कृष्णा 8, शुक्रवार	17.01.2020	अष्टमी
माघ कृष्णा 14, गुरुवार	23.01.2020	चतुर्दशी
माघ कृष्णा अमावस, शुक्रवार	24.01.2020	पक्खी
माघ शुक्ला 2, रविवार	26.01.2020	आचार्यप्रवर श्री हस्तीमलजी म.सा. का 100वाँ दीक्षा दिवस
माघ शुक्ला 8, रविवार	02.02.2020	अष्टमी
माघ शुक्ला 14, शनिवसार	08.02.2020	चतुर्दशी, पक्खी
फाल्गुन कृष्णा 8, रविवार	16.02.2020	अष्टमी
फाल्गुन कृष्णा 14, शनिवार	22.02.2020	चतुर्दशी
फाल्गुन कृष्णा अमावस, रविवार	23.02.2020	पक्खी

10 जनवरी 2020
जिनवाणी 76
ISSN 2249-2011

समाचार विविधा

पूज्य आचार्यप्रवर की पाली से पीपाड़ की विहार-यात्रा

रत्नसंघ शिरोमणि आगमज्ञ, प्रवचन-प्रभाकर, व्यसन-मुक्ति के प्रबल प्रेरक, जिनशासन गौरव **आचार्यप्रवर 1008 पूज्य श्री हीराचन्द्रजी म.सा.**, महान् अध्यवसायी-सरस व्याख्यानी **श्रद्धेय श्री महेन्द्रमुनिजी म.सा.** आदि ठाणा का पाली से पीपाड़ पर्दापण हो गया है। पूज्य आचार्यप्रवर ने स्वास्थ्य समीचीन न होने पर भी आत्मबल से विहार पूर्ण किया। 25 नवम्बर को विश्नोईजी के बेरा, चाड़ों का ढाणा पधारे। 26 नवम्बर को बाणोरा की ढाणी पधारे जहाँ श्रद्धेय श्री विनम्रमुनिजी म.सा. का पाठशाला में विनय पर उद्‌बोधन हुआ। 27 नवम्बर को उदारामजी चौकीदार के मकान पर एवं 28 को दूदिया गाँव पधारे। श्रद्धेय श्री योगेशमुनिजी म.सा., श्रद्धेय श्री दीपेशमुनिजी म.सा. पाली से सोजतरोड़ की ओर विहार करते हुए यहाँ पधारे। यहाँ भी विद्यालय में श्रद्धेय श्री विनम्रमुनिजी म.सा. का 'व्यसनमुक्त जीवन' पर उद्‌बोधन हुआ। 29 नवम्बर को श्री मनोहरसिंहजी राजपूत के खेत पर बने एक कक्ष में रात्रि साधना की। 30 को मण्डली दर्जियान क्षेत्र में प्याऊ जैसे सीमित स्थल में साधना-आराधना की।

1 दिसम्बर को झींतड़ा गाँव में विराजे। 2 को चन्दलाई विराजे। यहाँ भी श्रद्धेय श्री विनम्रमुनिजी म.सा. का विद्यालय में जैनधर्म के प्रमुख सिद्धान्तों पर उद्‌बोधन हुआ। 3 चन्दलाई वोट स्थित प्याऊ में 4 को धुरासनी की धर्मशाला में विराज कर ग्रामवासियों को लाभान्वित किया। विद्यालय में मंगल उद्‌बोधन हुआ। 5 को पोटलिया स्थित रामद्वारा में विराजे यहाँ भटिण्डा संघ चातुर्मास की विनति लेकर उपस्थित हुआ। 6 को चांदासणी पधारे। 7 दिसम्बर को चौपड़ा की धरा पर पदार्पण हुआ। अयनावरम् संघ चेन्नई चातुर्मास की तथा बालागाँव हरियाडा के श्रावक क्षेत्र स्पर्शन की विनति लेकर आये। यहाँ से 8 दिसम्बर को लाणेरा पधारे। कंकरली भूमि पर चलते हुए नाले के समीप जर्जर स्थान में विराजे। 9 को लक्ष्मण नगर से पहले विश्नोई के घर विराजे। श्रद्धालु गुरुभक्तों का आगमन हुआ। यहाँ तक पाली संघ के श्रावकों ने सेवा का लाभ लिया। 10 को हुणगाँव से आगे विश्नोई परिवार के आवास पर पधारे। विहार सेवा में पीपाड़, पाली एवं जोधपुर के प्रबुद्ध श्रावकों की सहभागिता रही। पीपाड़ संघ की युवा टीम ने उत्साह दिखाया।

11 दिसम्बर को ओलवी, 12 को विश्नोई की ढाणी पदार्पण हुआ। विश्नोई परिवारजनों ने विहार सेवा में लाभ लेने आये पीपाड़, पाली, विजयनगर, बेंगलोर, बंगारपेठ के भाइयों की सेवा-भक्ति प्रमोद भाव से की। पूर्णिमा का प्रसंग होने से विजयनगर, बेंगलोर, जयपुर, बंगारपेठ, हिण्डौन से पूनमिया श्रावक उपस्थित हुए। पूज्य प्रवर जहाँ विराजे वहाँ टीन की छत थी। सर्दी में खाली स्थान से शीत लहर अन्दर आ रही थी। सायंकालीन प्रतिक्रमण के पश्चात् हवा के साथ वर्षा का स्वरूप बना। श्रावक टैण्ट में प्रतिक्रमण कर रहे थे। पूज्य गुरुदेव एवं मुनिवृन्द प्रतिक्रमण कर ध्यान एवं जप में लीन हो गये। भयाक्रान्त मौसम का प्रभाव लगभग तीन घण्टे से अधिक चला। जहाँ गुरुदेव विराज रहे थे उसके दो किलोमीटर क्षेत्र को छोड़कर सर्वत्र अधिक वर्षा हुई। मात्र विराजित क्षेत्र ही अछूता रहा। 13 दिसम्बर को पूज्य आचार्यप्रवर सायरगाँव पधारे। गोटन, बारनी एवं कोसाणा के श्रावकगण भी विहार में साथ हो गये। सवाईमाधोपुर के पूर्व विधायक श्री हंसराजजी शर्मा ने दर्शन, वन्दन सेवा का लाभ लिया। 14 को गोदारा की ढाणी विराजे। यहाँ तहाराबाद संघ के भाई-बहिन दर्शन सेवा की भावना से उपस्थित हुए। फिर साहू की ढाणी पधारे। यहाँ पाँच दम्पत्तियों ने आजीवन शीलव्रत अंगीकार किया। 16 को कापरडा से एक किलोमीटर आगे चौधरी भाई के निवास पर विराजे। 17 को बोयल पधारे जहाँ पाली संघ कृतज्ञता ज्ञापित करने हेतु उपस्थित हुआ। 18 को मार्गस्थ प्याऊ पर सन्त भगवन्तों का एवं विहार सेवा में रहने वालों के ठहरने का प्रसंग बना। 19 को श्री

भीखारामजी के डेरे पर विराजे। यहाँ भोपालगढ़ संघ क्षेत्र स्पर्शन की विनति लेकर उपस्थित हुआ। सायंकालीन श्रद्धेय श्री अशोकमुनिजी म.सा., श्रद्धेय श्री कल्पेशमुनिजी म.सा. पाली से विहार कर गुरुचरण सन्निधि में पधारे। 20 दिसम्बर को पीपाड़सिटी के बाहर स्थित श्री द्वारकादासजी के परिसर में विराज कर रात्रि साधना की और 21 को श्रीमती शरदचन्द्रिका मुणोत सामायिक-स्वाध्याय भवन में जयघोष के साथ पदार्पण हुआ।

इस यात्रा में 31 दिवस निरन्तर विहार हुआ एवं पूज्यप्रवर दस से अधिक ऐसे स्थानों पर विराजे जहाँ एक, दो या चार घर थे। ऐसी स्थिति में आहार की गवैषणा के लिए दो से तीन किलोमीटर सन्त गये। मुनिवृन्द ने परीषहों में धैर्य, सामञ्जस्य, सौहार्द, आज्ञाकारिता एवं सेवा का अभीष्ट लक्ष्य रखा। वीरपिता श्री इन्दरचन्दजी गाँधी ने पाली से पीपाड़ तक विहार सेवा का संवर-साधना के साथ लाभ लिया। वीरभ्राता श्री यशजी जैन ने सप्ताह भर विहार सेवा की। कोसाणा संघ के प्रबुद्ध श्रावकगण 29 नवम्बर से निरन्तर विहार सेवा के साथ रात्रिकालीन प्रवास में भी सेवा सन्निधि में रहे। श्री भागचन्दजी मेहता, जोधपुर एवं उनके परिवारजनों की समय-समय पर विहार सेवा में उपस्थिति रही। शासन सेवा समिति के सदस्य श्री नौरतनमलजी मेहता, जोधपुर सप्ताह में दो बार लाभ लेने का क्रम निरन्तर बनाये हुए हैं। इस विषम विहार यात्रा में भी उनका यह क्रम जारी रहा। श्रावकरत्न श्री पृथ्वीराजजी कवाड़ के सुपुत्र श्री प्रेमकुमारजी कवाड़ 16 दिसम्बर से ही पूज्यप्रवर की चरण सन्निधि का लाभ लेने पधार गये थे।

21 दिसम्बर को ही व्याख्यात्री महासती श्री विनीतप्रभाजी म.सा. आदि ठाणा 4 गुलाबपुरा चातुर्मास सम्पन्न कर पूज्य आराध्य गुरुदेव की सन्निधि में पधारे। इसी दिन तीर्थङ्कर पार्श्वनाथ का जन्म कल्याण दिवस था। श्रद्धेय श्री विनम्रमुनिजी म.सा. एवं श्रद्धेय श्री अशोकमुनिजी म.सा. ने प्रवचन फरमाया। भगवान पार्श्वनाथ के जीवन प्रसंगों से अवगत कराया गया। 22 दिसम्बर को पार्श्वनाथ के दीक्षा कल्याणक पर महान् अध्यवसायी श्रद्धेय श्री महेन्द्रमुनिजी म.सा., श्रद्धेय श्री अशोकमुनिजी म.सा. के विशेष प्रवचन हुए। 24 दिसम्बर को सवाईमाधोपुर से बजरिया संघ चातुर्मास की विनति लेकर उपस्थित हुआ तथा संघ के राष्ट्रीय अध्यक्ष श्री प्रकाशजी टाटिया ने सेवा सन्निधि का लाभ लिया। पूज्य गुरुदेव के पदार्पण से पीपाड़ संघ में उत्साह एवं प्रमोद का वातावरण बना हुआ है।

-जगदीश जैन

जयपुर में साध्वी प्रमुखा एवं अन्य महासतियाँजी का विचरण

साध्वी प्रमुखा विदुषी महासती श्री तेजकँवरजी म.सा. आदि ठाणा-8 का प्रताप नगर चातुर्मास के बाद प्रताप नगर की विभिन्न कॉलोनियों में विचरण चल रहा है। अनेक भक्तगण जयपुर के बाहर से दर्शनों के लिए आ रहे हैं। सभी सतियों के स्वास्थ्य में समाधि है। 29 जनवरी, 2020 को होने वाली मुमुक्षु बहिन दीपिकाजी मुणोत की दीक्षा तक प्रताप नगर में विराजने की सम्भावना है।

व्याख्यात्री महासती श्री ज्ञानलताजी म.सा. आदि ठाणा-9 का जवाहर नगर चातुर्मास के पश्चात् जयपुर में ही स्वास्थ्य के कारणों से विचरण चल रहा है। 6 दिसम्बर, 2019 को महासती श्री महिमाश्री जी म.सा. के पाँव में वेरिकोस वैन का अपेक्स हॉस्पिटल में सफलता पूर्वक ऑपरेशन हुआ, उसके बाद से महासतीजी हरिमार्ग स्थित जैन स्थानक पर स्वास्थ्य लाभ कर रहे हैं। 9 दिसम्बर को व्याख्यात्री महासती श्री ज्ञानलताजी म.सा. का ई.एच.सी.सी. अस्पताल में हार्ट का ऑपरेशन सफलता पूर्वक हुआ। एक स्टण्ट लगा है। महासतीजी जयपुर शहर की भीतरी कॉलोनियों, रत्न स्वाध्याय भवन, लाल भवन, मनवाजी का बाग, सेठी कॉलोनी, जनता कॉलोनी की तरफ विचरण कर रहे हैं। दोनों महासतियाँजी म.सा. के स्वास्थ्य में समाधि है।

महासती श्री स्नेहलताजी म.सा. महावीर नगर का चातुर्मास सम्पन्न कर मानसरोवर, महावीर नग, पत्रकार कॉलोनी आदि क्षेत्रों में विचरण कर रहे हैं।

-सुरेश कोठारी, मन्त्री श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, जयपुर

श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल का सवाईमाधोपुर में क्षेत्रीय सम्मेलन सम्पन्न

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल क्षेत्रीय सम्मेलन (पोरवाल सम्भाग) 15 दिसम्बर रविवार को सवाई माधोपुर में सम्पन्न हुआ। श्राविका वर्ग का आध्यात्मिक, धार्मिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, चारित्रिक एवं वैयक्तिक समुन्नयन, राष्ट्रीय कार्यक्रम क्रियान्वयन, जिनशासन संघ प्रभावना, सुन्दर समाज-परिवार निर्माण, कर्तव्य, योगदान, आचार्य हस्ती दीक्षा शताब्दी वर्ष पर्यन्त तप-त्याग की पूर्व तैयारी, सामायिक-स्वाध्याय संगोष्ठी, आयम्बिल, पौरसी की लड़ी, नमो पुरिसवरगंधहत्थीणं ओपन बुक प्रतियोगिता में सहभागिता के उद्देश्य से सम्मेलन का आयोजन किया गया। समारोह की मुख्य अतिथि राष्ट्रीय परामर्शदाता श्रीमती पूर्णिमा लोढ़ा, अध्यक्षता राष्ट्रीय कार्याध्यक्ष श्रीमती बीना मेहता, विशिष्ट अतिथि श्रीमती श्वेता कर्णावट, श्रीमती विनीता कर्णावट, श्रीमती विमला जैन अध्यक्ष, राष्ट्रीय पोरवाल महिला मण्डल जयपुर, श्रीमती उषा जैन कोटा रहीं। गरिमामयी उपस्थिति सर्वश्रीमती विमला जैन गोटेवाला, हेमलता जैन, सन्तरा जैन पान वाले, मंजू जैन सर्राफ, चमेली जैन सर्राफ, रूपा जैन, सन्तोष जैन सर्राफ, चमेली जैन एण्डवा, प्रतिभा जैन एवं इन्द्रा जैन की रही। वीरमाता सर्वश्रीमती चमेली जैन रामपुरा, चमेली जैन श्यामपुरा, प्रसन्न जैन जरखोदा भी उपस्थित थी। मंगलाचरण, जिनशासन गान सर्वश्रीमती रेखा जैन, मधु जैन, मीना जैन, मंजू जैन बजरिया द्वारा प्रस्तुति पश्चात् स्वागत गान सर्वश्रीमती सुरेखा जैन, संजू जैन, पदमा जैन स.मा. ने प्रस्तुत किया। मुख्य अतिथि, अध्यक्ष, विशिष्ट अतिथि आदि का एवं वीर माताओं का प्रतीक चिह्न, ध्वजपट्टिका द्वारा स्वागत किया गया। 'श्राविकाओं की समाज में भूमिका', 'संघ समाज से अपेक्षा' पर वाद-विवाद प्रतियोगिता में 15 सदस्याओं ने भाग लिया। धर्म-स्थान में आकर सांसारिक बात नहीं करने के क्रम में कोटा मण्डल का प्रोग्राम, अलीगढ़ मण्डल की नाटिका सराहनीय रही। माँ-बेटी गुण-संवाद प्रतियोगिता में प्रियंका मोनू जैन, पूर्वी बजरिया प्रथम, शिल्पा अमित जैन, आरना महावीर नगर द्वितीय, प्रियंका प्रशान्त जैन भविका देसिका बजरिया तृतीय स्थान पर रही। वाद-विवाद प्रतियोगिता में श्रीमती जयमाला जैन चौथ का बरवाड़ा प्रथम, श्रीमती निशा महेन्द्र जैन अलीगढ़ एवं श्रीमती सुरेखा अशोक जैन सवाईमाधोपुर द्वितीय स्थान पर रही। प्रथम, द्वितीय, तृतीय स्थान प्राप्त करने वालों को पुरस्कार व प्रतिभागियों को सान्त्वना पुरस्कार प्रदान किये गये। माननीय मुख्य अतिथि, अध्यक्ष, विशिष्ट अतिथि आदि ने जीवन उत्थान, बच्चों में सुसंस्कार, आपसी प्रेम, सेवा कार्यों से जुड़ने, जरूरतमन्द को सहयोग, अहिंसा साधना सेवा और सद्गुणों से स्वयं को सजाने के लिए प्रेरित किया। 550 सदस्याओं द्वारा प्रार्थना, गुण विकास, धर्मस्थान में साधना, बच्चों को संस्कार केन्द्र भेजने तथा संघ-सेवा हेतु संकल्प पत्र भरे गये। समूचे पोरवाल सम्भाग कोटा, जयपुर, देई, चोरू, पचाला, कुस्तला, इन्द्रगढ़, सुमेरगंजमण्डी, अलीगढ़-रामपुरा, सूरवाल, चौथ का बरवाड़ा और सवाईमाधोपुर नगरपरिषद् क्षेत्र की जैन रत्न श्राविका मण्डल सदस्याओं ने उत्साह उमंग से भाग लिया। सम्माननीय पदाधिकारी कार्यकर्ताओं का मार्गदर्शन बराबर मिलता रहा। श्रीमती रजनी जैन गोटेवाला क्षेत्रीय प्रधान, श्रीमती मोहिनी जैन आलनपुर संयोजक, श्रीमती अरूणा जैन अलीगढ़ सह-संयोजक के साथ पोरवाल सम्भाग की सभी अध्यक्ष मन्त्री और प्रतिनिधि सदस्याएँ एक माह से सम्मेलन तैयारी में जुटी हुई थी। रजिस्ट्रेशन, अनुशासन, मञ्च, भोजन समिति सदस्याओं ने दक्षतापूर्वक कार्य सम्भाला। रजिस्ट्रेशन काउन्टरों पर श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल की सम्भागी सदस्याओं का बेग, पेन, डायरी, ध्वजपट्टिका एवं कुमकुम तिलक कर स्वागत किया गया। समारोह सृजनात्मक चिन्तन, सबको साथ लेकर चलने की भावना, प्रबल पुरुषार्थ, सेवा भावना के फलस्वरूप सुव्यवस्थित, सुन्दर, गरिमामय एवं भव्यता के साथ सम्पन्न हुआ। प्रात:काल महावीर

नगर साधना भवन में नगर परिषद क्षेत्रीय सामूहिक सामायिक स्वाध्याय संगोष्ठी भी सम्पन्न हुई। पदाधिकारियों, सक्रिय सदस्याओं की लगन, मेहनत, आत्म बल, सेवा सहयोग की जितनी प्रशंसा की जाए कम है। अन्त में स्नेहभोज सम्पन्न हुआ। मञ्च संचालन श्रीमती रजनी जैन गोटेवाला द्वारा किया गया। श्रीमती रेखा जैन, मनीषा जैन बजरिया संचालन सहयोगी रही। प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष सहयोग प्रदान करने वाले सभी बधाई और साधुवाद के पात्र हैं।

-धनसुरेश जैन, सवाईमाधोपुर

राष्ट्रीय स्तर पर निबन्ध प्रतियोगिता का आयोजन

प्रात:स्मरणीय, परम श्रद्धेय आचार्यप्रवर 1008 श्री हस्तीमलजी म.सा. का दीक्षा शताब्दी वर्ष 26 जनवरी, 2020 से प्रारम्भ हो रहा है। साथ ही श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, जोधपुर का हीरक जयन्ती वर्ष भी प्रारम्भ हो रहा है। इस शुभ अवसर पर श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, जोधपुर द्वारा राष्ट्रीय स्तर पर निबन्ध प्रतियोगिता का आयोजन किया जा रहा है। निबन्ध का विषय **'सामायिक एवं स्वाध्याय के प्रेरक आचार्य हस्ती'** रखा गया है। उक्त निबन्ध मौलिक, तथ्यात्मक तथा 1500 शब्दों से अधिक नहीं होना चाहिये। इस प्रतियोगिता में सभी आयु वर्ग के श्रावक-श्राविकाएँ भाग ले सकते हैं। प्रतियोगिता में प्रथम स्थान प्राप्त करने वाले को 1,500 रुपये का, द्वितीय स्थान पाने वाले को 1,100 रुपये का, तृतीय स्थान पाने वाले को 700 रुपये का एवं 10 प्रतिभागियों में प्रत्येक को 200 रुपये का सान्त्वना पुरस्कार दिया जायेगा। सभी प्रतिभागियों को अपने बैंक खाते की जानकारी साथ में भेजना अनिवार्य है। निबन्ध भिजवाने की अन्तिम तिथि 10 मार्च, 2020 निर्धारित है। वर्ष भर इस तरह अन्य विषय पर प्रतियोगिता आयोजन का लक्ष्य है। सम्पर्क सूत्र-संयोजक/सचिव, श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, सामायिक-स्वाध्याय भवन, प्लॉट नं. 2, नेहरूपार्क, जोधपुर-342003 (राज.), फोन 0291-2624891, मोबाइल 9414126279, 9462543360, ईमेल swadhyaysanghjodhpur@gmail.com

-सुभाष हुण्डीवाल, संयोजक

पर्युषण पर्वाराधना हेतु स्वाध्यायी आमन्त्रित कीजिए

श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, जोधपुर विगत 75 वर्षों से सन्त-सतियों के चातुर्मास से वञ्चित गाँव/शहरों में पर्वाधिराज पर्युषण पर्व के पावन अवसर पर धर्माराधन हेतु योग्य, अनुभवी एवं विद्वान् स्वाध्यायियों को बाहर गाँव भेजकर जिनशासन एवं समाज की महती सेवा करता आ रहा है। इस वर्ष भी उन क्षेत्रों में जहाँ जैन सन्त-सतियों के चातुर्मास नहीं हैं, उन क्षेत्रों में स्वाध्यायी बन्धुओं को भेजने की व्यवस्था है। इस वर्ष पर्युषण पर्व 15 से 22 अगस्त, 2020 तक रहेंगे। अत: देश-विदेश के इच्छुक संघ के अध्यक्ष/मन्त्री अपने लेटरपैड पर आवेदन पत्र 30 जून, 2020 तक इस कार्यालय को अवश्य प्रेषित करावें। आवेदन-पत्र हेतु सम्पर्क सूत्र-**श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ,** प्लॉट नं. 2, सामायिक-स्वाध्याय भवन, नेहरू पार्क, सरदारपुरा, जोधपुर-342003 (राज.) फोन 0291-2624891, 9414126279 (कार्यालय), 9460551096 (संयोजक), 9413844592 (सचिव), 9461026279 (पर्युषण संयोजक), 9462543360 (कार्यालय प्रभारी)।

दक्षिण भारत हेतु सम्पर्क सूत्र-नवरतनजी बाघमार 9444051065 (संयोजक), सुधीरजी सुराणा 9381540004

-सुभाष हुण्डीवाल, संयोजक

करुणा अन्तरराष्ट्रीय का 22वाँ राष्ट्रीय अधिवेशन एवं करुणा क्लब अवार्ड वितरण समारोह

करुणा अन्तरराष्ट्रीय एक मुनाफा रहित पञ्जीकृत एवं भारतीय जीव-जन्तु कल्याण बोर्ड से मान्यता प्राप्त

संस्थान है। यह संस्थान देश के विभिन्न शिक्षण संस्थानों में 'करुणा क्लबों' का गठन कर, विद्यार्थियों में अहिंसा, करुणा एवं मानवीय मूल्यों के प्रचार-प्रसार का कार्य कर रहा है। इस क्रम में हिन्दी और अंग्रेजी भाषा में विद्यार्थियों के लिए राष्ट्रीय स्तर की प्रतियोगिताओं पर लाखों रुपयों की राशि पुरस्कार स्वरूप दी जाती है। संस्थान द्वारा मासिक करुणा न्यूजलेटर प्रकाशित किया जाता है। वर्तमान में देश के विभिन्न राज्यों के विद्यालयों/महाविद्यालयों में कुल 2600 करुणा क्लब, 39 करुणा केन्द्रों और 800 कार्यकर्ताओं के माध्यम से संचालित है। इस प्रकार लाखों विद्यार्थियों को सुसंस्कृत करने का कार्य कर रहा है करुणा अन्तरराष्ट्रीय।

22वें वार्षिक अधिवेशन में विशेष उपक्रम-(1) देश के विभिन्न राज्यों से करुणा प्रतिनिधि होंगे सम्मिलित, करेंगे करुणा चर्चा। (2) 25 विद्यालय-उत्कृष्ट करुणा क्लब होंगे सम्मानित एवं पुरस्कृत। (3) 15 विद्यार्थियों को मिलेंगे दयावान अवार्ड। (4) शिक्षकों का सम्मान (5) मानवीय मूल्यों पर प्रशिक्षण कार्यक्रम की रूपरेखा प्रस्तुतिकरण। (6) पर्यावरण संरक्षण के सन्दर्भ में शाकाहार। (7) विभिन्न राज्यों के करुणा केन्द्रों का सम्मान। (8) करुणा विषयक साहित्य का प्रदर्शन एवं वितरण। (9) नैतिक मूल्यों, अहिंसा, करुणा, पर्यावरण संरक्षण विषयक सांस्कृतिक कार्यक्रम।

सम्पर्क सूत्र-करुणा अन्तरराष्ट्रीय कार्यालय 044-28591724/1714, अधिवेशन चेयरमेन श्री केदारमल राठी 8072127950

संक्षिप्त-समाचार

जोधपुर-परम श्रद्धेय उपाध्यायप्रवर पण्डित रत्न श्री मानचन्द्रजी म.सा. आदि ठाणा के सामायिक-स्वाध्याय भवन, शक्तिनगर, तत्त्वचिन्तक श्रद्धेय श्री प्रमोदमुनिजी म.सा. आदि ठाणा के नेहरू पार्क तथा व्याख्यात्री महासती श्री चन्द्रकलाजी म.सा. आदि ठाणा के सरस्वती नगर चातुर्मास में विराजने पर जोधपुरवासियों ने अपूर्व धर्म-ध्यान का लाभ प्राप्त किया। श्राविका मण्डल द्वारा विभिन्न धार्मिक प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता का आयोजन, साप्ताहिक कक्षाओं का आयोजन,युवा वक्ताओं को प्रशिक्षित करने के साथ धर्म-ध्यान की प्रेरणा की गई। प्रबुद्ध श्रावकों-श्राविकाओं का सहयोग प्राप्त हुआ। 5 नवम्बर, 2019 को प्रात: 9 से 1 बजे तक श्रावक-श्राविकाओं के लिए विशेष शिविर का आयोजन किया गया, जिसमें 125 शिविरार्थियों ने भाग लिया। इस शिविर में शिविरार्थियों को संथारा संलेखना, हीन भावना, निन्दा, सकारात्मक सोच, प्रेरित करने की कला आदि विषयों पर अध्ययन एवं ज्ञानार्जन कराया गया। चातुर्मासकाल में श्राविकाओं को जोड़ने का भी प्रयास किया गया।

परम श्रद्धेय उपाध्यायप्रवर पण्डित रत्न श्री मानचन्द्रजी म.सा. आदि ठाणा के पावन सान्निध्य में सामायिक-स्वाध्याय भवन, शक्तिनगर में श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल द्वारा 12 से 16 दिसम्बर, 2019 तक पंचदिवसीय शिविर का आयोजन किया गया, जिसमें 75 श्राविकाओं ने बड़े ही उत्साह के साथ भाग लिया। इस शिविर में प्रबुद्ध अध्यापकों द्वारा शिविरार्थियों को ज्ञानार्जन करवाने के साथ शिक्षण बोर्ड के पाठ्यक्रमानुसार कक्षा 1 से 8 तक अध्यापन करवाया गया। *-काजल जैन, सचिव*

जयपुर-श्री कन्हैयालाल हीरावत चैरिटेबल ट्रस्ट, जयपुर के श्री रतनेन्द्र हीरावत मेमोरियल हॉस्पिटल एवं रिसर्च सेन्टर के प्रांगण में 17 जनवरी, 2020 से भ्रमणशील शल्य चिकित्सा इकाई, राजस्थान सरकार जयपुर तथा जिला अन्धता निवारण समिति चित्तौड़गढ़ द्वारा 38वाँ विशाल नि:शुल्क शल्य एवं नेत्र चिकित्सा शिविर भीलवाड़ा, चित्तौड़गढ़ अंचल में जोगणिया माताजी में लगाया जा रहा है। इसमें शल्य चिकित्सा, गुर्दे और पित्त की थैली में पथरी, हरनियाँ, अपेण्डिक्स, आँखों के सभी प्रकार के ऑपरेशन तथा लेन्स लगाये जायेंगे एवं स्त्री रोगों में बाँझपन, मासिक धर्म आदि से सम्बन्धित तथा अन्य हड्डियों, दाँतों आदि का इलाज एवं नाक-कान-गला आदि विभिन्न

प्रकार के इलाज की सारी सुविधाएँ उपलब्ध रहेगी।

-पारसचन्द हीरावत, संयोजक ट्रस्टी श्री कन्हैयालाल हीरावत चैरिटेबल ट्रस्ट

उदयपुर-भारतीय प्राकृत स्कालर्स सोसायटी तथा जैनविद्या एवं प्राकृत विभाग, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर के संयुक्त तत्त्वावधान में 08 दिसम्बर, 2019 को 'विदेशों में जैनधर्म' विषयक व्याख्यान माला का आयोजन किया गया। मुख्य वक्ता के रूप में श्रीमान् निर्मल कुमारजी सेठी, अध्यक्ष-भारतवर्षीय दिगम्बर जैन महासभा, नई दिल्ली का सान्निध्य प्राप्त हुआ । उन्होंने अपने वक्तव्य में विदेशों में विद्यमान जैन-संस्कृति के मूलभूत आधार अभिषेक करने की विधि के अवशेष, वेदी एवं मन्दिर की संरचना आदि सूक्ष्म विषयों की जानकारी दी। साथ ही प्रो. पी. एम. अग्रवाल, उदयपुर ने कहा कि जैनधर्म विषयक छोटी-छोटी पुस्तकों का सृजन करना चाहिए और उनकी बिक्री सर्वत्र बुक-स्टालों पर उपलब्ध हो सके, जिससे सामान्यजन के मध्य जैनधर्म का प्रचार-प्रसार हो सके।

कार्यक्रम के मध्य प्राकृत मनीषी प्रो. प्रेम सुमनजी जैन, उदयपुर, अध्यक्ष-भारतीय प्राकृत स्कालर्स सोसायटी की नूतन कृति 'अपभ्रंश साहित्य का इतिहास' का लोकार्पण समागत मनीषियों द्वारा किया गया। कार्यक्रम की अध्यक्षता प्रो. के.एल.कच्छारा, उदयपुर ने की। कार्यक्रम का संचालन डॉ. सुमत कुमार जैन, सहायक आचार्य जैनविद्या एवं प्राकृत विभाग उदयपुर ने किया।

-डॉ. सुमत कुमार जैन, सहायक आचार्य जैनविद्या एवं प्राकृत विभाग उदयपुर

उदयपुर-जैनविद्या एवं प्राकृत विभाग, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर के तत्त्वावधान में 'आचार्य महाप्रज्ञ का आत्मदर्शन : सम्बोधि ग्रन्थ के परिप्रेक्ष्य में' विषयक व्याख्यान का आयोजन 18 दिसम्बर, 2019 को किया गया। मुख्य वक्ता के रूप में प्रो. धर्मचन्द्र जैन, सम्पादक, जिनवाणी, जयपुर का सान्निध्य प्राप्त हुआ। उन्होंने अपने वक्तव्य में आत्मा के स्वरूप एवं उसके साक्षात्कार के सम्बन्ध में न्याय-वैशेषिक, वेदान्त, सांख्य, बौद्ध आदि दर्शनों की चर्चा करते हुए जैनदर्शन के अनुसार आत्म-स्वरूप पर विशेष प्रकाश डाला। आचार्य महाप्रज्ञ के आत्म-दर्शन विषयक चिन्तन को उन्होंने सम्बोधि ग्रन्थ के आधार पर प्रस्तुत करते हुए कहा कि आत्मा का साक्षात्कार करने में स्वाध्याय एवं ध्यान सर्वाधिक उपयोगी हैं। सम्बोधि ग्रन्थ की रचना आचार्य महाप्रज्ञ ने 40 वर्ष की वय में भगवद्गीता की तर्ज पर 18 अध्यायों में 786 श्लोकों में की है। भगवद्गीता में श्री कृष्ण अर्जुन के प्रश्नों का समाधान करते हैं तो 'सम्बोधि' ग्रन्थ में प्रभु महावीर मुनि मेघकुमार के प्रश्नों का उत्तर देते हैं। ग्रन्थ में सम्यक् बोध कराते हुए जैनधर्म-दर्शन के विविध पक्षों को संक्षेप में प्रस्तुत किया गया है। यह ग्रन्थ प्रेक्षा ध्यान विधि के विकास के पूर्व रच दिया गया था, तब भी आत्म-साक्षात्कार में महाप्रज्ञजी ने ध्यान को उपयोगी स्वीकार किया था। आचार्य महाप्रज्ञ ने इस ग्रन्थ में आगम-वाक्यों एवं गाथाओं के सार को ही संस्कृत-श्लोकों में निबद्ध किया है। कार्यक्रम की अध्यक्षता कला संकाय महाविद्यालय की अधिष्ठाता प्रो. साधना कोठारी ने की तथा मुख्य अतिथि के रूप में प्राकृत मनीषी प्रो. प्रेमसुमन जैन ने सम्बोधित किया। कार्यक्रम का संचालन प्रो. जिनेन्द्र कुमार जैन ने किया।

-डॉ. जिनेन्द्र कुमार जैन, अध्यक्ष जैनविद्या एवं प्राकृत विभाग, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर

कोलकाता-श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा के तत्त्वावधान में 7 दिसम्बर, 2019 को राष्ट्रीय जैनविद्या संगोष्ठी का आयोजन किया गया। समाजसेवी सोहनराजजी सिंघवी की अध्यक्षता में हुए उद्घाटन सत्र में मुख्यअतिथि डॉ. कल्याणकुमारजी चक्रवर्ती ने कहा कि भारतवर्ष में सर्वत्र जैन धरोहर विद्यमान है, उसे पहचानने और सहेजने की जरूरत है। स्वागत भाषण में सभा-अध्यक्ष सरदारमलजी कांकरिया ने कहा कि 91 वर्ष पूर्व कुछ

श्रावक किराये के स्थान पर रविवारीय सामूहिक सामायिक करते थे। उनके प्रयासों से सभा और जैन विद्यालय की स्थापना हुई। आज सभा और इससे सम्बद्ध प्रकल्प साधना, सेवा और शिक्षा के कल्पवृक्ष बन गए हैं। सम्मानित अतिथि के रूप में उपस्थित सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के अध्यक्ष श्री चंचलमलजी बच्छावत ने अपना अनुभव बताया कि सामायिक करने के उपरान्त वे उनके फैसलों में अधिक मानवीयता और तार्किकता का समावेश कर सके। मुख्य वक्ता डॉ. जितेन्द्र बी. शाह, अहमदाबाद ने 'श्रमणाचार और वर्तमान' विषय पर विचार रखे।

अन्तरराष्ट्रीय प्राकृत अध्ययन व शोध केन्द्र, चेन्नई के निदेशक साहित्यकार डॉ. दिलीपजी धींग की अध्यक्षता में प्रथम सत्र हुआ, जिसमें डॉ. किरणजी सिपानी, डॉ. मंजूजी नाहटा, कंचनजी कांकरिया और डॉ. वसुमतीजी डागा ने क्रमश: जैन रामकथा, कर्मसिद्धान्त, भगवती सूत्र और अहिंसा विषयक शोधपत्र पढ़े। संगोष्ठी संयोजक डॉ. लताजी बोथरा ने कश्मीर में जैनधर्म, डॉ. दिलीपजी धींग ने निर्ग्रन्थ का स्वरूप एवं परम्परा, डॉ. श्वेताजी जैन ने बच्चों की परवरिश में जैन सिद्धान्त, अनिताजी महेमवाल ने जैन शिक्षा व्यवस्था तथा वीरेन्द्रजी जैन ने सम्यक्त्व पर शोधपत्र पढ़े। शुरू में दिव्याजी भूरा ने मंगलाचरण और देवेन्द्रजी बेंगानी ने भजन प्रस्तुत किया।

-अशोक मिन्नी, सभा मन्त्री

दिल्ली-सन् 2011 की सरकारी जनगणना के अनुसार हमारे समाज की जनसंख्या मात्र 45 लाख दिखाई गई है। लेकिन वास्तव में हमारी जनसंख्या इससे कहीं ज़्यादा है। सरकारी आंकड़ों में हमारी कम जनसंख्या होने का एक कारण यह है कि जनगणना के समय हम अपने नाम के साथ गोत्र शब्द का प्रयोग करते हैं, जैन संज्ञा का नहीं। दूसरा कारण यह है कि धर्म के कॉलम में हम 'हिन्दू' लिखवा देते हैं, जैन नहीं। जबकि हिन्दू हमारी राष्ट्रीयता है और जैन हमारा धर्म है।

सन् 2021 में राष्ट्रीय जनगणना की जायेगी। इसकी शुरुआत 2020 से हो जायेगी। इस समय सभी जैन अपने नाम के साथ जैन लिखवाएँ। यदि हम अपना गोत्र लिखवाएँ तो भी उसके साथ 'जैन' संज्ञा को जोड़ें। उदाहरण के लिए 'माँगीलाल सेठिया' की बजाए 'माँगीलाल सेठिया जैन' लिखवाएँ 'अनिल गोयल' की बजाए 'अनिल गोयल जैन' लिखवाएँ इत्यादि। इसी प्रकार धर्म के कॉलम में जैन ही लिखवाएँ। जैनों की प्रतिनिधि संस्था जैन महासभा-दिल्ली के महासचिव प्रो. रतन जैन ने बताया कि जैनों की सही जनसंख्या का आकलन करने के लिए जैन जनगणना जागृति अभियान राष्ट्रीय समिति का गठन किया गया है।

-प्रो. रतन जैन, महासचिव जैन महासभा एवं संयोजक जैन जनगणना समिति

बधाई

जयपुर-डॉ. कमलचन्दजी सोगाणी का प्राकृत भाषा एवं साहित्य में उल्लेखनीय योगदान देने के लिए राष्ट्रपति सम्मान हेतु चयन हुआ है। आपको दिल्ली में **महामहिम राष्ट्रपति द्वारा सम्मान** के रूप में प्रशस्ति-पत्र सहित पाँच लाख रुपये प्रदान किए जाएँगे। आप मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर के दर्शनशास्त्र विभाग में प्रोफेसर रहे। आपके मार्गदर्शन में जयपुर में अपभ्रंश साहित्य अकादमी की स्थापना 1988 ईस्वी में की गई जहाँ प्राकृत, अपभ्रंश तथा जैनधर्म-दर्शन एवं संस्कृति की शिक्षा पत्राचार के माध्यम से भारतीय जिज्ञासुओं को सुलभ होती है। विदेशी अध्ययनार्थी भी प्राकृत, अपभ्रंश एवं जैनधर्म के शिक्षण हेतु आपके पास आते हैं और आपकी शिक्षण पद्धति से प्रभावित होते हैं। प्राकृत-अपभ्रंश भाषा का अध्ययन आप मातृभाषा के माध्यम से ही करवाते हैं। आपने अब तक प्राकृत-अपभ्रंश की लगभग 46 पुस्तकों का लेखन कर इसके अध्ययन को बहुत सरल कर दिया

है। आपकी आचारांग चयनिका आदि प्रसिद्ध हैं। वर्तमान में आप जैनविद्या संस्थान श्री महावीरजी अपभ्रंश साहित्य अकादमी, जयपुर के निदेशक तथा दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्री महावीरजी प्रबन्धकारिणी समिति के सदस्य हैं।

कोलकाता-विचार मञ्च कोलकाता की ओर से आयोजित भव्य समारोह में 8 दिसम्बर, 2019 को अन्तरराष्ट्रीय प्राकृत अध्ययन एवं शोध केन्द्र, चेन्नई के निदेशक साहित्यकार **डॉ. दिलीपजी धींग** को आचार्य नानेश स्मृति-सम्मान, पश्चिम बंगाल के पूर्व राज्यपाल केशरीनाथजी त्रिपाठी को विजयसिंह नाहर सम्मान, लालभाई दलपतभाई भारतीय संस्कृति विद्यामन्दिर, अहमदाबाद के निदेशक **डॉ. जितेन्द्र बी. शाह** को हेमचन्द्राचार्य साहित्य सम्मान, डॉ. ओमजी निश्चल को प्रो. कल्याणमल लोढ़ा सारस्वत साधना सम्मान, जिनवाणी की पूर्व सह-सम्पादक **डॉ. श्वेताजी जैन, जोधपुर** को गणेश ललवाणी सम्मान, डॉ. राजीवजी रावत को विष्णुकान्त शास्त्री प्रतिभा सम्मान, डॉ. किरणजी सिपानी को फूलकँवर कांकरिया सम्मान और पार्थजी चटर्जी को इन्द्र दुगड़ सम्मान से सम्मानित किया गया। सम्मान के रूप में सभी को मुक्ताहार, शॉल, सम्मान-पदक और सम्मान-राशि प्रदान की गई। मञ्च के मन्त्री सरदारमलजी कांकरिया ने बताया कि विचार मञ्च द्वारा 1986 से निरन्तर प्रतिवर्ष जैनविद्या, साहित्य, कला, समाजसेवा, शिक्षा आदि क्षेत्र के विशिष्टजनों का सम्मान किया जा रहा है। *-विनोद मिन्नी, सहमन्त्री*

चेन्नई-मद्रास विश्वविद्यालय में जैनविद्या विभाग के शोधार्थी सुभाषचन्द्र जैन को 29 नवम्बर, 2019 को 'जैनदर्शन में कर्मवाद सिद्धान्त और पुनर्जन्म' विषय पर पी-एच.डी. की उपाधि प्रदान की गई है। आप ने अपना शोधकार्य विभागाध्यक्ष डॉ. प्रियदर्शनाजी जैन के निर्देशन में सम्पन्न किया। *-डॉ. दिलीप धींग*

श्रद्धाञ्जलि

जोधपुर-धर्मनिष्ठ सुश्राविका श्रीमती शान्तिदेवीजी धर्मपत्नी वीरभ्राता श्री चञ्चलचन्दजी सेठिया का 1 दिसम्बर, 2019 को देहावसान हो गया। आप श्रद्धेय उपाध्यायप्रवर पण्डित रत्न श्री मानचन्द्रजी म.सा. की सांसारिक भाभीजी थीं। आप मृदुभाषी, मिलनसार, सरलमना, शान्तस्वभावी होने के साथ जप-तप, स्वाध्याय में अग्रणी रहती थी। आप 35 वर्षों तक पर्युषण पर्व में आठ दिन तक गुरु सेवा में रही। आपने अपने जीवनकाल में 2 अठाई की तपस्या की तथा व्रत-प्रत्याख्यान नियमित रूप से करती थी। आपने वीर माताजी के साथ कई वर्षों तक दो से चार माह तक गुरु भगवन्तों की सेवा में चौका किया। आपका देव, गुरु एवं धर्म के प्रति अटूट श्रद्धा के साथ-साथ संघ-सेवा हेतु पूर्ण समर्पण भाव था। सेठिया परिवार संघ की गतिविधियों एवं सेवा भावना में सदैव तत्पर रहा है। कुछ वर्षों से अस्वस्थ होने पर भी आपका स्मरण भजन-चिन्तन, गुरुभक्ति में सदा बना रहा। आप अपने पीछे भरापूरा परिवार छोड़कर गई हैं। *-प्रकाश टाटिया, संघाध्यक्ष*

होलनांथा-धर्मनिष्ठ सुश्रावक श्री प्रेमचन्दजी नागसेठिया का 20 दिसम्बर, 2019 को संथारा पूर्वक समाधिमरण हो गया। आप एवं आपका पूरा परिवार सन्त-सतीवृन्द की सेवा-भक्ति के साथ संघ-सेवा, समाज-सेवा में सदैव अग्रणी रहा है। आपने संस्कारों से अपने समूचे परिवार को समृद्ध किया। इसी का सुफल है कि आपका सम्पूर्ण परिवार संघ द्वारा संचालित गतिविधियों एवं प्रवृत्तियों में निष्ठा पूर्वक जुड़ा हुआ है। श्री सागरजी सेठिया अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के कार्यकारिणी सदस्य के रूप में तथा श्री नरेशचन्दजी सेठिया श्री जैन रत्न युवक परिषद् होलनांथा के अध्यक्ष पद का दायित्व का बखूबी निर्वहन कर रहे है। विदुषी महासती श्री सौभाग्यवती म.सा. आदि ठाणा के महाराष्ट्र क्षेत्र में पधारने पर नागसेठिया परिवार ने विहार सेवा में अपनी महनीय सेवाएँ प्रदान

करने के साथ संघ की गतिविधियों में अपना सहयोग प्रदान किया है। *-धनपत सेठिया, महामन्त्री*

हिण्डौनसिटी-धर्मनिष्ठ वीरमाता श्रीमती किरणदेवीजी जैन का 11 दिसम्बर, 2019 को संथारापूर्वक समाधिमरण हो गया। ऐसी महान् आत्माएँ विरली ही होती है। आपकी सन्त-सतीवृन्द के प्रति अगाध श्रद्धा-भक्ति थी। आपका जीवन सरलता, मधुरता, उदारता, सेवाभावना आदि सद्गुणों से युक्त था। आपने अनेक त्याग-प्रत्याख्यान ग्रहण कर रखे थे। आप सन्त-सतीवृन्द की सेवा-भक्ति में सदैव तत्पर रहती थी। आपका सम्पूर्ण परिवार संघ द्वारा संचालित गतिविधियों में एवं प्रवृत्तियों में निष्ठा पूर्वक जुड़ा हुआ है। आपने अपनी सुपुत्री को जिनशासन में समर्पित किया जो आज व्याख्यात्री महासती श्री मुक्तिप्रभाजी म.सा. के रूप में जिनशासन की महती प्रभावना कर रही हैं। परम श्रद्धेय आचार्यप्रवर पूज्य श्री हीराचन्द्रजी म.सा. आदि ठाणा के हिण्डौनसिटी चातुर्मास में आप सहित परिवार के सभी सदस्यों ने अपूर्व धर्म-ध्यान का लाभ प्राप्त किया। *-धनपत सेठिया, महामन्त्री*

जलगाँव-धर्मनिष्ठ सुश्रावक श्री डूंगरचन्दजी सुपुत्र स्व. श्री बालचन्दजी भूरट (कुचेरा) का 15 दिसम्बर, 2019 को

70 वर्ष की आयु में देहावसान हो गया। आप नियमित तीन सामायिक करते थे। आपने अपने अन्तिम समय में भी कई व्रत-नियम ग्रहण किये। इस वर्ष महासती श्री चारित्रलताजी म.सा. आदि ठाणा के जलगाँव चातुर्मास में अपना पूर्ण समय धार्मिक ज्ञान-ध्यान सीखने में लगाया। आप महासती श्री चन्द्रकलाजी म.सा. के सांसारिक जीजाजी एवं महासती सुव्रतप्रभाजी म.सा. के सांसारिक फूफाजी थे। आप हर वर्ष गुरु भगवन्तों के दर्शन-वन्दन का लाभ लेते थे। आपकी जीवदया के प्रति गहरी श्रद्धा थी। *-धीरज डोसी, जोधपुर*

बालोतरा-धर्मनिष्ठ सुश्राविका श्रीमती हरकुदेवीजी धर्मपत्नी स्व. श्री चाँदकरणजी संचेती का 14 दिसम्बर, 2019

को 90 साल की आयु में चौविहार सांथरा पूर्वक समाधिमरण हो गया। आपका जीवन सरल एवं धार्मिक था। आपने 55 साल से सम्पूर्ण लीलोती का त्याग कर रखा था। आप नियमित रूप से 8-10 सामायिक करती थीं। आपकी सुपौत्री महासती श्री ज्योतिप्रभाजी म.सा. रत्नसंघ में धर्म की प्रभावना कर रही हैं। आपका पूरा परिवार धार्मिक गतिविधियों से जुड़ा हुआ है। आप अपने पीछे भरापूरा परिवार छोड़कर गयी हैं। *-सोहनलाल जैन, बालोतरा*

जयपुर-सुश्राविका श्रीमती अमरावबाईजी धर्मसहायिका स्व. श्री लाभचन्दजी पालावत का 07 दिसम्बर, 2019 को 93 वर्ष की आयु में स्वर्गवास हो गया। आपने जीवन काल में दो एकान्तर तप, 8 अठाई, 15-11 आदि अनेक तपस्याएँ सानन्द सम्पन्न की। महीने में बेला, तेला करने के साथ-साथ कई त्याग पच्चक्खान ग्रहण किए हुए थे। आपके आजीवन चौविहार का त्याग था। नियमित रूप से 5-7 सामायिक करती थी। साधु-साध्वियों की सेवा में निरन्तर अपने जीवन को बिताया। आप में परोपकार की अटूट भावना थी। आप अपने पीछे भरापूरा परिवार छोड़कर गयी हैं। *-अर्पित पालावत*

जयपुर-धर्मनिष्ठ सुश्रावक श्री प्रकाशचन्दजी मोगरा का 22 दिसम्बर, 2019 को देहावसान हो गया। धर्मनिष्ठा, कर्त्तव्य परायणता, कर्मठ सेवाभावना, स्वधर्मी वात्सल्य, विनम्रता आदि अनेक गुणों से आपका जीवन ओतप्रोत था। आप देव, गुरु एवं धर्म के प्रति पूर्णत: समर्पित थे। सन्त-सतियों की सेवा में सदैव तत्पर रहे थे।

-अशोक कुमार सेठ, मण्डल मन्त्री

चेन्नई-धर्मनिष्ठ सुश्राविका श्रीमती राजकुमारीजी झाबड़ धर्मसहायिका स्व. श्री गुलाबचन्दजी झाबड़ का 14 नवम्बर, 2019 को 87 वर्ष की आयु में संथारापूर्वक समाधिमरण हो गया। आप सुसंस्कारी, उच्चशिक्षित, धर्मनिष्ठ एवं सेवाभावी थी। आप अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ एवं सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के पूर्व

अध्यक्ष श्री पी. एस. सुराणा सा की सासूजी थी। आपके सुपुत्र श्री कल्याणजी झाबड सुराणा एण्ड सुराणा इण्टरनेशनल अटोर्नीज के वरिष्ठ और विद्वान् अधिवक्ता है। *-विनोद सुराणा, चेन्नई*

कुण्डेरा, स.मा.-धर्मनिष्ठ सुश्रावक श्री हंसराजजी जैन का 26 नवम्बर, 2019 को देहावसान हो गया। आपका

समस्त जीवन राजकीय सेवा के साथ-साथ धर्मध्यान तथा स्वाध्याय सेवा में व्यतीत हुआ। आप सामायिक, चौविहार त्याग तथा स्थानक में प्रार्थना नियमित करते थे। आप अपने पीछे भरा-पूरा परिवार छोड़कर गये हैं।

-पंचोली परिवार कुण्डेरा वाले

अम्बात्तूर (चेन्नई)-सुश्राविका श्रीमती शारदाबाईजी धर्मत्नी स्व. श्री मोतीलालजी कोटेचा (निवासी बिलाड़ा) का 21 नवम्बर, 2019 को 86 वर्ष की आयु में देहावसान हो गया। आपकी पुत्रवधू श्रीमती विजयाजी कोटेचा (निदेशक, जैन गुरुकुल, अम्बात्तूर) ने निष्ठा से सेवा की, जिनवाणी सुनाई और समाधि उपजाई। आपके मरणोपरान्त नेत्रदान किया गया। *-माणकचन्द कोटेचा, अम्बात्तूर*

चालीसगाँव-धर्मनिष्ठ सुश्रावक श्री माणकचन्दजी शिवलालजी गारिया का 15 नवम्बर, 2019 को 78 वर्ष की आयु में देहावसान हो गया। आपकी आचार्यप्रवर, उपाध्यायप्रवर एवं सन्त-सतियों के प्रति अनन्य श्रद्धा भक्ति रही है। आपने वरिष्ठ स्वाध्यायी के रूप में लगभग 33 वर्ष तक सेवा प्रदान की। आप अपने पीछे भरा-पूरा परिवार छोड़कर गए है। आपकी पोती श्रमण संघ में दीक्षित है।

अलवर-धर्मनिष्ठ सुश्राविका श्रीमती सुशीलादेवीजी जैन धर्मसहायिका स्व. श्री मक्खनलालजी जैन (बड़ौदाकान वाले) का 7 दिसम्बर, 2019 को देहावसान हो गया। आपका जीवन सरलता, मधुरता, उदारता, सेवाभावना आदि सद्गुणों से युक्त था। आपका संस्कारित परिवार सामाजिक एवं धार्मिक कार्यों में अग्रणी रहता है।

नववर्ष संकल्प

श्री त्रिलोकचन्द जैन

कुछ संकल्प नया,
कुछ प्रकल्प नया
तब अफ़सोस न होगा कि एक साल गया।
बीते साल की कुछ गलतियाँ,
या कुछ गलतफ़हमियाँ
भुला दें भीतर में जमी वहमियाँ,
महसूस की जो कमियाँ।
अब छोड़ जाना है,
नया इतिहास बनाना है
नया प्रभात लाना है,
कुछ कर गुज़र जाना है
नये साल में सत्य की कलम रहेगी साथ
मेरे कारण नहीं पहुँचे किसी को आघात।
सर ऊँचा ही रहे ईमान से मेरा
निष्कामता भी जमा ले अपना डेरा।
हर कदम आगे बढ़े,
विगत की खूबसूरत यादें हो
हकीकत में जीयें,
पूरे हमारे वादे हों।
संस्कारों को हम रग-रग में रमाएँ,
हर दिन की कुछ अच्छी यादें बसाएँ।
दो हजार बीस में हर काम करें इक्कीस,
इस तरह संकल्पपूर्वक नया साल मनाएँ।।

37/67, रजत पथ, मानसरोवर, जयपुर

10 जनवरी 2020
जिनवाणी 86
ISSN 2249-2011

साभार-प्राप्ति-स्वीकार

4000/- साहित्य सदस्यता आजीवन (अधिकतम 20 वर्ष) हेतु प्रत्येक

804 डॉ. अरिहन्तजी जैन, झोटवाड़ा-जयपुर (राज.)

1000/-जिनवाणी पत्रिका की आजीवन (अधिकतम 20 वर्ष) सदस्यता हेतु प्रत्येक

क्रम संख्या 16124 से 16125 तक कुल 2 सदस्य बने

'जिनवाणी' मासिक पत्रिका हेतु साभार प्राप्त

2100/- श्री शान्तिलालजी, पदम कुमारजी जैन (एण्डवा वाले), सवाईमाधोपुर, चि. नरेन्द्रजी सुपुत्र श्रीमती सन्तोषजी-स्व. श्री राजेन्द्र प्रसादजी जैन का शुभविवाह सौ.कां. नेहाजी सुपुत्री श्रीमती बनिताजी-धर्मचन्दजी जैन के संग 10 दिसम्बर, 2019 को सुसम्पन्न होने की खुशी में।

2100/- डॉ. धर्मचन्दजी, ऋषभचन्दजी, टीकमचन्दजी, विनोद कुमारजी जैन, अलीगढ़-रामपुरा-मुम्बई, सौ.कां. आकांक्षाजी (सुपुत्री मधु-ऋषभजी जैन, मुम्बई) का शुभविवाह 8 दिसम्बर, 2019 को चि. विनयजी जैन (सुपुत्र श्री गौतमचन्दजी जैन देवली वाले, इन्दौर) के साथ सम्पन्न होने के उपलक्ष्य में।

1100/- श्री नरेन्द्र कुमारजी, दिनेश कुमारजी जैन (कुण्डेरा वाले), जयपुर, सुश्रावक श्री हंसराजजी जैन का 26 नवम्बर, 2019 को स्वर्गवास हो जाने पर उनकी पुण्य स्मृति में।

1100/- श्री राजकुमारजी, अंकितजी, अर्पितजी पालावत, जयपुर, पूजनीया श्रीमती अमरावबाईजी धर्मपत्नी स्व. श्री लालचन्दजी पालावत की पुण्य स्मृति में।

1100/- श्री घनश्यामजी जैन (सुमेरगंज मण्डी-बून्दी वाले), जयपुर, पूज्य पिता श्री रामप्रहलादजी एवं पूज्या माताजी श्रीमती रामप्यारीजी की पुण्यस्मृति में भेंट।

1100/- श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा, कोलकाता की ओर से सप्रेम भेंट।

1100/- श्रीमती कान्तादेवीजी धर्मसहायिका स्व. श्री प्रकाशचन्दजी मेहता, जोधपुर, सुपौत्री सौ. सलौनी के परिणयोत्सव पर भेंट।

1100/- श्री चंचलमलजी, राजेशजी, राहुलजी गांग, जोधपुर, श्रीमती केशीजी धर्मसहायिका श्री चंचलमलजी गांग की 24 जनवरी, 2020 को चतुर्थ पुण्यस्मृति के उपलक्ष्य में।

1100/- श्री चंचलचन्दजी, चन्द्रशेखरजी, योगिताजी, सुभाषजी, शोभाजी सेठिया एवं श्रीमती ममताजी भंसाली, जोधपुर, श्रीमती शान्तिदेवीजी धर्मसहायिका श्री चंचलचन्दजी सेठिया का 01 दिसम्बर, 2019 को स्वर्गवास हो जाने पर उनकी पावन स्मृति में।

1100/- श्री नरेशचन्दजी, शीतलजी जैन, श्योपुर, सुपौत्र दिव्यम्, सुपुत्री श्री शीतलजी जैन के जन्मोत्सव के अवसर पर भेंट।

1100/- श्री देवेन्द्रनाथजी-श्रीमती कमलाजी, लोकेन्द्र नाथ-श्रीमती ऋतुजी, सुश्री लोरीजी, सुश्री आर्विजी मोदी, जोधपुर, कीर्तिशेष श्रीमती कृष्णाजी मोदी धर्मसहायिका स्मृतिशेष स्व. श्री हुकमनाथजी मोदी की 26 जनवरी, 2020 को 17वीं पुण्यतिथि के उपलक्ष्य में।

गजेन्द्र फाउण्डेशन हेतु साभार

500000/- श्री जैन रत्न हितैषी ट्रस्ट, सूरत द्वारा सप्रेम भेंट।

आस्ट्रेलिया में शाकाहार का समर्थन-आस्ट्रेलिया के मेलबर्न शहर में शाकाहार समर्थकों ने मांसाहार खत्म करने और पशुओं के साथ होने वाली क्रूरता के खिलाफ़ सड़कों पर प्रदर्शन किया। मेलबर्न के अलावा सिडनी, कैनबरा समेत कई अन्य शहरों में भी प्रदर्शन हुए। इस दौरान प्रदर्शनकारी बूचड़खानों तक पहुँच गए और पशु-हत्या रोकने की माँग की। इस प्रकार विदेशों में भी शाकाहार के प्रति लोग आकर्षित हो रहे हैं।

10 जनवरी 2020
जिनवाणी 87
ISSN 2249-2011

बाल-जिनवाणी

प्रतिमाह बाल-जिनवाणी के अंक पर आधारित प्रश्नोत्तरी में भाग लेने वाले श्रेष्ठ उत्तरदाताओं को सुगनचन्द प्रेमकँवर रांका चेरिटेबल ट्रस्ट-अजमेर द्वारा श्री माणकचन्दजी, राजेन्द्र कुमारजी, सुनीलकुमारजी, नीरजकुमारजी, पंकजकुमारजी, रौनककुमारजी, नमनजी, सम्यक्जी, क्षितिजजी रांका, अजमेर की ओर से पुरस्कृत किया जा रहा है। पुरस्कारों की राशि इस प्रकार है- प्रथम पुरस्कार-600 रुपये, द्वितीय पुरस्कार-400 रुपये, तृतीय पुरस्कार- 300 रुपये तथा 200 रुपये के तीन सान्त्वना पुरस्कार। पुरस्कार राशि सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल,जयपुर द्वारा भिजवाई जाती है।

निकृष्ट कर्म

श्रीमती अंशु सुराणा

आज हमारे शहर में धर्म शिविर लगा है, मैं भी वहीं जाकर आ रहा हूँ। दीपक अपने मित्र राकेश को बता रहा है। शिविर में बहुत अच्छी शिक्षाएँ दी जाती हैं। आज हमें बताया गया कि जुआँ खेलना बुरी बात है? वाह दीपक! किसने कह दिया जुआँ खेलना बुरी बात है? राकेश कह रहा था अरे जुएँ से मनोरञ्जन होता है, बिना कमाया पैसा मिलता है, कोठी, बंगला बनाया जा सकता है। मेरे चाचा भी जुआँ खेलते हैं और चाची के लिए रोज नई चीज़ लाते हैं। दीपक बोला-अरे ये सब आराम कितने दिन का है तू नहीं जानता। राजा नल और धर्मराज युधिष्ठिर की जिन्दगी कैसे बर्बाद हुई? जिन आदतों से इन्सान धर्म और सदाचार से दूर हो जाता है, तन-मन-धन और जीवन का नुकसान कराने वाली ये आदतें ही व्यसन कहलाती है। जीवन में यदि एक बार बुरी आदत लग जाये तो उसे छोड़ना बहुत मुश्किल हो जाता है। जैसे जो व्यक्ति प्रमाद का आचरण करते हैं उनका गिरना घर के फर्श पर गिरने के समान है, जहाँ से खड़े होने में तकलीफ़ नहीं होती। जो पाप का आचरण करते हैं वे सड़कर पर गिरने जैसे हैं। जहाँ थोड़ी तकलीफ़ होती है, थोड़ा समय उठने में लगता है, पर जो व्यसन का सेवन करते हैं उनकी हालत कीचड़ में गिरने जैसी है। जहाँ तकलीफ़ और उठने में लगने वाला समय दोनों ही अधिक होते हैं। प्रमाद ग्रस्त को प्रमाद मुक्त बनाना आसान है, पापी को पाप मुक्त बनाना थोड़ा कठिन, पर व्यसनी को व्यसन मुक्त बनाना अत्यन्त कठिन है। दीपक आगे बोला, हमें बताया कि मात्र जुआँ ही नहीं, हमारी आत्मा का अहित करने वाली बुराइयाँ सात प्रकार की हैं-

(1) जुआँ खेलना-धन का नाश। (2) मांस खाना-दया का नाश। (3) शराब पीना-अच्छे स्वास्थ्य और शान्ति का नाश, बीमारियों को निमन्त्रण। (4) वेश्यागमन-धन और धर्म का नाश, नरक को आमन्त्रण। (5) शिकार खेलना-क्षण का मज़ा, भव-भव की सजा, दुर्गति का रिजर्वेशन। (6) चोरी-जेल में हो जाता निवास। (7) परस्त्री गमन-उजड़ जाता महकता आवास, बीमारियों का होता वास।

जिस तरह से पैर में घुसने वाले काँटे को पड़ौसी व्यक्ति न देख सके, पर हम स्वयं उसकी चुभन से नहीं बच सकते। इसी तरह भले ही हमारे पाप किसी को न दिखाई दें, हमें उसकी सजा से, कदाचित् मुक्ति भी मिल जाए, पर अन्त:करण में होने वाली व्यथा-बेचैनी और वेदना से हमारा बच पाना असम्भव है।

व्यसन करना निकृष्ट कर्म है,
नहीं जानता व्यसनी अनुकम्पा का मर्म है।

इन सात बुरी आदतों से दूर रहना ही,
सच्चे जैन श्रावक का धर्म है।

-एस 149, महावीर नगर, जयपुर-302018 (राज.)

जन्मदिवस ऐसे मनाएँ

श्रीमती नीलू डागा

- उपहार स्वरूप फूलों का गुलदस्ता नहीं, शिक्षाओं का गुलदस्ता अर्थात् अच्छी पुस्तक दें।
- भोजन स्वजन-मित्रजनों को नहीं वरन् जरूरतमन्द अनाथ अपंग व्यक्तियों को प्रेम से करवायें।
- होटल में नहीं जाएँ। स्वयं के आत्म-विकास हेतु सामायिक, संवर आदि में समय निकालें।
- बधाई के लिए ग्रीटिंग कार्ड नहीं, बल्कि गुड बनने हेतु गॉड से प्रार्थना करें।
- किसी स्वधर्मी (जरूरतमन्द) की स्कूल फीस जमा करायें।
- गरीब व्यक्ति को दवा, औषधि दिलायें।
- मूक, बेसहारा पशु-पक्षियों का सहारा बनें।
- गुरु भगवन्तों के दर्शन करके तथा उनकी सीख को जीवन में उतारें।

सभी की दुआ लेना, आशीर्वाद पाना ही सच्चा जन्मदिवस मनाना तथा मानव जीवन को सार्थक बनाना है।

Questions and Answers

Sh. Dulichand Jain

Q. 1- What is the sacred prayer of the Jainas?

Ans. The Namaskāra Mantra is the sacred prayer of the Jainas. It is chanted every day and at the beginning of any auspicious task. Recited in the Prakrit language, this mantra is a five fold salutation.

Namo arihantāṇaṁ

I bow and pay obeisance to the Arihantas. They are the enlightened human beings, including the tīrthaṅkaras.

Nomo Siddhāṇaṁ

I bow and pay obeisance to the Siddhas. They are the liberated souls.

Namo āyariyāṇaṁ

I bow and pay obesiance to the Ācāryas. They are our spiritual leaders.

Nomo uvajjhāyāṇaṁ

I bow and pay obeisance to the Upādhyāyas. They are our spiritual teachers.

Namo loe savvasāhuṇaṁ

I bow and pay obeisance to every Sādhu and Sādhvī in this world.

Eso pañca namokkāro,
savva pāvappaṇāsaṇo.

These five salutations are capable for destroying all my sins.

Maṅgalāṇaṁ ca savvesiṁ, paḍhamaṁ havai maṅgalaṁ

Of all things auspicious, this mantra is supremely auspicious.

चौबीसवें बोले भंग 49

भंग-विकल्प रचना को 'भंग' कहते हैं। अथवा कोई भी व्रत-नियम, त्याग-प्रत्याख्यान जितने प्रकार के करण-योगों से ग्रहण किया जा सकता है, उन प्रकारों को 'भंग' कहते हैं।

इसमें यह बतलाया गया है कि किसी भी व्रत-नियम को श्रावक-श्राविकाएँ कितनी तरह से धारण कर सकते हैं। ये भंग तीन करण, तीन योग के आधार पर बनाये गये हैं।

करण का अर्थ है-किस दोष का सेवन स्वयं नहीं करना, दूसरों से नहीं कराना और करने वाले का अनुमोदन भी नहीं करना।

योग का अर्थ है-मन से वचन से काया से दोष का सेवन नहीं करना।

इन करण और योगों के आधार पर बनने वाले 49 भंग इस प्रकार हैं-

नौ अङ्क-11, 12, 13, 21, 22, 23, 31,

32, 33 इसमें प्रथम अङ्क 'करण' का दूसरा अङ्क योग का सूचक है।

अंक 11 के भंग नौ (1 से 9)। एक करण और एक योग से कहना-1. करूँ नहीं-मनसा, 2. करूँ नहीं-वयसा, 3. करूँ नहीं-कायसा, 4. कराऊँ नहीं-मनसा, 5. कराऊँ नहीं-वयसा, 6. कराऊँ नहीं-कायसा, 7. अनुमोदूँ नहीं-मनसा, 8. अनुमोदूँ नहीं-वयसा, 9. अनुमोदूँ नहीं-कायसा।

अंक 12 के भंग नौ (10 से 18)। एक करण और दो योग से कहना-10. करूँ नहीं-मनसा वयसा, 11. करूँ नहीं-मनसा, कायसा, 12. करूँ नहीं-वयसा, कायसा, 13. कराऊँ नहीं-मनसा, वयसा, 14. कराऊँ नहीं-मनसा, कायसा, 15. कराऊँ नहीं-वयसा, कायसा, 16. अनुमोदूँ नहीं-मनसा, वयसा, 17. अनुमोदूँ नहीं-मनसा, कायसा, 18. अनुमोदूँ नहीं-वयसा, कायसा।

अंक 13 के भंग तीन (19 से 21)। एक करण और तीन योग से कहना-19. करूँ नहीं-मनसा, वयसा, कायसा, 20. कराऊँ नहीं-मनसा, वयसा, कायसा, 21. अनुमोदूँ नहीं-मनसा, वयसा, कायसा।

अंक 21 के भंग नौ (22 से 30)। दो करण और एक योग से कहना-22. करूँ नहीं, कराऊँ नहीं-मनसा, 23. करूँ नहीं, कराऊँ नहीं-वयसा, 24. करूँ नहीं, कराऊँ नहीं-कायसा। 25. करूँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं-मनसा, 26. करूँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं-वयसा, 27. करूँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं-कायसा, 28. कराऊँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं-मनसा, 29. कराऊँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं-वयसा, 30. कराऊँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं-कायसा।

अंक 22 के भंग नौ (31 से 39)। दो करण और दो योग से कहना-31. करूँ नहीं, कराऊँ नहीं-मनसा, वयसा, 32. करूँ नहीं, कराऊँ नहीं-मनसा, कायसा, 33. करूँ नहीं, कराऊँ नहीं-वयसा, कायसा, 34. करूँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं-मनसा, वयसा, 35. करूँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं-मनसा कायसा, 36. करूँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं-वयसा, कायसा, 37. कराऊँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं-मनसा, वयसा, 38. कराऊँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं-मनसा, कायसा, 39. कराऊँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं-वयसा, कायसा।

अंक 23 के भंग तीन (40 से 42)। दो करण और तीन योग से कहना-40. करूँ नहीं, कराऊँ नहीं-मनसा, वयसा, कायसा, 41. करूँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं-मनसा, वयसा, कायसा, 42. कराऊँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं-मनसा, वयसा, कायसा।

अंक 31 के भंग तीन (43 से 45)। तीन करण और एक योग से कहना-43. करूँ नहीं, कराऊँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं-मनसा, 44. करूँ नहीं, कराऊँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं-वयसा, 45. करूँ नहीं, कराऊँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं-कायसा।

अंक 32 के भंग तीन (46 से 48)। तीन करण और दो योग से कहना-46. करूँ नहीं, कराऊँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं-मनसा, वयसा, 47. करूँ नहीं, कराऊँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं-मनसा, कायसा, 48. करूँ नहीं, कराऊँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं-वयसा, कायसा।

अंक 33 का भंग एक (49)। तीन करण और तीन योग से कहना-49. करूँ नहीं, कराऊँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं-मनसा, वयसा, कायसा।

इन 49 भंगों में से तीसरा भंग-करूँ नहीं-कायसा से प्राय: संवर व चौथा अणुव्रत ग्रहण किया जाता है। 19वाँ भंग-करूँ नहीं-मनसा, वयसा, कायसा से पाँचवाँ, छट्ठा, सातवाँ व 10वाँ व्रत ग्रहण किया जाता है। 40वाँ भंग-करूँ नहीं, कराऊँ नहीं-मनसा, वयसा, कायसा से दया, सामायिक, पौषध व्रत ग्रहण किये जाते हैं। साथ ही 1, 2, 3, 4, 8, 9, 10 और 11वाँ व्रत भी इसी भंग से ग्रहण किये जाते हैं।

उनपचासवाँ भंग-करूँ नहीं, कराऊँ नहीं, अनुमोदूँ नहीं-मनसा, वयसा, कायसा से संलेखना ग्रहण की जाती है तथा प्रतिमाधारी श्रावक भी इसी भंग से व्रतों का पालन करते हैं।

श्रावक-श्राविकाओं में उक्त सभी 49 भंग पाये जा सकते हैं। श्रावक-श्राविकाएँ अपनी शक्ति एवं योग्यता के अनुसार किसी भी भंग से व्रत-नियम-त्याग-प्रत्याख्यान अवश्यमेव धारण एवं पालन करें।

अहंकार के त्याग से हुआ केवलज्ञान

जैन जसराज देवड़ा धोका

वर्तमान अवसर्पिणी काल के तीसरे आरे में, इस चौबीसी के प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव भगवान हुए। उनकी दो पत्नियों से उन्हें 100 पुत्र और दो पुत्रियाँ सन्तान के रूप में प्राप्त थी। राजपाट तथा संसार के वैभव को असार मानते हुए ऋषभदेव ने महाभिनिष्क्रमण करके संसार का त्याग करके अपने 98 पुत्रों के साथ दीक्षा ग्रहण कर संयम जीवन की उच्चतम साधना करने लगे।

इनके ज्येष्ठ पुत्र भरत-जिनके नाम से हमारे देश का नाम भारत पड़ा है। उन्होंने एवं लघु भ्राता बाहुबली ने दीक्षा ग्रहण नहीं की। राज्य के लोभ में दोनों भाइयों के बीच भयंकर युद्ध छिड़ गया। दोनों के शक्तिशाली सामर्थ्यवान होने से युद्ध का अन्त भविष्य में भी नहीं दिख रहा था तब इन्द्र के कहने से दोनों भाइयों के बीच मुष्टि युद्ध हुआ। बाहुबलिजी के सिर पर भरतजी ने मुष्टि का प्रहार किया तब बाहुबलिजी घुटने तक जमीन में धँस गये और जब बाहुबलिजी ने वापस मुष्टि प्रहार करने के लिए हाथ उठाया तब क्षण भर के लिए उनके भावों में संसार की क्षणभंगुरता का दीप प्रज्वलित हो उठा। विवेक से बड़े भाई की हिंसा के पाप से बच कर स्वयं के सिर पर से पंचमुष्टि लोच करके संयम जीवन स्वीकार कर लिया।

युद्ध के मैदान में इतना साहसिक सत्त्व निखारने वाले सत्त्वशाली बाहुबलिजी थोड़े के लिए मन से हारने लगे। संयम स्वीकारने के बाद ऋषभदेव प्रभु के समक्ष अपने से पहले दीक्षित हुए छोटे 98 भाइयों, जो संयम जीवन में बड़े थे, वन्दन कैसे करूँ? नहीं-नहीं यह मुझसे नहीं होगा। इन्हीं विचारों में 12 महीने तक कायोत्सर्ग ध्यान में खड़े रह गये। जिद्द पर अड़ गये। जब तक मुझे केवलज्ञान प्राप्त नहीं होगा तब तक ऋषभदेव भगवान के पास नहीं जाऊँगा और केवलज्ञान प्राप्ति के बाद किसी को वन्दन करना ही नहीं पड़ेगा।

इधर उनकी सांसारिक साध्वी बहिनें ब्राह्मी और सुन्दरी को बाहुबलिजी की जिद्द का पता चला। वे उनके पास पहुँची और उन्हें समझाने तथा जिद्द छोड़ने हेतु प्रभावी शब्दों द्वारा इसप्रकार कहा-'वीरा म्हा! गज थकी नीचे उतरो, गज चढ़ियो केवल न होय।'

बहन साध्वी के शब्द सुनकर बाहुबलिजी के चिन्तन में यकायक जबरदस्त परिवर्तन आया और आभास हुआ जब तक मैं अंहकार रूपी हाथी से नीचे नहीं आऊँगा तब तक मुझे केवलज्ञान प्राप्त नहीं होगा। फिर अचानक विनय भाव में स्थिर होकर उन्होंने पश्चात्ताप की पवित्र गंगा में स्नान करके वन्दन नमस्कार की क्रिया करने हेतु पैर उठाया, उन्हें केवलज्ञान की प्राप्ति हो गई। सर्वत्र देव दुन्दुभि बजने लगी। भावों से नमस्कार करने मात्र से अनादि कालीन मोहनीय कर्म का सर्वथा सम्पूर्ण क्षय होने से केवलज्ञान प्राप्त हो गया।

अहंकार आत्मगुणों का घातक होता है, आत्मविकास में अवरोधक ऐसे मान कषाय को सर्वथा तिलाञ्जलि देना ही प्रगति की निशानी है। भाव नमस्कार के साधक बाहुबलिजी को शत-शत वन्दना।

-3-4-374/1/2, जैन श्रद्धा सुमन, लिंगपल्ली रोड़, कांचीगुड़ा, हैदराबाद-500027 (आन्ध्रप्रदेश)

LIFE

Smt. Vijeta Lodha

As simple and sweet as the word may sound.
It can be the most complex thing around.
While some are born with a silver spoon.
Some are born with nothing, not even a spoon.
While some may thank god for giving it to them.
Some mabe be praying to god to take it from them.
For some each day is like facing the tide.
For some it is just like one long stride.
For some it brings in only joy and no sorrow.
Some don't get to see joy neither today nor tomorrow.

Some keep marching forward making the most of it.
Some regret not having done anything, in it.
For some it ends as soon as it has begun.
Some live long enough to see even 110.
Some spend their lifetime helping those in need.
Some spend all of it in attempt to fulfil their greed.
Some choose to sacrifice their lives and are remembered as martyrs
While some get brain washed and become traitors.
Have we ever wondered why this disparity.
The only answer that is the Karma philosophy.

-A 8, Mahavier Nagar, Tonk Road, Jaipur-302018 (Raj.)

खुशहाली लाने के लिए

कवि युगराज जैन

एक गगनचुम्बी इमारत का हो रहा था निर्माण,
एक मज़दूर पत्नी संग कुदाली से
नींव खोदने में फूँक रहा था प्राण,
उनका नन्हा बेटा नींवं की मिट्टी
के ढेर पर मिट्टी से खेल रहा था,
मच्छरों के दंश झेल रहा था,
अचानक रोने की आवाज़ पड़ी सुनाई,
मजदूरन माँ दौड़ी चली आई,
कलेजे के टुकड़े को कलेजे से लगाया,
बड़े प्यार से उसे आँचल में छिपाया,
उसकी भूख मिटाने के लिए, बेटे को अमृतपान कराने के लिए,
पर दूध नहीं आ रहा था, बेटा रोता ही जा रहा था,
क्योंकि दूध तो पसीना बन नींव को मजबूत कर रहा था,
इधर बेटा भूखों मर रहा था, माँ की आँखें हो गई नम,
तब मजदूर ने ढाढ़स बँधाते कहा, तू मतकर इतना गम,
हमारे लिये ये खुशी क्या है कम
कि इसी इमारत के किसी फ्लेट के
वातानुकूलित बैडरूम के मखमली
गद्दे पर कभी किसी का बेटा खेलेगा,
सुनहरे भविष्य के सपने बुनेगा, बड़ा आदमी बनेगा,
क्यों भाग्यवान है न मेरी बात में दम, चल पगली रो मत,
फिर से मुन्ने को लगा आँचल से,
शायद दूध आ जाये ममता के बादल से,
दूध आता रहा, बेटा पीता रहा,
भूख मिटाता रहा, मुस्कराता रहा,
दोनों ने रब का शुक्रिया अदा करने,
आसमान पर नज़र डाली,
और बेटे को मिट्टी के ढेर पर छोड़ फिर से उठाई कुदाली,
अपना पसीना बहाने के लिए,
किसी और के बेटे के जीवन में खुशहाली लाने के लिए।

-09820156598

धर्म पहाड़ा

सीमा भण्डारी

2	×	1	=	2	राग-द्वेष
2	×	2	=	4	मोक्ष के साधन
2	×	3	=	6	काया
2	×	4	=	8	सिद्धों के आठ गुण
2	×	5	=	10	यति धर्म
2	×	6	=	12	निर्जरा के भेद
2	×	7	=	14	गुणस्थान
2	×	8	=	16	महासतियाँ
2	×	9	=	18	पाप स्थान
2	×	10	=	20	विहरमान
3	×	1	=	3	दण्ड
3	×	2	=	6	लेश्या
3	×	3	=	9	तत्त्व
3	×	4	=	12	अरिहन्त के गुण
3	×	5	=	15	कर्मादान
3	×	6	=	18	पाप स्थान
3	×	7	=	21	श्रावक के गुण
3	×	8	=	24	तीर्थङ्कर
3	×	9	=	27	साधु के गुण
3	×	10	=	30	महामोहनीय बन्ध के स्थान

-नागौरी गेट, जोधपुर (राज.) 7019159185

10 जनवरी 2020
जिनवाणी 92
ISSN 2249-2011

बाल-स्तम्भ

आपका क्या होगा?

श्रद्धेय मधुरव्याख्यानी श्री गौतममुनिजी म.सा.

बाल-स्तम्भ के अन्तर्गत प्रकाशित इस रचना को पढ़कर अन्त में दिए गए प्रश्नों के उत्तर 20 वर्ष की आयु तक के पाठक 15 फरवरी, 2020 तक जिनवाणी सम्पादकीय कार्यालय, ए-9, महावीर उद्यान पथ, बजाज नगर, जयपुर-302015 (राज.) के पते पर प्रेषित करें। उत्तर के साथ अपनी आयु तथा पूर्ण पते का भी उल्लेख करें। श्रेष्ठ उत्तरदाताओं को श्री महावीरचन्द जी बाफना, जोधपुर द्वारा अपनी धर्मपत्नी एवं श्रीमती अरुणा जी, श्री मनोजकुमार जी, श्री कमलेश कुमार जी बाफना की माताश्री स्व. श्रीमती मोहिनीदेवी जी बाफना की पुण्य-स्मृति में पुरस्कृत किया जा रहा है। पुरस्कारों की राशि इस प्रकार है- प्रथम पुरस्कार-500 रुपये, द्वितीय पुरस्कार-300 रुपये, तृतीय पुरस्कार-200 रुपये तथा 150 रुपये के पाँच सान्त्वना पुरस्कार। पुरस्कार राशि सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल,जयपुर द्वारा भिजवाई जाती है।

राजमहल में दासी का काम करते उसे वर्षों बीत गए। इन दिनों उसका काम था, राजा के लिए शय्या तैयार करना। हमेशा की तरह उस दिन भी वह दासी राजा की शय्या तैयार करने में लगी थी। बड़ी सुकोमल शय्या। गुदगुदे, मखमली गद्दे। उस पर खिनखाब की नरम-नरम कोमल चद्दर। गर्मी के दिन थे अतः आदेश-निर्देश के अनुसार उसने शय्या पर टोकरी भरे गुलाब के फूलों की एक-एक पंखुड़ी निकालकर उन पंखुड़ियों को इस तरह बिछाया कि जैसे पूरी शय्या पर गुलाब की पंखुड़ियों का गद्दा नज़र आये।

शय्या सजाकर उसने बहुत ही हसरत भरी निगाह से उस शय्या को देखा। उस पर कई बार अपना हाथ ऊपर से नीचे तक फिराया। अचानक मन में एक विचार आया-"अभी तो मालिक के आने में बहुत समय है। क्यों न मैं कुछ देर के लिए इस सुकोमल, गुदगुदे बिछावन पर लेट कर आनन्द का अनुभव करूँ, जिसका हमारे मालिक सदैव आनन्द उठाया करते हैं।" मन यद्यपि कुछ-कुछ भयभीत हो रहा था, पर साहस कर वह दासी उस शय्या पर लेट गई।

सोचा तो उसने यही था कि अभी कुछ देर में उठ जाऊँगी पर नींद पर किसी का क्या वश? उसे निद्रा देवी ने आ घेरा। आँखें मुँद गई और वह दासी वहीं सोती रह गई। जब राजा के सोने का समय हुआ तब वे अपने शयन-कक्ष की तरफ बढ़ गए। कक्ष में प्रवेश कर अपने समक्ष जो नज़ारा देखा तो उनका क्रोध सातवें आसमान को भी लाँघ गया। मेरे टुकड़ों पर पलने वाली इस नाचीज़ दासी की यह हिम्मत? मेरी शय्या पर सोने का दुस्साहस? दासी को सजा देने के विचार से राजा ने ताली बजाई। बाहर खड़ा सेवक तुरन्त सेवा में उपस्थित हुआ। राजा ने सेवक से कहा-"इस दासी को तुरन्त जगाओ और इसकी पीठ पर एक सौ कोड़े बरसाओ।"

उस दासी को सेवक ने आवाज़ देकर जगाया। दासी जगी। आँखें खोलकर सामने देखा तो सिट्टी-पिट्टी गुम हो गई। राजा साहब आग-बबूला हो रहे थे और सेवक बाहर से चमड़े का हण्टर ले आया था। दासी तुरन्त शय्या से नीचे उतरी और अपने अपराध के लिए राजा से माफी माँगने लगी। उसने कहा-"मालिक! माफ करें। शय्या सजाते हुए विचार आया, कैसी सुकोमल शय्या है। जरा देर सोकर देखूँ। सोई तो नींद आ गई। आगे से कभी ऐसी भूल नहीं करूँगी। इस बार मेरा अपराध क्षमा कर दीजिए।"

राजा ने उसे माफ नहीं किया बल्कि सेवक को कोड़े लगाने का संकेत किया। सेवक कोड़े लगाने लगा और दासी अपनी पीठ पर उस चमड़े से बने हण्टर की मार खाने लगी। अचानक दासी जोर-जोर से हँसने लगी। कोड़े पड़ रहे थे और दासी हँस रही थी। राजा ने देखा तो वह अचकचा गया। पीठ पर कोड़े खाकर अनेक अपराधी चिल्लाते हैं, रोते-बिलबिलाते हैं,

हाय-तौबा मचाते हैं, पर यह दासी हँस रही है। राजा ने संकेत कर सेवक को रोका। कोड़े पड़ने बन्द हो गये। अब राजा ने दासी से कहा-''इस हण्टर की मार खाकर बड़े-बड़े खूँखार अपराधी भी चीखने चिल्लाने लगते हैं और तुम हँस रही हो। यह तो अजीब बात है। बताओ, तुम्हें हँसी क्यों आई?''

दासी ने हाथ जोड़कर निवेदन किया-''मालिक! मैं सोच रही थी कि जरा-सी देर इस शय्या पर नींद लेने की ऐसी सजा मुझे मिली है, फिर आप तो हमेशा इसी शय्या पर सोते हैं, आपका क्या हाल होगा? क्या ईश्वर आपको भी भयानक कोड़े की सजा देगा?''

राजा सुनकर विचार में पड़ गया। दासी ने जो कुछ कहा उसमें सत्य कितना है, यह बाद की बात है, पर तथ्य की बात तो यह है ही। राजा ने उसकी सज़ा माफ कर दी।

प्र. 1 राजा को क्रोध क्यों आया?

प्र. 2 कोड़े पड़ते समय दासी द्वारा हँसने के पीछे क्या कारण था?

प्र. 3 यदि राजा के स्थान पर आप होते तो क्या करते?

प्र. 4 प्रस्तुत कहानी हमें क्या सन्देश देती है?

प्र. 5 शय्या, दासी, अपराधी, मालिक शब्द के तीन-तीन पर्यायवाची शब्द लिखिए।

प्र. 6 'आपका क्या होगा?' शीर्षक की सार्थकता स्पष्ट कीजिए।

-संकलनकर्ता : श्री पुखराज मोहनोत, 10/567, चौ.हा.बोर्ड, जोधपुर (राज.)

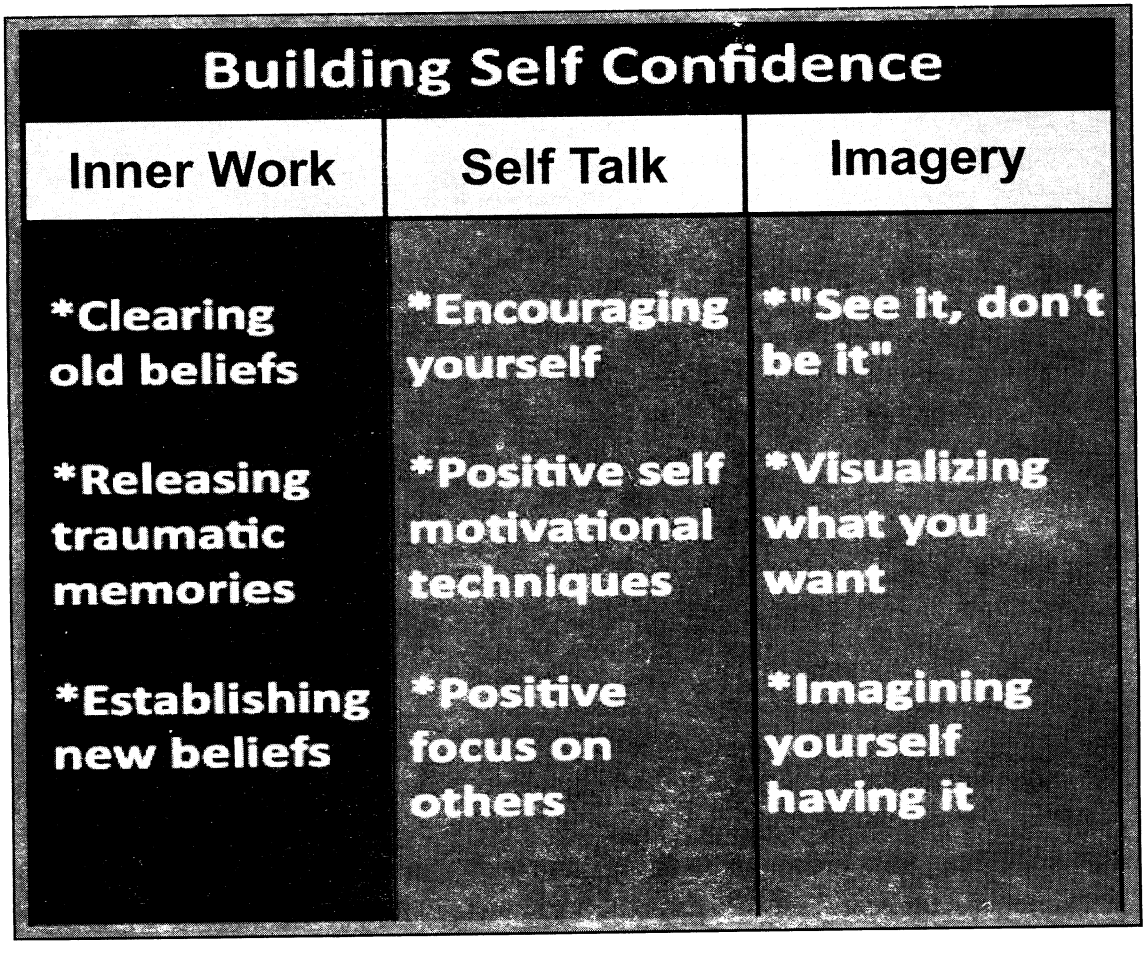

बाल-स्तम्भ [नवम्बर-2019] का परिणाम

जिनवाणी के नवम्बर-2019 के अंक में बाल-स्तम्भ के अन्तर्गत 'पत्थर की मनोकामना' के प्रश्नों के उत्तर जिन बालक-बालिकाओं से प्राप्त हुए, वे धन्यवाद के पात्र हैं। पूर्णांक 25 हैं।

पुरस्कार एवं राशि नाम		अंक
प्रथम पुरस्कार-500/-	अनिकेत जैन-आलनपुर, सवाईमाधोपुर (राजस्थान)	24
द्वितीय पुरस्कार-300/-	अदिति प्रवीण बाँठिया-नागपुर (महाराष्ट्र)	23
तृतीय पुरस्कार- 200/-	आयुषी आहूजा-जयपुर (राजस्थान)	22.5
सान्त्वना पुरस्कार- 150/-	आर्यन जैन-डबरेला, अजमेर (राजस्थान)	22
	भूमि सिंघवी-जोधपुर (राजस्थान)	22
	रोहन किरण अलिझाड़-भुसावल (महाराष्ट्र)	21.5
	जिनेन्द्र पारख-धनारीकलाँ, जोधपुर (राजस्थान)	21.5
	आरची जैन-सिंगोली (मध्यप्रदेश)	21

दिसम्बर, 2019 अंक से प्रश्न

प्र. 1. व्रत महाव्रत से किस प्रकार भिन्न है?
प्र. 2. खाना खाते समय हमें किन-किन बातों का ध्यान रखना चाहिए?
प्र. 3. सत्संग की नौका में बैठकर कैसे संसार सागर से पार जाया जा सकता है?
प्र. 4. महापुरुषों का हमारे जीवन में क्या योगदान होता है?
प्र. 5. 'जिनवाणी' का अर्थ स्पष्ट करते हुए महत्त्व प्रतिपादित कीजिए।
प्र. 6. According to Jainism describe the journey of the soul?
प्र. 7. श्रावक का वचन व्यवहार उसके जीवन को कैसे प्रभावित करता है?
प्र. 8. परिग्रह, स्वाध्याय, अहिंसा, सज्जन शब्दों में प्रयुक्त उपसर्ग एवं मूल शब्द अलग कीजिए।
प्र. 9. What is life?
प्र. 10. 'ब्रह्मचर्य महाव्रत' पर अनुच्छेद लिखिए।

बाल-जिनवाणी [अक्टूबर-2019] का परिणाम

जिनवाणी के अक्टूबर-2019 के अंक की बाल-जिनवाणी पर आधृत प्रश्नों के उत्तरदाता बालक-बालिकाओं का परिणाम इस प्रकार है। पूर्णांक 40 हैं।

पुरस्कार एवं राशि नाम		अंक
प्रथम पुरस्कार-600/-	सुश्री प्रियंका जैन-अजमेर (राजस्थान)	38.5
द्वितीय पुरस्कार-400/-	कविश जैन-चौथ का बरवाड़ा (राजस्थान)	37.5
तृतीय पुरस्कार- 300/-	प्रणव भण्डारी-जोधपुर (राजस्थान)	37
सान्त्वना पुरस्कार (3)- 200/-	निकिता जैन-मसूदा, अजमेर (राजस्थान)	36.5
	ममता आर. छाजेड़-भुसावल (महाराष्ट्र)	36
	अरिष्ठ कोठारी-अजमेर (राजस्थान)	36

बाल पाठक ध्यान दें

प्रतियोगिताओं में स्थान प्राप्त करने वालों को पुरस्कार राशि अब उनके बैंक खाते में भेजी जाएगी। जिन बच्चों का बैंक खाता नहीं है, वे अपने माता या पिता के बैंक खाता नं. भेज सकते हैं। अतः अब आप अपने उत्तर पत्रों में नाम व पते के साथ खाताधारक का नाम, खाता संख्या, आई.एफ.एस.सी. कोड जरूर लिखें।

-सम्पादक

सोचें जरा

सुश्री लक्ष्मी जैन

नई सदी से मिल रही, दर्द भरी सौगात।
बेटा कहता बाप से, तेरी क्या औकात।।

अर्थात् इस सदी में, इस पीढ़ी में ऐसे-ऐसे बेटे जन्मते हैं कि पिता की भी नहीं सुनते हैं। इसका कारण क्या?

माता गई फैशन में, पिता गये व्यसन में।
बच्चे गये ट्यूशन में, कौन जाए जिनशासन में।।

आज की माताओं को होश तो है, लेकिन अपनी फैशन का। आज यह साड़ी पहनूँ, कल वो साड़ी पहनूँ। लेटेस्ट साड़ी पर नज़र रहती है। किन्तु माताओं को यह सोच ही नहीं कि- ''मेरे बेटे-बेटी क्या कर रहे हैं, कहाँ जा रहे हैं, किसी गलत संगति में तो नहीं पड़ गये।''

पिता को तो अपने व्यापार से फुर्सत ही नहीं। वे यह नहीं सोचते कि बेटे-बेटी हाथ से निकल गये तो इसका परिणाम कितना बुरा होगा, कुछ भी हो सकता है। जिस पिता को अपनी प्रतिष्ठा की चिन्ता दिन-रात लगी रहती है, उस पिता की प्रतिष्ठा एक मिनट में बिखर सकती है, सोचा है आपने?

-रेलवे स्टेशन के पास, सोसायटी बैंक के सामने, चौथ का बरवाड़ा, जिला-सवाईमाधोपुर (राज.)

जयगुरु हस्ती जयगुरु हीरा जयगुरु मान

मोक्ष मार्ग का भाता

स्वयं के लिए चाहोगे साता,
खोलोगे दुःख का खाता,
अन्य के लिए चाहोगे साता,
पाओगे मोक्षमार्ग का भाता।

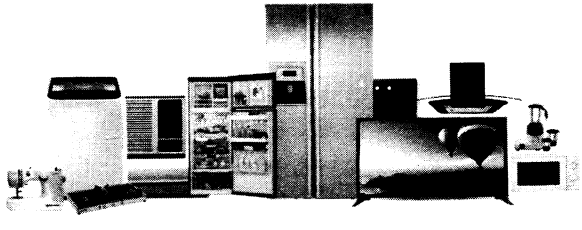

VIRaaT The Digital Hub
Electronics Retail Chain Store

& POOJA MARKETING
Wholesaler of Electronics Home Appliances.

OUR BRANCHES

HOSHANGABAD ROAD
Surendra Land Mark, Block B, Bhopal

KOH-E-FIZA
A-9, Main Road, Bhopal

SEHORE
163, Khajanchi Line

Tel No. 0755-429901 Mob : 9826024431, 9039911108

घेवर चन्द प्रेम चन्द नाहर
एवं समस्त नाहर परिवार भोपाल

अहंकार के वृक्ष पर
विनाश के फल लगतें हैं।

ओसवाल मेट्रीमोनी बायोडाटा बैंक

जैन परिवारों के लिये एक शीर्ष वैवाहिक बायोडाटा बैंक

विवाहोत्सुक युवा/युवती
तथा पुनर्विवाह उत्सुक उम्मीद्वारों की
एवं उनके परिवार की पूरी जानकारी
यहाँ उपलब्ध है।

ओसवाल मित्र मंडल मेट्रीमोनियल सेंटर

४७, रत्नज्योत इंडस्ट्रियल इस्टेट, पहला माला,
इरला गांवठण, इरला लेन, विलेपार्ले (प.), मुंबई - ४०० ०५६.

फोन : **022 2628 7187**

ई-मेल : **oswalmatrimony@gmail.com**

सुबह १०.३० से सायं ४.०० बजे तक प्रतिदिन (बुधवार और बैंक छुट्टियों के दिन सेंटर बंद है)

जय गुरु हस्ती ||GURUDEV|| जय गुरु हीरा-मान

गुरु हस्ती के दो फरमान
सामायिक स्वाध्याय महान

गुरु हीरा का यह सन्देश
व्यसन मुक्त हो देश विदेश

UDAY GROUP

UDAY INDUSTRIES CHENNAI PVT. LTD.
IMPORT & EXPORT AND DEALERS OF IRON & STEEL
LONG & FLAT PRODUCTS

UDAY CONSULTS LLP
OVERSEAS AND DOMESTIC MANPOWER RECRUITMENT
AND
FACILITY MANAGEMENT
CONNECTING BRIGHT TALENT WITH THE RIGHT COMPANY

STEEL | LOGISTICS | MANPOWER

WITH BEST COMPLIMENTS from:
G R SURANA & RAJESH SURANA
No.10&11, Jawaharlal Nehru Road,
Koyambedu, Chennai - 600 107.
Mobile No: 9940566666, Contact No: 044-24797675
Website: www.udaygroup.net
Mail Id: industries@udaygroup.net

जयगुरु हस्ती जयगुरु हीरा जयगुरु मान

वीतराग देव, निर्ग्रन्थ गुरु एवं दयामय धर्म के प्रति श्रद्धा रखने वाले सभी स्वधर्मी है फिर चाहे वे गरीब हों या अमीर, उनकी सहायता करना धर्म की आराधना है।

- आचार्य हीरा

BAGHMAR TOWER
BAGHMAR MOTOR FINANCE
S. SAMPATRAJ FINANCIERS
S. RAJAN FINANCIERS

218, Ashoka Road, Lashkar Mohalla,
Mysore-570001 (Karanataka)

With Best Compliments from :

C. Sohanlal Budhmal Sampathraj Rajan
Abhishek, Rohith, Saurabh, Akhilesh,
Jiyansh Baghmar

Tel. : 821-4265431, 2446407 (O)
Mo. : 9845126407 (B), 9845580407 (S), 9845113334 (R)

Gurudev

Committed to Quality. Committed to You.

SURANA™
yes, the best TMT RE-BARS

CUSTOMER GUARANTEED SATISFACTION

DRI Plant

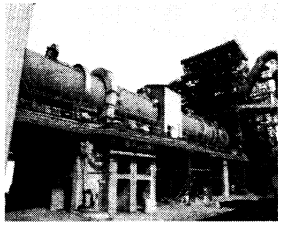

Electric Arc Furnace

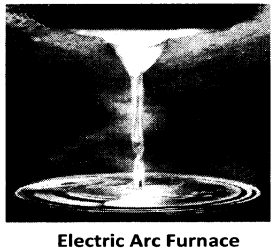

Billets

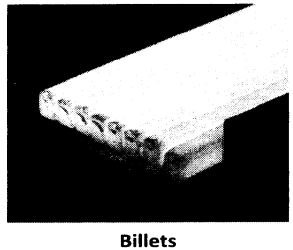

Rolling Mill

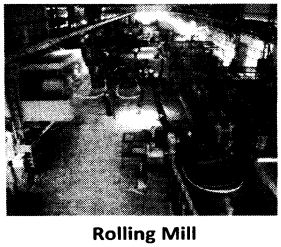

Captive Power Plant

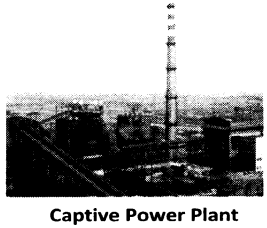

Windmill

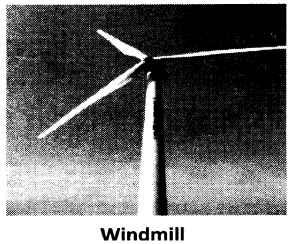

With best wishes from

BUREAU VERITAS 1828 UKAS QUALITY MANAGEMENT 008
ISO 9001-2008

SURANA INDUSTRIES LIMITED

INTEGRATED STEEL PLANT

MANUFACTURE OF TMT BARS AND ALL KIND OF ALLOY STEEL

29, Whites Road, II Floor, Royapettah, Chennai 600 014/ Ph : 044-28525127 (3 lines) 28525596. Fax: 044-28521143

Email: steelmktg@suranaind.com / www.surana.org.in

STEEL I POWER I MINING

।। श्री महावीराय नमः ।।

हस्ती-हीरा जय जय ! हीरा-मान जय जय !

छोटा सा नियम धोवन का।
लाभ बड़ा इसके पालन का।।

अखण्ड बाल ब्रह्मचारी चारित्र चूड़ामणि, भक्तों के भगवान् 1008
श्री हस्तीमल जी म.सा. के चरणों में हृदय की असीम आस्था से समर्पण
उनके अनमोल खजाने के हीरे-मोती जन-जन के तारणहार
पूज्य आचार्य प्रवर 1008 श्री हीराचन्द्र जी म.सा.,
पण्डित रत्न उपाध्याय प्रवर श्री मानचन्द्रजी म.सा.
एवं समस्त
रत्नाधिक साधु साध्वी मण्डल
के चरण कमलों में भावभरा कोटिशः वन्दन एवं समर्पण...

OUR HUMBLE SALUTATIONS TO THE MOST NOBLE SOULS

PRITHVIRAJ PREM KUMAR KAVAD
690, Trunk Road, Poonamallee, Chennai - 600 056
Ph. 044-26272196 Mob. : 93810-07273

MANGILAL HARISH KUMAR KAVAD
GURU HASTI THANGA MAALIGAI
(JEWELLERS & BANKERS)
5, Car Street, Poonamallee, Chennai-600 056
Ph. : 044-26272609 Mob. : 95-00-11-44-55

गजेन्द्र निधि

आचार्य हस्ती मेधावी छात्रवृत्ति योजना

उज्जवल भविष्य की ओर एक कदम......

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ

Acharya Hasti Meghavi Chatravritti Yojna Has Successfully Completed 13 Years And Contributed Scholarship To Nearly 4500 Students. Many Of The Students Have Become Graduates, Doctors, Software-Professionals, Engineers And Businessmen. We Look Forward To Your Valuable Contribution Towards This Noble Cause And Continue In Our Endeavour To Provide Education And Similar Spirituals Knowledge Towards A Better Future For The Students. Please Donate For This Noble Cause And Make This Scholarship Programme More Successful. **We Have Launched Membership Plans For Donors.**

We Have Launched Membership Plans For Donors

MEMBERSHIP PLAN (ONE YEAR)

SILVER MEMBER	GOLD MEMBER	PLATINUM MEMBER
RS.50000	RS.75000	RS.100000

DIAMOND MEMBER	KOHINOOR MEMBER
RS.200000	RS.500000

Note - Your Name Will Be Published In Jinwani Every Month For One Year.

The Fund Acknowledges Donation From Rs.3000/- Onwards. For Scholarship Fund Details Please Contact M.Harish Kavad, Chennai (+91 95001 14455)

The Bank A/c Details is as follows - Bank Name & Address - AXIS BANK Anna Salai, Chennai (TN)

A/c Name- Gajendra Nidhi Acharya Hasti Scholarship Fund   **IFSC Code** - UTIB0000168

A/c No. 168010100120722   **PAN No.** - AAATG1995J

Note- Donation to Gajendra Nidhi are exempted u/s 80G of Income Tax Act 1961.

छात्रवृत्ति योजना में सदस्यता अभियान के सदस्य बनकर योजना की निरन्तरता को बनायें रखने में अपना अमूल्य योगदान कर पुण्यार्जन किया,ऐसे संघनिष्ठ,श्रेष्ठीवर्यों एवं अर्थ सहयोग एकत्रित करने करने वालों के नाम की सूची –

KOHINOOR MEMBER (RS.500000)

श्रीमान् मोफतराज सा मुणोत, मुम्बई।
श्रीमान् राजीव सा नीता जी डागा, ह्यूस्टन।
युवारत्न श्री हरीश सा कवाड़, चैन्नई।

SILVER MEMBER (RS.50000)

श्रीमान् गुप्त सहयोगी, चैन्नई।
श्रीमान् गुप्त सहयोगी, चैन्नई।
श्रीमति गुप्त सहयोगी, चैन्नई।
श्रीमान महावीर सोहनलालजी बोथरा,जलगांव (भोपालगढ़)
श्रीमान सोहनराज जी बाघमार, कोयम्बटूर।

PLATINUM MEMBER (RS.100000)

श्रीमान् दूलीचंद बाघमार एण्ड संस,चैन्नई।
श्रीमान् दलीचंद सा सुरेश सा कवाड़, पूनामल्लई।
श्रीमान् राजेश सा विमल सा पवन सा बोहरा, चैन्नई।
श्रीमान् प्रेम सा कवाड़,चैन्नई।
श्रीमान् अम्बालाल सा बसंतीदेवी जी कर्नावट, चैन्नई।
श्रीमान् सम्पतराज सा राजकंवर जी भंडारी, ट्रिपलीकेन–चैन्नई।

सहयोग के लिए चैक या ड्राफ्ट कार्यालय के इस पते पर भेजें– **M.Harish Kavad** – No.5,Car Street,Poonamallee,**CHENNAI-56**

छात्रवृत्ति योजना से संबंधित जानकारी के लिए सम्पर्क करें– मनीष जैन, चैन्नई (+91 95430 68382)

‘छोटा सा चिन्तन परिग्रह को हल्का करने का, लाभ बड़ा गुरु भाइयों को शिक्षा में सहयोग करने का’

Jai Guru Heera *Jai Guru Hasti* *Jai Guru Maan*

।। जैनं जयति शासनम्।।

With Best Compliments from:

Dharamchand Paraschand Exports

Paras Chand Hirawat

CC 3011-3012, Bandra Kurla Complex, Bandra (E), Mumbai-400 098 (MH)

Tel. : +91 22 4018 5000

Email : dpe90@hotmail.com

KANTILAL SHANTILAL RAJENDRA LUNKER

PACHPADRA-PALI-ERODE

Dhruvi Mill India

'Sanskar', 177-B, Adarsh Nagar, Pali-306401 (Raj.)

Mobile : 094141-22757

135, N.M.S. Compound, ERODE-638001 (T.N.)

Tel. : 3205500 (O), Mobile : 093600-25001

Basant Jain & Associates, C.A.

BKJ & Associates, C.A.

BKJ Consulting Pvt. Ltd.,

Megha Properties Pvt. Ltd.

Ambition Properties Pvt.Ltd.

बसंत के जैन

अध्यक्षः श्री जैन रत्न युवक परिषद, मुम्बई

ट्रस्टी : गजेन्द्र निधि ट्रस्ट

601, Dalamal Chambers, New Marine Lines, Mumbai - 400020 (MH)

Ph. : 022-22018793, 22018794 (o), 022-28810702

NARENDRA HIRAWAT & CO.

Launches

N.H. Studios ***N.H. Jewells***

A-1502, Floor-15th, Plot-FP616(PT), Naman Midtown, Senapati Bapat Marg, Near Indiabulls, Elphinstone (W), Mumbai-400013 (MH)

Web. www.nhstudioz.tv, Tel. : 022-24370713

JVS
PURITY

JVS Foods Pvt. Ltd.

Manufacturer of :

NUTRITION FOODS
BREAKFAST CEREALS
FORTIFIED RICE KERNELS
WHOLE & BLENDED SPICES
VITAMIN AND MINERAL PREMIXES

Special Foods for undernourished Children
Supplementary Nutrition Food for Mass Feeding Programmes

With Best Wishes :

JVS Foods Pvt. Ltd.

CERTIFIED ISO 22000 CERTIFIED

G-220, Sitapura Ind. Area,
Tonk Road, Jaipur-302022 (Raj.)
Tel.: 0141-2770294
Email-jvsfoods@yahoo.com
Website-www.jvsfoods.com
FSSAI LIC. No. 10012013000138

Food Safety System Certification 22000

KALPA-TARU

WELCOME TO A HOME THAT DOESN'T FORCE YOU TO CHOOSE. BUT, GIVES YOU EVERYTHING INSTEAD.

Life is all about choices. So, at the end of your long day, your home should give you everything, instead of making you choose. Kalpataru welcomes you to a home that simply gives you everything under the sun.

022 3064 3065

ARTIST'S IMPRESSION

Centrally located in Thane (W) | Sky park | Sky community | Lavish clubhouse | Swimming pools | Indoor squash court | Badminton courts

PROJECT
IMMENSA
THANE (W)
EVERYTHING UNDER THE SUN

TO BOOK 1, 2 & 3 BHK HOMES, CALL: +91 22 3064 3065

Site Address: Bayer Compound, Kolshet Road, Thane (W) - 400 601. | **Head Office**:101, Kalpataru Synergy, Opposite Grand Hyatt, Santacruz (E), Mumbai - 400 055. | Tel: +91 22 3064 5000 | Fax: +91 22 3064 3131 | **Email**: sales@kalpataru.com | **Website**: www.kalpataru.com

In association with HDFC PROPERTY FUND

This property is secured with Axis Trustee Services Ltd. and Housing Development Finance Corporation Limited. The No Objection Certificate/Permission would be provided, if required. All specifications, designs, facilities, dimensions, etc. are subject to the approval of the respective authorities and the developers reserve the right to change the specifications or features without any notice or obligation. Images are for representative purposes only. *Conditions apply.

If undelivered, Please return to

Samyaggyan Pracharak Mandal
Above Shop No. 182,
Bapu Bazar, Jaipur-302003 (Raj.)
Tel. : 0141-2575997

(आ. स. 6700)
श्री मन्त्री महोदय
श्री महावीर जैन आराधना केन्द्र, **कोबा–382007,**
जिला–गाँधीनगर (गुजरात)

जयपुर राजस्थान से मुद्रित एवं सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, शॉप नं. 182 के ऊपर, बापू बाजार, जयपुर-3 राजस्थान से प्रकाशित। सम्पादक-डॉ. धर्मचन्द जैन